Based on the University Syllabus.

MATRICULATION

HINDI COMPOSITION

PART II - MODEL ESSAYS.

BY

RAM LOCHAN SARAN,

Assistant Master, Govt H E School, Laheriasarai

AUTHOR OF MATRICULATION HINDI GRAMMAR, HINDI VYAKARANA-CHANDRODAYA, HINDI RACHANACHANDRODAYA, MIDDLE VYAKARANABODHA, UPPER VYAKARANABODHA, &c

ASSISTED BY

BABU BHUSAN SINHA & PANDIT JIVA NATH RAY,

Vyakarana & Kavyatirtha, Northbrook H E School, Laheriasarai

EDITED BY

PANDIT GIRINDRA MOHAN MISRA, M A., B L,

Kavyatirtha, Secretary, Hindi Pracharini Sabha,

Examiner, Calcutta University

प्रवेशिका हिन्दी रचना ।

विश्वविद्यालय की प्रचलित शिक्षाप्रणाली के अनुसार ।

दूसरा भाग – आदर्श निबन्धमाला ।

HINDI PUSTAK BHANDAR

Laheriasarai, Darbhanga

First Edition.

पहला भाग ॥≥) दूसरा भाग १=)

दोनों भाग एक साथ लेने से २)

Hindi Grammar Series.

Book I. *(Seventh Edition)*

Upper Vyakarana Bodha. =/2/=

(Approved by the Directors of Public Instruction, Punjab, U P, C.P and Bihar & Orissa.)

Book II. *(Fifth Edition)*

Middle Vyakarana Bodha. =/4/=

Approved by the Directors of Public Instruction, Punjab, C. P. and Bihar & Orissa.)

Book III *(Third Edition.)*

Pravesika Vyakarana Bodha. 1/=

(Intended for High Schools & Colleges)

Hindi Pustak Bhandar,

Laheriasarai.

Printed by B. L. Pawagi at the Hitchintak Press, Ramghat,
Benares City . 7547 a

रामः।

भूमिका।

हिन्दी साहित्य में प्रबन्ध रचना की पुस्तकों की कितनी कमी है यह सभी लोग जानते हैं। दो चार पुस्तकें जो अब तक लिखी भी गई हैं, सर्व साधारण के काम की नहीं। कारण कि, वयोवृद्ध बालक उनकी संस्कृत मिश्रित भाषा को भले ही समझ जायँ, किन्तु बिचारे बच्चे तो भाव समझना दूर रहा, भाषा ही के भार से दबजाते हैं। आज प॰ रामलोचन शरण जी ने आदर्श निबन्धमाला नामक ग्रंथ लिखकर हिन्दी साहित्य की बड़ी अपूर्व सेवा की है। इनकी भाषा सरल तथा मनोहारिणी है। लेख भूरिगम्भीर भावों से भरे हुए हैं। लेखों में विशेषता यह है कि उनके आधार पर अन्य लेख भी विद्यार्थी भलीभाँति लिख सकते है।१०१ लेख तो पूरे हैं और उतनेही अधूरे हैं–अर्थात् इनके विषयविभाग और संक्षिप्त विवरण दिये गये हैं। संक्षेपतः इतना कहना अन्यथा न होगा कि पण्डित जी के ये लेख लेखनकला के अत्युत्तम पथप्रदर्शक हैं। इन लेखों को पढ़कर पूर्ण आशा है कि छात्रों को परीक्षाओं और चरित्रसंगठन में पूरी सहायता मिलेगी।

पूज्य पण्डित जी को हिन्दी संसार भलीभाँति जानता है, क्योंकि इन्होंने अपने बहुमूल्य समय का प्रचुर भाग राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा करने में व्यतीत किया है। इनकी नाना पुस्तकों को पंजाब, मध्यप्रदेश, युक्तप्रदेश और बिहार के शिक्षाविभागों ने अपनाया है।

कन्हैयासिंह,

९ १२ २०. क्षत्रिय हाई स्कूल, आरा।

× श्री बाबू कन्हैयासिंह जी, बी॰ ए॰, उपर्युक्त हाई स्कूल के शिक्षक और हिन्दी के मार्मिक लेखक हैं।—प्रकाशक।

व्याकरण।

हिन्दी व्याकरण चन्द्रोदय	(तीसरीबार)	|||=)
प्रवेशिका व्याकरणबोध	(तीसरीबार)	|||=)
मिड्ल व्याकरणबोध	(पाँचवींबार)	|)
अपर व्याकरणबोध	(सातवींबार)	=)
हिन्दी व्याकरण चन्द्रिका	(दूसरीबार)	≡)

रचना।

हिन्दी रचना चन्द्रोदय	(पहला भाग)	|||≡)
” ”	(दूसरा भाग)	१=)
” ”	(एक साथ लेने से)	२)
प्रवेशिका हिन्दी रचना	(पहला भाग)	|||≡)
” ”	(दूसरा भाग)	१=)
” ”	(एक साथ लेने से)	२)
आदर्श निबन्धमाला	(२०२ लेख)	१=)

हिन्दी पुस्तकभण्डार,

लहेरियासराय।

विषयसूची ।

पथप्रदर्शन ।

पहला खण्ड—१०१ पूरे लेख ।

वर्णनात्मक लेख (Descriptive Essays).

चेतनपदार्थ (Animate subjects)—

उद्भिद् (Vegetables)—

अचेतन पदार्थ (Inanimate objects)—

२. विवरणात्मक लेख (Narrative Essays).

ऐतिहासिक और जीवनचरित्र—

भ्रमण वृत्तान्त और आकस्मिक घटाएँ—

आविष्कार और शिल्प इत्यादि—

विचारात्मक लेख (Reflective Essays).

गुण, इत्यादि (Abstract subjects, etc.)

विभेद और तुलना (Contrast & Comparison)—

प्रवाद और सूक्तियाँ (Proverbs & Quotations)—

समालोचनात्मक (Critical Essays)-

मिश्रित लेख (Miscellaneous Essays)—

दूसरा खण्ड—१०१ लेख ।

☞ प्रत्येक के विषयविभाग (Points) और संक्षिप्त विवरण ।

वर्णनात्मक लेख (Descriptive Essays.)

चेतनपदार्थ—

उद्भिद्—

अचेतनपदार्थ—

२. विवरणात्मक लेख (Narrative Essays).

ऐतिहासिक और जीवनचरित्र–

भ्रमण वृत्तान्त और आकस्मिक घटनाएँ—

३. विचारात्मक लेख (Reflective Essays).

गुण, तुलना, इत्यादि—

प्रवाद और सूक्तियाँ—

परीक्षापत्र (Examination Papers).

रामः ।

निबन्धरचना ।

पथप्रदर्शन (Introduction)

लेख—

किसी विषय पर अपने भावों को पूर्णरूप से क्रमानुसार लिपिबद्ध करना लेख कहलाता है । प्रबन्ध, निबन्ध इत्यादि लेख ही के नाम हैं ।

ध्यान देने योग्य बातें—

किसी लेख के लिखने में निम्न लिखित बातों पर विशेष ध्यान रक्खो—

१. भाषा—समूचे लेख में एक ही प्रकार की भाषाशैली हो ।

२. शब्द—सहज और मधुर शब्दों के रहते कठिन, अप्रचलित और विदेशी शब्दों का प्रयोग न होने पावे ।

३. अक्षर—अक्षर स्वच्छ और सुन्दर रहें ।

४. अशुद्धियां व्याकरण, तर्क और विवरण आदि की अशुद्धियां न रहने पावें ।

५. विराम—विराम के चिन्हों का उचित प्रयोग हो ।

६. अर्थ—लेख इस प्रकार लिखो कि पढ़ते ही अर्थ झलक आय और रोचक जान पड़े ।

७. आकार—लेख संक्षेप हो, परन्तु कोई बात छूटने न पावे ।

८. आडम्बर—अपना पाण्डित्य दिखाने के लिये भावों को

जटिल वाक्यों और शब्दों में लिखना तथा लम्बी चौड़ी भूमिका बांधना उचित नहीं।

९. अप्रासङ्गिक विषय-प्रसंग से बहक कर अनावश्यक, अश्लील और व्यर्थ बातों का लिखना उचित नहीं। पुनरुक्ति अर्थात् एक ही बात को घुमा फिरा कर कई बार लिखना, लम्बी चौड़ी भूमिका के साथ केवल एक कथा लिख कर लेख समाप्त करना इत्यादि बातों से बचना चाहिये।

१०. खण्डन-एक बात लिखकर फिर उसके विरुद्ध दूसरी बात लिखना उचित नहीं।

११. क्रम-लेख के जितने भाव हों, सब एक और उचित क्रम से रहें। ऊटपटांग मत लिखो, क्योंकि टोपी की शोभा सिर पर ही है और जूता पैर में ही अच्छा लगता है।

१२. अनुच्छेद-एक अनुच्छेद में विषय का एक ही भाव दो। यदि भाव बड़ा या गम्भीर हो तो उसे अधिक अनुच्छेदों में भी लिख सकते हैं।

१३. समय-लिखने के पहले खूब सोच कर भाव स्थिर करो। समय पर ध्यान रक्खो। यह न हो कि एक ही दो खण्डों के विस्तृत वर्णन करने में नियत समय लग जाय और शेष खण्ड छूट जायँ।

प्रणाली—

लेख लिखने की २ प्रणालियाँ है-वैज्ञानिक और साहित्यिक। पहली प्रणाली के अनुसार वर्णित विषय भिन्न भिन्न भागों में विभक्त होकर प्रत्येक भाग यथानियम और यथाक्रम से विवृत होता है। दूसरी के अनुसार वर्णित विषय की कितनी ही चुनी चुनी बातें नियम की कड़ाई न कर जिस के बाद जो लिखने से सुभीता हो, उस प्रकार इस कौशल से विवृत करे

कि उससे पाठक बिना कही सब बातें, अथवा अन्ततः विवृत विषय में जो कुछ जानने योग्य हो, उसे स्थूल रूप से हृदयंगम कर सके।(प० अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी द्वारा अनूदित शिक्षा से।)

विद्यार्थी को उचित है कि वह पहली प्रणाली के अनुसार लेखों को लिखे। दूसरी प्रणाली सिद्धहस्त लेखकों के लिये है, वे ही जहां से चाहें आरम्भ कर उत्तम लेख लिख सकते हैं। हाँ, अभ्यास करते करते जब बुद्धि परिपक्व हो जायगी तब विद्यार्थी भी लिख सकेंगे। हमने इस पुस्तक में जितने लेख दिये हैं, प्रायः सब पहली प्रणाली के अनुसार लिखे गये हैं। दो चार, साहित्यिक प्रणाली से लिखे लेख भी इसमें मिलेंगे, जो प्रसिद्ध विद्वानों के ग्रन्थों से लिये गये हैं।

विषयविभाग करते समय विद्यार्थियों को घबड़ाना उचित नहीं। थोड़ी देर शान्ति पूर्वक सोचने ही से राह दीख पड़ेगी। जो जो भाव (Points) मिलें, उन्हें क्रम से लिखलो और इस के पीछे लेख लिखना आरम्भ करो। प्रत्येक भावगत बातों को एक एक अनुच्छेद में लिख देने ही से 'लेख' हो जायगा।

लेखसौन्दर्य के साधन—

For a man to write well are required three necessaries. Let him read the best authors; observe the best speakers, and have much exercise of his own style. —Ben Johnson.

"जो अच्छा लेख लिखना चाहे उसे चाहिये कि अच्छे लेखकों की भिन्न भिन्न पुस्तकें पढ़कर भावों को सोचा करे, सुयोग्य वक्ताओं की वक्तृताओं को सुना करे और विचारपूर्वक लिखने का खूब ही अभ्यास डाले।"

प्रत्येक विद्यार्थी को उचित है कि ऊपर लिखे कथन पर ध्यान रक्खे। आशा है, चिन्तापूर्वक अभ्यास करते करते कुछ ही दिनों में अच्छे लेख लिखने केलिये कलम तैयार रहेगी।

लेखभेद—.

विषय के अनुसार प्रायः सभी लेख तीन प्रकार के होते है-वर्णनात्मक (Descriptive), विवरणात्मक (Narrative) और विचारात्मक (Reflective).

किसी सजीव या निर्जीव पदार्थ का वर्णन '.वर्णनात्मक' किसी ऐतिहासिक, पौराणिक या आकस्मिक घटना का वर्णन 'विवरणात्मक' और किसी गुण, धर्म, दोष या फलाफल इत्यादि का विचार 'विचारात्मक' लेख कहलाता है। विचारात्मक लेख में किसी देखी या सुनी हुई बात का वर्णन नहीं होता, इसमें केवल कल्पना और चिन्ता शक्ति से काम लिया जाता है।

वर्णनात्मक लेख से विवरणात्मक कठिन और विवरणात्मक से विचारात्मक कठिन है। इन तीनों की भाषा भी एक नहीं हो सकती। वर्णनात्मक की भाषा साधारण, विवरणात्मक की कुछ गम्भीर और विचारात्मक की सजीव होनी चाहिये।

विषयविभाग—

नीचे प्रत्येक प्रकार के लेख के मोटामोटी विभाग दिखाये जाते हैं। यह उन विद्यार्थियों केलिये पथप्रदर्शक होगा जो घबड़ाकर कह डालते हैं कि हमें सूझता ही नहीं, क्या लिखें! यदि इन विभागों पर ध्यान रखकर प्रत्येक पर कुछ कुछ लिख देंगे तो अवश्य एक छोटामोटा लेख हो जायगा।

नीचे प्रत्येक लेख के जो विभाग दिखायेगये हैं, वे लेखकों की इच्छा से घटाये बढ़ाये भी जासकते हैं और दो तीन

विभागों को केवल एक विभाग में भी रख सकते हैं।

(क) वर्णनात्मक लेख (Descriptive essays)—

प्राणी—श्रेणी, प्राप्तिस्थान, आकारप्रकार, स्वभाव, उपकार, विचित्रता, उपसंहार।

मनुष्य-परिचय, प्राचीन इतिहास, वंशपरम्परा, भाषा और धर्म, सामाजिक जीवन, राजनैतिक अवस्था, स्वभाव, विशेषता।

उद्भिद्-परिचय, श्रेणी, स्वाभाविक जन्मस्थान, प्राप्तिस्थान, उपजाना, पौधे का स्वभाव, तैयार करना, व्यवहार, लाभ, उपसंहार।

स्थान-अवस्थिति, नामकरण, इतिहास, जलवायु, शिल्प, व्यापार, जाति, धर्म, दर्शनीयस्थान, उपसंहार—उत्थान और पतन, शासन।

वस्तु—उत्पत्ति, प्राकृतिक या कृत्रिम, प्राप्तिस्थान, किस अवस्था में पाई जाती है, कृत्रिम होने पर इतिहास, उपसंहार।

पहाड़—परिचय, पौधे, जीव, बन, गुफाएँ, नदियाँ, झीलें, देश, नगर, तीर्थ, पहाड़ी मनुष्य, उपकार, शोभा।

(ख) विवरणात्मक लेख (Narrative essays)—

ऐतिहासिक-घटना का समय, ऐतिहासिक लगाव, कारण, स्थान, वर्णन, फल, इष्टानिष्ट की समालोचना।

जीवनचरित्र—परिचय, जन्म, वंश, पितामाता, बचपन, विद्या, कार्यकाल, यश, नौकरी, व्यवसाय, देशहितकर कार्य, गुणदोष, मृत्यु, उपसंहार।

भ्रमणवृत्तान्त—परिचय, उद्देश्य, समय, आरम्भ, यात्रा, विवरण, अन्त, हानिलाभ, समालोचना, उपसंहार।

आकस्मिक—परिचय, तारीख, स्थान, कारण, विवरण, अंत, फल, समालोचना, उपसंहार।

नोट—उपाख्यान, कथा इत्यादि लिखने में विषयविभाग की आवश्यकता नहीं दीखपड़ती। हाँ, अन्त में शिक्षा (Moral) लिखीजाती है।

(ग) विचारात्मक लेख (Reflective essays)—

विषयविभाग—अर्थ, परिभाषा, भूमिका या परिचय। सार्वजनिक या

सामाजिक । स्वाभाविक या अभ्यासलभ्य । कारण । प्रकार । संचय । तुलना । दोष, गुण । फल । हानि लाभ । दृष्टान्त, प्रमाण । उपसंहार ।

नोट—ऊपर के विषयविभाग साधारणत पथप्रदर्शन केलिये हैं, परन्तु सभी विचारात्मक लेखों में भलीभाति नहीं लगते । अभ्यास से स्वय इस बात की सूझ होती जायगी । इस पुस्तक में जितने लेख दिये गये हैं, उन पर दृष्टि डालने से इसका पता आपही आप लगजायगा ।

लेख सिखानेवाले शिक्षकों से हमारी राय—

शिक्षकों को उचित है कि वे विद्यार्थियों को हताश न करें, धीरेधीरे साहस बढ़ाते हुए अभ्यास करावें । पहले वर्णनात्मक तब विवरणात्मक और सबसे अंतमें विचारात्मक लेख लिखावें । विषय दो एक दिन पहलेही निश्चत करदें । विषय पर विद्यार्थियों से भलीभांति बातचीत करें । आरम्भ ही से उत्तर पूर्ण वाक्यों में लियाकरें । बातचीत द्वारा बालकों ही से विषय विभाग निश्चित करावें । जब लड़के पूर्णरीति से समझजायँ तब लेख लिखलाने को कहें । लेखको शुद्ध कर अपना मन्तव्य मीठे मीठे शब्दों में प्रकाश कर दिया करें । यदि यह राय मानी गई तो देखेंगे कि उनके विद्यार्थी कुछ ही समय में अच्छे लेख लिखने लगजायँगे ।

निबन्धमाला।

वर्णनात्मकलेख (Descriptive Essays)

चेतनपदार्थ (Animate Subjects.)

गोजाति (Cow).

१ जाति। २ आकार। ३. निवासस्थान। ४ स्वभाव और गुण। ५. उपकार। ६ वर्त्तमान काल में गाय के साथ हमलोगों का वर्ताव—दुर्दशा—अवनति के कारण। ७ उपसंहार—उन्नति के उपाय।

१. संसार के स्तनपायी चतुष्पद जीवों में गोजाति प्रधान जीव है। गोजाति पागुर करती है और इसे मेरुदण्ड भी होता है।

२ गाय का शरीर गठीला, प्रायः २॥ से ५ हाथ तक लम्बा और २॥–३ हाथ ऊँचा होता है! देशभेद से इसके आकार में भी भेद पड़ता है। बंगाल की गाय छोटी और पश्चिम की बड़ी होती है। गाय की पूँछ और कान मच्छड़, मक्खी इत्यादि दंशक जीवों के आक्रमण को रोकते और सींगें इन्हें बड़े जीवों से बचाती हैं। इसके खुर फटे होते हैं जो इसे चिकनी और भींगी मिट्टी पर चलने में सहायता देते हैं।

३ गाय पालतू जीव है। यह सारे संसार में मिलती है, परन्तु हमारे देश में इस की अधिकता है। जंगली गाय कम मिलती है।

४. हमलोग कहा करते हैं, "तुम्हारी माता बड़ी गौ है।" क्यों? इससे जानपड़ता है कि गाय का सीधापन अत्यन्त प्रसिद्ध है। सचमुच, गाय किसी को हानि नहीं पचातीहुं। यह घास पात खाती है और दस महीने गर्भ धारण कर एक

बच्चा देती है । इसी समय से प्रायः आठ दस महीने दूध देती है । गाय से बैल का बल अधिक होता है और साँड़ तो सचमुच बलिष्ठ जीव है । यह जोरों में डँकरता है । इस जाति की आयु प्रायः २५ वर्ष है ।

५ गोजाति के समान, गृहस्थ, देश और समाज का उपकार करनेवाला और कोई जन्तु नहीं है । यह बात सही है कि यूरोप में कल के हलों से खेती करते है और अरब में ऊँट से खेती करने में सहायता मिलती है, परन्तु हमारा देश गोवंश ही पर अवलम्बित है । गाय का बेटा हमारा हल जोतता, बोझा ढोता और गाड़ी खींचता है । क्या जाड़ा, क्या गर्मी और क्या वर्षा-सभी ऋतुओं में अनेक कष्ट सहनकर हमारे कार्य चुपचाप किये ही जाता है ।

'हम ने तुम्हें मा की तरह है दूध पीने को दिया ।' सचमुच गाय हमारी माता है । अपनी मा तो कुछ ही दिनों तक दूध पिलाती है, परन्तु गौमाता हमें आजीवन दूध देती है । क्या बच्चे, क्या बूढ़े, क्या रोगी, क्या नीरोग-सभी इसके दूध से पुष्ट होते और बली बनते हैं । इसका दूध हमारे सभी स्वादिष्ट भोजनों का प्रधान उपादान है । इससे दही, घी, मक्खन और नाना प्रकार की मिठाइयाँ बनती हैं । हमारा कोई धार्मिक कार्य ऐसा नहीं जिसमें इसके घी का प्रयोग न होता हो । यह गाय के दूध ही का प्रभाव है कि हमारे पूर्वज ऋषि-मुनि अध्यात्मविद्या की पराकाष्ठातक पहुँचे थे ।

दूध तो दूध ही है, इसके मूत्र और गोबर के उपकार भी अवर्णनीय हैं । मूत्र कई रोगों की मुख्य औषधि है । गोबर स्वास्थ्य का परम हितकारक है । जो भूमि इस से पोत दी जाती है वहाँ अनेक रोगों की पहुँच नहीं होती । हिन्दू अपने सभी

शुभकार्य उसी भूमि में करते हैं जो गोबर से लीप दीजाती है। गाय का मलमूत्र खेत में पटाने से उसकी उर्वराशक्ति बढ़ती है। गोबर से गोयठा बनाते हैं, जो जलावन के काम में आता है। वैद्य कहते हैं कि जहाँ गाय रहती है वहाँ की वायु में कई रोगों के बीज नहीं रहने पाते।

ऊपर जितने उपकार लिखे हैं वे तो गाय की जीवित अवस्था के है,परन्तु वह मरने पर भी लाभ पहुँचाती है। जिन जूतों को पहन हम बाबू बने फिरते है वे गाय के चमड़े से बनते हैं। घोड़े की साज भी चमड़े से बनती है। इसके खुर से सरेस बनाते हैं। हड्डियों से बटम, बेंट, पाशे और भिन्न भिन्न खिलौने बनते हैं। हड्डियों का चूर्ण खेत की उपज को बढ़ादेता है।

विद्वानों की राय है कि मनुष्य के प्रयोजनीय जितने पदार्थ हैं, सबों में गोजाति की सहायता लेनी पड़ती है। यदि ईश्वर की रचना में यह जाति नहीं होती तो संसार की स्थिति किसी और ही ढंग की होती। भारत के कई परिवार केवल गोजाति को पालकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं। इनमें ग्वाला मुख्य है।

अब इस प्रश्न का उत्तर आप से आप समझ में आजायगा कि हिन्दू जाति 'गाय' को देवता क्यों समझती है। भला, जो इतने उपकार करे, जो माता की भाँति पालन करे वह देवता नहीं तो और क्या! हमलोग इसे 'भगवती' समझते हैं और सम्मान के साथ पूजा करते हैं। सभी जातियों की, किसी न किसी रूप में, इस पर श्रद्धा है।

६. ऐसे उपकारी जीव के साथ हमलोगों का वर्ताव उचित नहीं होता। हमलोग उसे भरपेट भोजन नहीं देते। उसे चरने के लिये कहीं परती भूमि नहीं दीख पड़ती। यथेष्ट उत्तम भोजन नहीं मिलने से धीरे धीरे उसकी अवनति होती

जा रही है। वह मृतकसी जान पड़ती है। इसका फल यह हो रहा है कि जो गाय १८ बच्चे तक देसकती है वह अब २-४ बच्चे ही देकर अपना जीवन समाप्त कर डालती है। यह २-४ बच्चे भी बहुत ही खिन्न और छोटे होने लगे हैं। साथ साथ दूध की भी बुरी गत हुई है। जो दस पंद्रह सेर दूध देने वाली है वह अब कठिनता से एक दो सेर दूध देती है। हम तो यहाँ तक कहते हैं कि इसी आहार की न्यूनता के कारण बहुत सी गायों से कई बकरियाँ अधिक दूध देती हैं।

भोजन तो कम मिलता ही है, साथ साथ गायों से कहीं कहीं हल और गाड़ी भी खिंचवाते हैं जिस से उनके बच्चे छोटे, दुर्बल और अल्पायु होते जारहे हैं। बच्चों के साथ हमलोगों की और निर्दयता झलकती है। हम सब दूध दुह लेते हैं और उनके लिये कुछ भी नहीं छोड़ते।

एक और बात है। हमलोग गायों को अच्छे स्थान में नहीं रखते। वह ऐसी जगह रक्खी जाती हैं जहाँ की भूमि भींगी रहती है और वहाँ वायु और प्रकाश की पहुँच भी नहीं होती। फल यह निकलता है कि वे रोगी होकर मरजाती हैं। इन्हीं उपर्युक्त कारणों से दिनों दिन इस जाति की अवनति होती जारही है।

७. 'पीछे हुआ सो होगया अब सामने देखो सभी।' जब यह बात सत्य है कि भारत की उन्नति गोजाति की उन्नति पर ही निर्भर है तब हमलोगों को उचित है कि गायों के चरन केलिये परती भूमि छोड़दें, उन्हें पेटभर भोजन दें, स्थान स्थान पर गोशालाएँ स्थापित करें, उन्हें अच्छी जगह में रक्खें, उन केलिये औषधालयों का समुचित प्रबंध करें और उन से अनुचित कार्य न लिये जायँ, इत्यादि। इन बातों पर यदि पूर्ण ध्यान रहा तो फिर भारत में कृषिकार्य भलीभाँति

सम्पादित होंगे, बल पौरुष का पूर्ण समावेश हो जायगा और दूध की नदियाँ बहने लगेंगी, और यदि इसमें प्रतिकूलता रही-

"तो अस्त समझो सूर्य भारतवर्ष के आकाश का ।
जो तनिक हरियाली रही वह भी न रहने पायगी,
यह स्वर्ण भारतभूमि बस मरघट मही बन जायगी ।"

—मैथिलीशरण गुप्त ।

घोड़ा (Horse).

१. जाति । २ आकार । ३. निवासस्थान । ४ स्वभाव और गुण । ५. उपकार । ६ उपसहार ।

१. घोड़ा स्तनपायी चतुष्पद जीव है । यह पागुर नहीं करता है और इसको मेरुदण्ड भी होता है । गाय बैल के समान यह भी उद्भिद् भोजी है ।

२ घोडा सुन्दर पशु है । जब यह किसी शब्द को सुनने केलिये दोनों कान इधर उधर करता है तब इसके उज्ज्वल नेत्र और उन्नत ग्रीवा देख मन को बड़ी प्रसन्नता होती है। ग्रीवा पर जो लम्बे लम्बे केश हैं उन्हें अयाल कहते हैं। इसकी लम्बी पीठ ऐसी चौडी और पुष्ट होती है कि उस पर सवार बड़ी सुगमता से बैठ सकता है । इसकी पूँछ भी बडी सुन्दर है, इसमें लम्बे बालों का एक गुच्छा भूमि तक लटका हुआ होता है । गायको केवल नीचे के जबड़े में दाँत होते हैं, परन्तु घोड़े को दोनों जबड़ों में।इसी प्रकार गाय के खुर फटे होते हैं, परन्तु घोड़े के नहीं । इसे सींगें भी नहीं होती । घोड़े के बालों के रंग लाल, उजला, काला, भूरा इत्यादि अनेक प्रकार के होते हैं । लम्बाई में यह गाय के बराबर होता है, परन्तु उँचाई उससे कुछ अधिक होती है ।

३. गाय के समान घोड़ा भी सारे संसार में पाया जाता

है । हिन्दुस्थान में अरबी, भुटिया और दरियाई या कच्छी घोड़े अच्छे समझे जाते हैं । देशभेद से इनके आकार, स्वभाव, गुण और रंग भिन्न भिन्न होते हैं । छोटे छोटे घोड़ों को टट्टू कहते हैं । भुटिया इसी श्रेणी में है ।

४ घोड़ा निरीह जीव है । यह भीरु स्वभाव का होता है और सहज ही में पोस मानता है । किसी आहट को सुनतेही या कोई अजीब पदार्थ देखते ही यह तुरंत सतर्क होजाता है । यह अत्यन्त बलवान्, बुद्धिमान् कष्टसहिष्णु और प्रभुभक्त पशु है । जब यह अपने स्वामी को देखता है, बोली सुनाकर अपना प्यार प्रकट करता है । यह खूब तेज़ दौड़कर सवार को विपत्तियों से बचा लेता है । यह दिन भर में ७० कोस से भी अधिक चलता है । कष्ट पाने पर भी यह अपने स्वामी से सद्व्यवहार रखता है । कष्ट सहते सहते जब यह उकता जाता है तब बिगड कर दांत काटता, लात चलता और सवार को गिरा देता है । घोड़े की दृष्टि और श्रवण शक्ति अत्यन्त प्रखर होती है । जिस राह से वह एक बार भी जाता है उसे कभी नहीं भूलता । यदि इसे शिक्षा दीजाय तो यह नाना प्रकार के कौशल कर दिखाता है । बाजे के ताल के साथ साथ यह नाच भी करता है । इसकी घ्राणशक्ति भी बड़ी तीव्र है. शिकार की मँहक पाते ही यह उसकी ओर चल पड़ता है । घोड़े को कदम, दुलकी, सरपट, जमैनी इत्यादि कई चालें सिखाईजाती हैं । घोड़ा तीन पैरों पर खड़ा होता है ।

बहुत से घोड़े केवल घासही खाकर अपने जीवन की रक्षा करते है । जिन घोडों से अधिक परिश्रम लिया जाता है उन्हें जई, चना और आटे की रोटी इत्यादि भी खिलाते हैं । घोड़ी १८ महीने गर्भ धारणकर एक बच्चा देती है । इसकी आयु ३०–४० वर्ष है ।

५. घोड़ों से हमलोगों के बड़े बड़े उपकार होते हैं। लड़ाई में घोड़े बड़े काम की चीज हैं। शत्रुओं पर एकबएक हमला करने में यह बड़े सहायक हैं। हमारेदेश में घोड़े जोडी, बग्गी खींचते और बोझा ढोते हैं, इंगलैंड में यह हल भी जोतते हैं। यदि कोई आवश्यक समाचार भेजना हो या शत्रुओं से प्राण बचाने हों तो ऐसे अवसरों पर घोड़े बडी भलाई करते हैं। 'घोडा चढ़ना' उत्तम व्यायाम है, इससे स्वास्थ्य अच्छा रहता है। जब घोड़े मरजाते है तब उनके चमड़े, हड्डी और खूर से हमारे कई कार्य सधते हैं। घोड़े से हानि बहुत कम होती है, हां कोई कोई घोड़े काटते और लात चलाते हैं।

६. भारतवासी अत्यन्त प्राचीन काल से घोड़े का व्यवहार जानते हैं। आर्यों के रथों में घोड़े जोते जाते थे। वे अश्वमेध यज्ञ करते थे। हमारी संस्कृत पुस्तकों में घोड़ों का विशेष वर्णन है। उनमें घोड़ों के गुणदोष और उनके रोगों की चिकित्सा भी भलीभाँति लिखी है। यदि घोड़े को पशुओं में वीर और क्षत्रिय की पदवी मिले तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

हाथी (Elephant).

१. जाति। २ प्राप्तिस्थान। ३ आकार। ४. स्वभाव। ५. हाथी पकडना। ६ उपकार-अपकार। ७. उपसहार।

१ स्थलपर रहनेवाले जितने स्तनपायी चतुष्पद जीव हैं, सबों में हाथी बड़ा और स्थूल चर्मधारी है। यह उद्भिद् भोजी है, मांस भक्षण कभी नहीं करता।

२. हाथी अफ्रिका तथा एशिया के अन्तर्गत भारतवर्ष, लंका, ब्रह्मा, श्याम, मलाया और सुमात्रा में पाये जाते हैं। हमारे देश में आसाम और उड़ीसे के जंगलों में बहुत हाथी मिलते हैं। देशभेद से ये भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं।

३. हाथी का शरीर बहुत विशाल होता है । यह प्रायः ५ हाथ से १०-१२ हाथतक ऊँचा होता है । इसके कान बहुत ही बड़े और सूपके समान होते हैं, परन्तु आकार के विचार से इसकी आँखें बहुत छोटी होती हैं । हाँ, अफ्रिका का हाथी कुछ बड़ी आँखोंवाला होता है । इसका चमड़ा प्रायः थोड़े से कड़े बालों के साथ मोटा और रुखड़ा होता है । हिन्दुस्थानी हाथी का रंग काला होता है, परन्तु श्याम और ब्रह्मा में उजले हाथी भी होते है ।

भगवान् ने हाथी को छोटी गरदन देकर इसकी पूर्ति लम्बी सूँढ़ से करदी है । यदि वह यह पूर्ति नहीं करते तो उसे बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ झेलनी पड़तीं । सूँढ़ उसके दो अंगों के कार्य करती है : सूँघना और साँस लेना नाक के कार्य और पानी खींचकर मुँह में रखना, भोजन उठाना, बोझा उठाना, पानी छींटना इत्यादि हाथ के कार्य सब सूँढ़ ही से पूर्ण होते हैं । हाथी के सिर में दोनों ओर दो मांसपिण्ड कलसे के समान दीखपडते हैं, इन्हें गजकुम्भ कहते है । "हाथी के दाँत दिखाने के और और खाने के और होते है ।" सूँढ़ की दोनों ओर दो दाँत होते हैं, वे दिखाने के हैं और मुँह के भीतर जो चिपटे दाँत होते हैं, वे चबाने के काम करते हैं । हथिनियों के दिखाने के दाँत नहीं होते या बहुत ही छोटे होते हैं ।

हाथी की पीठ ढालुआँ और रीढ़ कुछ निकली हुई होती है । इसकी लम्बी पूँछ थोड़े से बालों का एक गुच्छा लिये होती है, जिससे यह अपना शरीर झाड़ता है और कभी कभी किसी को मारता भी है । इसको खम्भे के समान मोटे चार पैर होते हैं । " हाथी के पाँव में सभी के पाँव आजाते हैं ।" जानपड़ता है कि इस कहावत की रचना हाथी के पैर की मुटाई के

कारण हुई है । इसके प्रत्येक पैर में प्रायः ५ खुर होते हैं।

४. हाथी है तो बहुत बड़ा जीव, परन्तु वह अतिशय शान्त और निरीह है । यह पोस भी मानता है, केवल अफ्रिका के हाथी कुछ देर लगाते हैं । जंगल में ये दल बाँधकर रहते हैं । एक दल में २०-२५ से लेकर १००-१५० तक हाथी देखेगये हैं । ये दिन में जंगल में किसी नदी वा झील इत्यादि के समीप पड़े रहते हैं और रात को दल बाँधकर आहार की खोज में निकलते हैं । प्रत्येक दल में बली हाथी मुखिया बनते हैं, वे बच्चों और हथिनियों को दल के बीच में रखकर सबों पर अपना प्रभुत्व रखते हैं। ये बड़, पाकड़, गूलर, पीपर और सीमर इत्यादि वृक्षों की कोमल शाखाएँ एवं केला, ऊख और कई प्रकार की घास खाते है । मनुष्य इन्हें महुआ, चावल. और रोटी इत्यादि भी खिलाते हैं । ये मांस कभी नहीं खाते ।

हाथियों को जलक्रीड़ा से बहुत प्रेम है । ये रात को और गर्मी से व्याकुल होकर दिन में भी, बड़े आनन्द से नहाया करते है । ये नदियों में खूब तैरते हैं । तैरने के समय केवल सूँढ़ दिखाई देती है । हाथियों को संगीत से भी प्रेम है, ये संगीत सुनकर आनन्दित हो जाते हैं ।

हाथी धीर, गम्भीर और सहनशील होते हैं । इन्हें बात बहुत दिनों तक याद रहती है । जब इन्हें क्रोध आता है, ये पागल की तरह लोगों को दाँतों और पैरों से मारडालते है । किसी किसी को मद भी चूता है, ऐसी अवस्था में वे पागल की तरह बहुत कुछ हानि करडालते हैं। हाथी बली भी खूब होते हैं, ये अपनी पीठ पर ३०-३० मन बोझ बिना दुःख अनुभव किये लेजाते हैं ।

हथिनी १८ महीने गर्भधारण कर एक बच्चा देती है, कभी कभी

२ बच्चे भी होते हैं। नवजात बच्चा सूअर से बड़ा नहीं होता। हाथी बहुत दिनों तक जीता है। २५-३० वर्ष में युवा होता है। कई हाथी १५० वर्ष तक जीते हैं।

५ हाथी पकड़ना साधारण काम नहीं। जो साहस करके पकड़ने जाते हैं वे अपनी जानको हथेली पर रक्खे रहते हैं। जंगल की जिस राह से हाथी का दल सदा जाताआता है उसमें कहीं कहीं गढ़े खोद दिये जाते है और उन्हें घास पात से ढाँप कर इस प्रकार बना देते हैं कि जान न पड़ें। गढ़ों के समीप पाली हुई हथिनी रखते या संगीत का प्रबंध करते हैं। हाथी लोभ में पड़ कर वहाँ आते हैं और गढों में गिर पड़ते हैं। कुछ दिनों तक वे उन्हींमें भूखों पड़े रहते हैं। पीछे वे मनुष्यों के वश में पड़कर पालतू हो जाते हैं।

६. हाथी से हमारे अनेक उपकार होते हैं। पूर्वकाल में हाथी युद्ध के कार्य करने थे, वीर इन पर बैठकर लड़ने थे। अभी भी ये भारी बोझा ढोते और खींचते हैं। ये जंगल भी साफ करते हैं। लोग हाथी पर चढ़ कर बाघ चीते इत्यादि का शिकार भी करते हैं। हाथी बारात की शोभा को बढ़ा देता है। जब यह हौदे और भूल से सजायाजाता है तब खूब सुहावना लगता है। गजदन्त बहुमूल्य वस्तु है, इस से तथा हड्डियों से बटम, बेंट, कंघी, चेन, चूड़ी, बाकस प्रतिमा और भिन्न भिन्न खिलौने इत्यादि कई पदार्थ बनते हैं। हाथी के मरने पर कुछ न कुछ लागत अवश्य निकल आती है। हमारे यहाँ हाथी का व्यापार अच्छा समझाजाता है। पालतु हाथी कोई हानि नहीं पहुँचाता। कभी कभी मदैला हाथी हानि कर बैठता है।

७. हमारे भारतवासी हाथी और इसके दाँत के व्यवहार

बहुत ही पुराने समय से जानते हैं। अभी भी मुर्शिदाबाद में हाथी के दाँतों से बहुत ही अच्छे अच्छे पदार्थ बनाये जाते हैं जिनसे हमारे प्राचीन शिल्प का पता चलता है। हाथी की बुद्धिमत्ता की बहुत सी कहानियाँ प्रसिद्ध हैं।

ऊँट (Camel).

१. जाति। २. आकार। ३ प्राप्तिस्थान। ४ स्वभाव। ५ उपकार। उपसंहार।

१ ऊँट चतुष्पद, स्तनपायी, शाकभोजी और पागुर करनेवाला पशु है। इसकी गिनती गोजाति में है।

२ ऊँट एक कुढगा जीव है। इसकी धन्वाकार पीठपर दो कूबड़, गरदन बड़ी लम्बी और टेढ़ी, होठ मोटा और फटा सा, नीचे का अधर पतला, आँखें और कान छोटे, टाँगें बहुत लम्बी, छोटी पूँछ में थोड़े से बाल, पाँव के नीचे गद्दीदार मांस का लोंदा और खुर फटे होते हैं। इसके शरीर का रंग पीलापन लिये मटियाला होता है। बैठने उठने से इसके घुटनों और छाती में घट्टे पड़जाते हैं। ऊँट पर चढ़ने में बड़ी असुविधा है। अरब के ऊँट को एकही कूबड़ होता है।

३. ऊँट का वासस्थान उष्ण मरुप्रदेश है। ऐसे प्रदेश को छोड़ अन्य भूभाग में यह धीरेधीरे वंशहीन हो जाता है। स्पेन और अमेरिकावाले कई बार अपने यहाँ ऊँट लेगये हैं, बड़े यत्न से पालापोसा है और उन्हें बच्चे भी हुए हैं, परन्तु कुछ ही वर्षों में वंशसहित नाश होगये हैं। अरब, फारस, तुर्किस्तान का दक्षिण भाग, हिन्दुस्थान का उत्तर पच्छिम भाग और अफ्रिका ऊँट का वासस्थान है।

४. जिस मरुभूमि में पशु पक्षी कीट पतंग नहीं दीखपड़ते जहाँ कोई जीव नहीं मिलता और कोई पौधा नहीं उगता

१. बिल्ली के समान कुत्ता भी चतुष्पद, स्तनपायी और मांसाहारी जीव है। यह अन्न तो खाता है, परन्तु शाक-भोजी नहीं।

२ कुत्ते सारे संसार में मिलते हैं।

३. देशभेद से कुत्ते भिन्न भिन्न आकार प्रकार के होते हैं, परन्तु सभी के पुष्ट और तीक्ष्ण दाँत, प्रायः लम्बे मुँह और गोलाकार सिकुडी हुई पूँछें होती हैं। किसी की पूँछ ठूँठ और किसी की झबड़ी भी होती है। पैर में गद्दीदार पंजे होते हैं। सब मिलाकर उन्हें १८ या २० नख होते हैं। कोई कोई कुत्ते ४ फीट ऊँचे होते हैं और कोई कोई बिल्ली की उँचाई के। ये उजले, काले, भूरे, नीले, चितकबरे इत्यादि कई रंगों के होते हैं। कई कुत्तों के झालरदार बाल होते हैं और कई को होते ही नहीं। मेषरक्षक, गृहरक्षक, शिकारी और ताज़ी इत्यादि कई प्रकार के कुत्ते होते हैं। विलायतवालों ने सेंट बर्नार्ड, ग्रेहहाउंड, बुलडौग, लैपडौग, स्पैनियल इत्यादि कुत्तों के भेद किये हैं।

४. संसार में जितने चतुष्पद जीव हैं, उनमें कुत्ता सब से अधिक बुद्धिमान् समझाजाता है। यह मनुष्य का बड़ा ही हितैषी है। यूरोपवाले इसे मानवबन्धु कहते हैं। जंगली कुत्ते बड़े भयंकर होते, झुण्ड बाँधकर रहते और समय पाकर बाघ से भी सामना कर बैठते हैं। पालने से कुत्ता बड़ा पोस मानता है और सब प्रकार से अपने स्वामी को प्रसन्न रखने की चेष्टा करता है। यह अपनी शक्ति, अपना साहस और अपनी बुद्धि सब को अपने स्वामी के हित में लगा डालता है। यह अपनी भक्ति पूँछ हिलाकर प्रकाश करता है। यदि इसे उचित शिक्षा दीजाय तो यह कई कार्य भलीभाँति कर

दिखाता है। यह अच्छे बुरे मनुष्यों को देखते ही पहचान-जाता है। कुत्ते की घ्राणशक्ति बड़ी तीव्र होती है। यह केवल राह सूँघकर शिकार के पीछे धावा करता और चोरों का पता लगा लेता है। कुत्ते की नींद बड़ी पतली होती है, थोड़ी सी आहट पर यह जगपड़ता है। ग्रीष्म ऋतु में यह गर्मी सहन नहीं कर सकता, इसलिये यह ठंढी जगह ढूँढ़ता फिरता है। कुत्ती ९ सप्ताह गर्भ धारण कर पाँच सात बच्चे पैदा करती है। इसकी आयु प्रायः १२ वर्ष है।

मांस कुत्ते का प्रधान भोजन है। इसकी जठराग्नि ऐसी प्रबल है कि हड्डी तक भी पचा डालता है। पालतू कुत्ते भात रोटी इत्यादि अन्य पदार्थ भी खाते हैं।

५ कुत्ता मनुष्य का विश्वासपात्र दास है। यह चोरों से घर की रखवाली करता, भेंड़बकरी चराता और शिकार में सहायता करता है। न्यूफाउडलैंड का कुत्ता तैर कर डूबते हुए मनुष्य को बचालेता है। सेंटबर्नार्ड नामक कुत्ता अल्प्स पहाड़ के पाले से ठिठुरे यात्रियों को बचाता और उन्हें गर्म भोजन पहुँचाता है। बहुत से शिक्षित कुत्ते लालटेन लेकर स्वामी के आगे आगे चलते और चिट्ठी पहुँचाते हैं। सारांश यह है कि कुत्ते सब प्रकार से अपने स्वामी की भलाई में लगे रहते हैं।

पागल कुत्तों के काटने से जलातङ्क रोग होजाता है। बहुत से मनुष्य उनके विषसे कुत्ते के समान भूँककर प्राण त्याग देते हैं।

६. भारतवर्ष में कुत्ते बहुत ही हीन समझे जाते हैं। ये मारे मारे फिरते हैं और जहाँ जो कुछ मिलगया उसीसे जीवन निर्वाह करते हैं। यदि इनकी ओर हमलोग ध्यान दें तो हमारी बड़ी भलाई हो सकती है।

सिंह (Lion)

१. जाति। २ आकार प्रकार। ३. वासस्थान। ४. स्वभाव, गुण और भोजन। ५. उपकार। ६. पोसना और पकड़ना। ७ उपसंहार।

१. सिंह बिल्ली जाति का शिकारी जीव है। यह चतुष्पद, मांसाहारी और स्तनपायी की श्रेणी में है। सिंह पशुओं का राजा समझा जाता है। इस को मृगराज, वनराज, मृगेन्द्र और पशुराज भी कहते हैं। इस से प्रबल और कोई पशु नहीं है।

२. सिंह भयङ्कर पशु है। इसके आकार से वीरत्व सूचित होता है। इसकी लम्बाई नाक से पूँछ तक ७-८ हाथ और उँचाई २-३ हाथ होती है। इसकी पूँछ २॥-३ हाथ लम्बी होती है। सिंह की गरदन और सिर पर काले, लम्बे और गुच्छेदार बाल होते हैं, जिन्हें केशर कहते हैं। सिंह के शरीर और केशर का रंग प्रायः पीला होता है। अफ्रिका में कोई कोई सिंह काले भी होते हैं। सारे शरीर पर छोटे छोटे कोमल और चिक्कन बाल होते हैं। पूँछ में बालों का एक गुच्छा होता है। सिंह के दाँत ऐसे लम्बे, तेज और नुकीले होते हैं कि वह बात की बात में शिकार को चीरफाड़ डालता है। इसके पंजों में छिपे हुए लम्बे और तेज नाखून होते हैं जो शिकार पर हमला करने के समय निकलपडते हैं। इसके गद्दीदार पाँव शिकार पकडने में सहायता देते हैं, क्योंकि उन से शब्द नहीं होता। इसके शारीरिक गठन की भयङ्करता, बड़े बड़े नेत्र, सुन्दर केशर तथा मुखमण्डल और मस्तक की विशालता से सारे जंगली पशुओं पर इसका प्रभुत्व सूचित होता है। सिंहनी सिंह से छोटी होती है, उसे केशर नहीं होते।

३. सिंह का वासस्थान ग्रीष्मप्रधान देश है। यह नाति-

शीतोष्ण देशों में भी मिलते हैं। प्राचीनकाल में अफ्रिका, अरब, फारस, भारतवर्ष और यूरोप के दक्षिणांश में बहुत सिंह मिलते थे, परन्तु अब दक्षिण अफ्रिका, फारस, गुजरात, गवालियर और नर्मदा के दक्षिण में थोड़े ही से मिलते हैं। देशभेद से ये भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं।

४. सिंह हिंसक और मांसाहारी जीव है। यह ऐसा बली होता है कि शिकार को कोसों टाँगकर लेभागता है और जहाँ इच्छा होती है मारडालता है। यह एक ही थप्पड़ में गाय, बैल इत्यादि की कमर तोड डालता है। सिंह ५-६ वर्ष में जवान हो जाता है। यह अकेला रहना पसंद करता है। यह मेघ के समान गरजता है, जिसको सुनते ही सभी जीव थर्रा जाते हैं। यह दिन को खोह या जंगल में छिपा रहता है और रात को शिकार की खोज में चलता है। यह रोगी, दुबले और छोटे जीवों को नहीं मारता। जब इसे भूख लगती है तभी शिकार करता और उसे मार मार कर खा लेता है। यह दूसरे का मारा हुआ जीव नहीं खाता। यह शिकार पर केवल एक बार धावा करता है, यदि शिकार पकड़ने में विफल हुआ तो फिर दोबारा चोट नहीं करता। सिंह को धूप पसंद नहीं, इसकी आँखें चौंधिया जाती है। लोग कहते हैं कि इसकी घ्राणशक्ति प्रबल नहीं है। सिंह केवल मांस खाता है, अन्य पदार्थ कभी नहीं खाता। जो एकबार भी मनुष्य का शिकार कर लेता है वह दूसरे शिकार का मांस खाना पसंद नहीं करता। सिंहनी सात आठ महीने गर्भ धारण कर २ से ४ तक बच्चे देती है और उन्हें प्रेम से पालती है। सिंह की आयु ७०-८० वर्ष है।

५. सिंह का चमड़ा आसनी का काम देता है। इसकी चर्बी

वातरोग की दवा है। आयुर्वेद में लिखा है कि सिंह का मांस अर्श और उदरामय की पीड़ा को नाश करता है। इसके नख भी दवा के काम में आते हैं। इन दिनों सर्कसवाले सिंह को सिखाकर अनेक खेल दिखाते हैं।

६. सिंह का पोसना ज़रा टेढ़ी खीर है। यदि बचपन में पकड़ाजाय तो यह पोस मानलेता है, परन्तु कभी कभी भयङ्कर रूप धारण करता और मालिक तक को मारडालता है। इसको पकड़ना भी आसान काम नहीं। यह कभी कभी जाल में फँसा लिया जाता है और कभी शिकार में मार डाला जाता है। शिकारी यह कार्य अपनी जान को जोखों में डालकर करता है।

७. हमारे यहाँ के कवि वीरों को सिंह की उपमा देते हैं। जो वीर और निडर होते है उन्हें पुरुषसिंह कहते हैं।

घड़ियाल (Crocodile गाह, मगर).

१ जाति। २ प्राप्तिस्थान। ३ आकार। ४ स्वभाव। ५ पकड़ना। ६ लाभहानि।

१. पानी में का घड़ियाल गिरगिट के समान सरीसृप जाति का अण्डज जीव है। यह पानी के किनारे कभी कभी ऊपर भी रहता है, इसलिये इसको कोई कोई उभयचर कहतेहैं।

२. घड़ियाल हमारे देश में गंगा, यमुना इत्यादि बड़ी नदियों में, समुद्र में और गंभीर जलवाली झीलों में रहते हैं। ये संसार के उष्णमण्डलवाले देशों में पायेजाते हैं। देश-भेद से ये भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं। हमारे यहाँ मच्छमगर और मानुषमगर प्रसिद्ध हैं।

३. बड़े से बड़ा घड़ियाल ३०-४० फीट लम्बा होता है।

हमारे यहाँ यह १५-२० फीट तक लम्बा देखाजाता है। इसकी पूँछ की लम्बाई प्रायः आधी होती है। इसका चमड़ा मटियाला, रुखड़ा और इतना कड़ा होता है कि उसमें बन्दूक की गोली नहीं घुसती। इसका मुँह बड़ा होता है। सिर लम्बा और आगे निकला हुआ होता है। इसकी आँखें सिर के ऊपर, नाक थुथने के ऊपर और कान आँखों के समीप केवल छेदमात्र होते हैं। इसके मुँह में मांस खाने के लिये बड़े और तीक्ष्ण दाँत होते है। झिल्लीदार पंजेवाले इसके चार कमजोर पैर होते हैं। अगले पैरों में चारचार और पिछले में पाँच पाँच अँगुलियाँ होती हैं। इसकी पूँछ में बड़े बड़े मजबूत काँटे होते हैं।

४ घड़ियाल बहुत तेज तैर सकता है, इसलिये यह मछलियों को सुगमता से पकड़कर खाता है। घड़ियाल मनुष्यों और दूसरे जीवों के लिये एक भारी शत्रु है। यह जलाशयों में किनारे किनारे घूमताफिरता रहता है और जीवों को पूँछ से झपट्टा मार पानी में घसीट कर लेजाता है। वहाँ उन्हें दाँतों से टुकड़े टुकड़े करके खाजाता है। यह भूमि पर चल कर आनन्द नहीं पाता। ग्रीष्मऋतु में यह कीचड़ या बालू में घुसकर पड़ा रहता है और वर्षा में निकल-पड़ता है। इसकी मादीन किनारे की मिट्टी या बालू में बिल बनाकर २५-३० अंडे देती है, जहाँ इन्हें धूप मिलती है। अंडे बत्तक के अंडों से बड़े होते हैं।

५. घड़ियाल मछली की भाँति बड़ी बड़ी वंशियों से फँसायाजाता है। कभी कभी इसे गढ़े खोदकर भी फँसाते हैं।

६. लोग कहते हैं कि इसकी चर्बी और दाँत दवाओं के काम में आते हैं। इससे हानि बहुतही अधिक होती है।

सहरस (Ostrich शुतुर्मुर्ग, ऊँटपक्षी).

१. श्रेणी । २. वासस्थान । ३ आकारप्रकार । ४. स्वभाव, गुण और भोजन । ५. शतुर्मुर्ग को पकडना । ६. लाभ ।

१. शुतुर्मुर्ग पक्षियों में सब से बड़ा और बली होता है । यह अंडज और शाकाहारी है, परन्तु मांस भी खाता है ।

२. शुतुर्मुर्ग हमलोगों के देश में नहीं होता । यह अफ्रिका और अरब की बलुआही मरुभूमि में, जहाँ अधिक गर्मी पडती है, होता है ।

३. शुतुर्मुर्ग हमलोगों की उँचाई के बराबर होता है, परन्तु जब वह अपना सिर उठाता है तब भूमि से ९-१० फीट ऊँचा पहुँचता है । इसकी गरदन लम्बी होती है, यही कारण है कि इसे ऊँटपक्षी भी कहते हैं । शरीर के विचार से इसके डैने बहुत ही छोटे होते हैं । इसके पैर बहुत ही बलिष्ठ होते हैं और प्रत्येक में २ अँगूठे भी रहते है । इसका शरीर सुन्दर परों से ढँका रहता है और इसे छोटी पूँछ होती है ।

४. शुतुर्मुर्ग खोता नहीं बनाता । यह बालू में माँद खोद लेता है । मादीन उसी माँद में १०-१२ अंडे देती है । अंडे बहुत बड़े होते हैं । कोई कोई वजन में डेढ़ सेर बताते हैं । जब तक अंडे तैयार नहीं होते, नर और मादीन दोनों पारापारी उन्हें सेते हैं । कभी कभी अंडे योंही धूप में छोड़ दिये जाते हैं । शुतुर्मुर्ग दौड़ने केलिये प्रसिद्ध है, यह दौड़ने में तेज़ घोड़े की बराबरी करता है । इसकी चाल टेढ़ीमेढ़ी होती है । यह उड़ नहीं सकता, डैने केवल देखने ही केलिये हैं । इसका बच्चा शीघ्र ही पोस मानलेता है । शुतुर्मुर्ग अन्न, फल और कीड़ेमकोड़े खाता है । यह पत्थर के टुकड़े निगल कर अपनी पाचनशक्ति को बढ़ाता है । यह बहुत दिनों तक

बिना पानी के जी सकता है ।

५. शुतुर्मुर्ग को घोड़े पर चढ़कर पकड़ते हैं । सवार उसे पीछा करता है, परन्तु शुतुर्मुर्ग की चाल टेढ़ीमेढ़ी होने के कारण पकड़ने में बड़ी दिक्कत होती है। घोड़े को घुमाकर जब तक उसको पीछा करना चाहता है, वह दूर निकल जाता है। सवार चक्कर लगाकर उसे हैरान कर डालता है। जब वह थक जाता है तब अपने मुँह को बालू में, यह समझकर छिपा लेता है कि मुझे कोई नहीं देख रहा है। इसी समय सवार उसे पकड़लेता है। कभी कभी शिकारी शुतुर्मुर्ग का चमड़ा ओढ़कर इसका शिकार करता है।

६ अरबवाले शुतुर्मुर्ग को पालते हैं, इसके अंडे खाते हैं और पंख अच्छे मोल पर बेचते हैं। वे अंडों के छिलके से प्याले और गहने बनाते हैं। घोड़े के समान शुतुर्मुर्ग अरब-वालों की उत्तम सवारी है।

साँप (Snake).

१ जाति । २. वासस्थान । ३ आकारप्रकार । ४. स्वभाव । ५. लाभहानि । ६. साँप काटने की दवा । ७. उपसंहार ।

१. साँप का दूसरा नाम विषधर है । यह जल और स्थल दोनों में रहता है। सरीसृप जाति में यह सब से प्रधान है ।

२ साँपों का वासस्थान ग्रीष्मप्रधान देश है । ये हिन्दुस्थान, अफ्रिका, आस्ट्रेलिया और मलाया टापू में पायेजाते हैं। ठंढे देश के साँप कम विषधर होते हैं। ये पुराने घरों, खंडहरों, बनों और पहाड़ों में रहते हैं। ढोंढ़ इत्यादि कई साँप पानी में भी रहते हैं।

३. साँप गाय की पूँछ के समान लम्बा और लचीला होता है। इसका चमड़ा कोमल और शीतल होता है। इसको

हाथ पैर नहीं होते। यह छाती के बल चलताफिरता है, इसीलिये इसको उरग भी कहते हैं। बहुतों का विश्वास है कि साँप को कान नहीं होते, यह आँखों ही से सुनाकरता है, जिससे यह चक्षु:श्रवा भी कहलाता है। इसकी जीभ बीच में फटी और सदा लपलपाती रहती है। इसकी आँखों पर पलकें नहीं होतीं। यदि कोई आँखों पर धूल डालदे तो यह घबड़ाजाता है। शरीर केंचुल से ढका रहता है, इसी के सहारे यह चलताफिरता है और वृक्षों पर चढ़जाता है। बिल में पैठने पर इसे खींच नहीं सकते, क्योंकि यह केंचुल खड़ा करदेता है। जब केंचुल पुराना होजाता है तब उसे साँप छोड़देता है। साँप को फन भी होती है। विषधर साँप को साधारण दाँतों के सिवाय ऊपर के जबड़े में दो खोखले विषैले दाँत होते हैं, विष की थैली उन्हीं दाँतों की जड़ में रहती है। काला, भूरा, उजला, हरा, लाल, चितकबरा इत्यादि कई रंगों के साँप होते है। करैत, गहुमन, नाग और अजगर इत्यादि विषैले और धामिन, हरहरा, ढोंढ़ इत्यादि विषरहित साँप हैं। अजगर का शरीर बहुत ही विशाल होता है।

४. साँप दुष्टप्रकृति का जीव है। जब यह क्रुद्ध होता है तब फन फैलाकर अपने शरीर के अगले तिहाई भाग को ऊपर उठालेता है। विषधर साँपों के काटते ही उनके विषैले खोखले दाँतों से विष घाव में प्रवेश करजाता है। साँप भीरुस्वभाव का होता है और मनुष्यों को देखकर छिपजाना चाहता है। साँप अपने रहने केलिये बिल नहीं बनाता, दूसरे जीवों के बिलों में वास करता है। साँप बहुत तेज दौड़ता है, परन्तु दाहिनी ओर घूमते हुए भलीभाँति नहीं दौड़ सकता। अतः, यदि कोई मनुष्य साँप के चपेटे में पड़जाय तो उसे दाहिनी

ओर घूम घूम कर भागना चाहिये । साँप बेंग, मछली, चूहे इत्यादि छोटे छोटे जीवों को निगलजाता है, परन्तु बड़ा, साँप भेंड, बकरी को भी निगलजाता है । अमेरिका में कुछ ऐसे साँप होते हैं जो मोटे मोटे वृक्षों के समान दीखपड़ते हैं और साँस से बहुतसे जीवों को खींचकर खाजाते हैं। साँप दूध लावा खाना पसंद करता है। धामिन साँप गाय, भैंस और स्त्री को छान कर दूध पीलेता है, परन्तु उन्हें काटता नहीं। शीतकाल में साँप केवल वायु पीकर रहजाता है । साँपिन बहुतसे अंडे देती है और सबों को फोड़ कर पीजाती है । जो अंडे बचजाते हैं उनसे साँप के बच्चे निकलते हैं। साँप की आयु प्रायः २४-२५ वर्ष है ।

५ यद्यपि साँप मनुष्य का काल है और इसके काटने से प्रतिवर्ष हजारों मनुष्य मरते हैं, तौभी उससे हमलोगों को कुछ लाभ भी है। साँप की चर्बी, केंचुल और विष से दवाएँ बनती है। मनियारे साँप के सिर पर मणि होती है, जिसका मोल अधिक होता है । मदारी साँपों को नचा नचा कर अपनी जीविका चलाता है ।

६. जिस अंग में साँप काट ले उसे तुरंत काटकर अलग करदेना उचित है। यदि काटने योग्य न हो तो घाव के ऊपर दो तीन जगह थोड़ी थोड़ी दूर पर रस्सी से कसकर बाँध देना चाहिये जिसमें विष ऊपर न चढ़ने पावे । घाव को चीरकर लहू बहा देने के बाद उसे जलते हुए लोहे से जला देना चाहिये । मंत्र और औषधि से विष उतरजाता है। यदि विष सारे शरीर में प्रवेश करजाय तो बचने की आशा नहीं रहती ।

७. नागपंचमी में हमारे यहाँ नाग की पूजा होती है।

पुराणों से पता चलता है कि पृथ्वी वासुकि सर्प के सिर पर है और विष्णु भगवान् शेषनाग पर सोते हैं। हमारे यहाँ साँप देवांश समझाजाता है।

मधुमक्खी (Bee).

१ जाति। २. वासस्थान। ३. रूप। ४. प्रकार, प्रत्येक के रूप और कार्य। ५ मोम, छाता और मधु। ६. अंडे और बच्चे। ७ स्वभाव और गुण। ८. मधु निकालना। ९ लाभ। १०. शिक्षा।

१. चींटी के समान मधुमक्खी भी बहुत ही छोटा कृमि-जातीय जीव है। यह अण्डे से पैदा होने के कारण अण्डज कहलाती है।

२. मधुमक्खियाँ सारे संसार में मिलती हैं, परन्तु वसंत ऋतु वाले देशों में बहुत ही अधिक होती हैं। स्पेन, इटली, इजिप्ट, रूस, जर्मनी और हिन्दुस्थान के लोग इन से अधिक परिचित हैं। ये दीवालों और वृक्ष की डालों पर छत्ते बनाकर रहती हैं।

३. मधुमक्खियाँ सुन्दर और सोनहुले रंग की होती है। शरीर पर इधर उधर काले दाग भी होते हैं। जातिभेद से कई बातों में भिन्नता है जो नीचे दीजाती है।

४. मधुमक्खियाँ तीन प्रकार की होती है—काम करने वाली मक्खी, मक्खा या आलसी मक्खी और रानी मक्खी।

(क) काम करनेवाली—ये मक्खियाँ देखने में कुछ कालापन लिये भूरी होती हैं। इनके शरीर पर चढ़े हुए खड़े केश होते हैं। शरीर तीन भागों में बँटा रहता है—सिर, छाती और पेट। सिर में दो सूँड़ें, दो आँखें और एक लम्बी जीभ होती है। छाती में नीचे की ओर तीन जोड़े पैर और ऊपर की ओर दो पतले पंख होते हैं। पेट और भागों से बड़ा

होता है । मधुमक्खी का सारा शरीर, जानपड़ता है कि कई जुटी हुई अँगूठियों का समूह है ।

ये मक्खियाँ दुबली और छोटी होती हैं । इनका काम है–मधु इकट्ठा करना, मोम बनाना, छाता तैयार करना, अंडों की ख़बरगीरी करना और बच्चों की सेवा करना । ये बहुत सबेरे उठकर खेतों और फुलवारियों में जाती हैं और मधु इकट्ठा करती हैं । एक छाते में प्राय. २० हजार काम करनेवाली मक्खियाँ होती हैं ।

(ख) मक्खे या आलसी मक्खियाँ—मक्खे काम करने-वाली मक्खियों से मोटेताजे होते हैं । इनकी आँखें सिर के लगभग बराबर होती हैं । इन्हें डंक नहीं होते । मक्खे रानी मक्खी के पतिस्वरूप हैं । ये बहुत आलसी होते हैं, कोई काम नहीं करते । एक छाने में प्रायः एक से दो हजार तक मक्खे होते हैं ।

(ग) रानी मक्खी—

रानी मक्खी का शरीर काम करनेवाली मक्खियों के शरीर से लम्बा होता है । इसके पंख छोटे होते हैं । यह केवल अंडे देती है । अंडा देने में इस प्रकार लगी रहती है कि अपने भोजन का भी ध्यान इसे नहीं रहता । काम करनेवाली मक्खियाँ इसे खिलादिया करती हैं और सदा इसकी इज्ज़त में लगी रहती हैं । रानी मक्खी जहाँ जहाँ जाती है और मक्खियाँ उसकी रक्षा में चारों ओर लगी रहती है । एक छाते में केवल एक ही रानी मक्खी होती है ।

५. काम करनेवाली मधुमक्खियों के शरीर के नीचे ६ छोटी छोटी, जेबों के समान थैलियाँ होती हैं । जब मधु-

मक्खियाँ छाता बनाना चाहती हैं तब उनमें से कुछ, माला के समान एक दूसरे के पैर पकड़कर लटकपड़ती हैं और कई घंटों तक उसी प्रकार लटकी रहती हैं। इसके पीछे उन थैलियों में मोम का पपड़ा जमजाता है। फिर इसी के सहारे मक्खियाँ छाता बनाने लगती हैं। ये अपने कल्लों से मोम के पपड़ों को पीसकर कीचड़ के समान बनादेती हैं। फिर बड़ी खबरगीरी से छकोनियाँ खोंढ़े बनाने में लगपड़ती हैं और सदा मूछों से टटोलतीरहती हैं कि जिसमें सब की मुटाई, क़द और शक्ल ठीक रहें।

खोंढ़े सब एक प्रकार के नहीं होते। इनमें कुछ काम करने वाली मधुमक्खियों के बच्चों केलिये, कुछ मधु रखने केलिये, कुछ मक्खों केलिये और कुछ अंडा पारने केलिये बनायेजाते हैं। मधुवाले खोंढ़े और खोंढ़ों से कहीं बड़े होते हैं।

अब मधु किस तरह बनायाजाता है-इसके विषय में भी विचारना चाहिये। मधुमक्खियाँ जिन जिन फूलों पर बैठती हैं, उनके रसों को अपनी रोएँदार जीभ से चाटलेती हैं। ये रस उनके पेट में नहीं जाते, बल्कि मधु की थैलियों में पहुँचजाते हैं, जहाँ कुछ दिनों तक यों ही पड़े रहते हैं। जब मधुमक्खियाँ छत्तों में भरने केलिये उन्हें उगलदेती हैं तब वे मधु के रूप में दीखपड़ते हैं।

६. ज्योंही वे खोंढ़े जिनमें बच्चे रहते हैं, बनजाते हैं, रानी मक्खी उनमें जाकर अंडे पार देती है। पहले यह खोंढ़ों को जाँचती है कि ठीक बने हैं या नहीं, तब अंडे पाड़ती है। अंडा पारने के कुछ ही दिन पीछे अंडों से कीड़े की नाईं बिना पैर की छोटी सफ़ेद चीज़ें बाहर निकलआती हैं। यह कीड़े

खोढ़ों का रक्खा हुआ चारा चुगने लगते हैं। प्रायः एक सप्ताह में इन कीडों के चमड़े कड़े हो जाते हैं और तब वे मक्खियों के बच्चे कहलाते हैं। आठ दस दिनों में प्रत्येक बच्चे की चमड़ी फूटजाती है और पूरी मधुमक्खी बनजाती है। मक्खा कुछ और देर में बनता है और रानी मक्खी बहुत जल्द बढ़ती है।

७. मधुमक्खियाँ परिश्रम में मग्न रहती हैं। ये क्षणमात्र भी बेकार नहीं बैठतीं। ये मिलकर काम करना जानती हैं और अपने शत्रु पर एक ही बार हमला करती हैं। 'छाता' देखने से इनकी कार्यकुशलता का पता लगता है। इनके रहनसहन, मिलनसारी और शासनकौशल देखकर हम-लोगों को अवाक् हो जाना पड़ता है। मधुमक्खियाँ बड़ी ही अग्रसोची और संयमी होती हैं। ये वसंत और ग्रीष्मकाल में कठिन परिश्रम से मधु एकत्र करती हैं और वर्षा तथा जाड़े में आनन्द से खाती हैं।

८. मधुमक्खियों के छातेसे मधु निकालना कठिन कार्य है। लोग अंधेली रात में लग्गी के सहारे छाते में आग लगाकर धूआँ करदेते हैं। बेचारी मक्खियाँ इधर उधर भागजाती हैं और लोग मोम तथा मधु को निकललेते हैं। लग्गी से छाते में छेद करके भी मधु चुलायाजाता है।

९ मध पुष्टिकर और मीठा पदार्थ है। यह कई औषधि-यों में पडता है। मधुमक्खियों से हमें मोम भी मिलता है। मधुमक्खियाँ एक फूल के पराग को दूसरे फूल में पहुँचाकर पौधों के वंश को बढ़ादेती हैं।

१०. हमलोगों को उचित है कि मधुमक्खियों से रहन-सहन, मिलनसारी, सिलसिला, शासनकौशल और परिश्रम

इत्यादि गुण सीखकर अपने मानवजीवन को सार्थक करें।

चींटी (Ant)

१. श्रेणी। २. वासस्थान। ३ आकार। ४ भेद और कार्य। ५ स्वभाव, माँद और भोजन। ६ उपकार और अपकार। ७ शिक्षा।

१. चींटी एक बहुत ही छोटा कृमिजातीय जीव है। यह अण्डे से पैदा होने के कारण अण्डज कहलाती है।

२. चींटियाँ सारे संसार में मिलती हैं। देशभेद से यह भिन्न भिन्न प्रकार की होती हैं। यह भीडों, ऊँची भूमि, दीवालों, गोयठों और पेड़ों में रहा करती हैं।

३ चींटी का शरीर तीन भागों में बँटा रहता है। इसका सिर कुछ टेढ़ापन लिये गोल, उसमें दो छोटी चमकीली आँखें और दो मजबूत जबड़े होते हैं। इसके ६ पैर होते हैं। यह छोटी बड़ी तथा लाल, काली, भूरी इत्यादि कई रंगों की होती है।

४. चींटियाँ झुण्ड बाँधकर रहती हैं। एक झुण्ड में रानी, कामकाजू, लड़ाकू, सुस्त, धाय और गुलाम इत्यादि कई प्रकार की चींटियाँ होती हैं।

रानी चींटियाँ अंडे देती हैं। इन अंडों से छोटे छोटे कीड़े निकलआते हैं। कीड़ों को धाय चींटियाँ पालती हैं, धूप में लेजाती हैं और सर्दी या बदली से रक्षा करती हैं। कुछ दिनों में ये इतने बड़े होजाते हैं कि अपने छिलके के भीतर नहीं रह सकते। छिलकों को फोड़कर बाहर निकलने में उन्हें बड़ी कठिनाई होती है। इस काम में बूढ़ी चींटियाँ सहायता करती हैं। छिलकों को फोड़कर धीरे से उनके पैरों को खोल देती हैं। तब ये कीड़े अपनी पूरी हालत पर पहुँचजाते हैं और चींटियों के नाम से पुकारेजाते हैं।

तुमको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि चींटियाँ भी गाय रखती हैं। जिस प्रकार हमलोग दूध दही केलिये गाय को पालते हैं उसी प्रकार चींटियाँ भी एक प्रकार के कीड़ों को पालती हैं, जो घासपात खाकर जीते हैं। इन कीड़ों के शरीर में मीठा रस रहता है। जब चींटियाँ रस को पीना चाहती हैं तब वे कीड़ों को ठोकडाकर और तमाचे मार कर मीठा रस पाती हैं।

जिस प्रकार हम लोग नौकर रखते हैं, उसी प्रकार चींटियों को भी गुलाम होते हैं। ये गुलाम चींटियों को खिलाते पिलाते तथा उनके बच्चों और खोंतों की रखवारी करते हैं। बहुतसी चींटियाँ गुलामों की पीठ पर चढ़कर हवा खाने निकलती हैं।

५ यदि सच पूछो तो चींटी से बढ़कर मेहनती कोई जीव नहीं। एक मनुष्य ने एक चींटी को गौर से देखकर यह लिखा है कि वह छ बजे सबेरे से पौनेदस बजे रात तक काम करती थी। चींटी की मेहनत की बराबरी में हमलोगों के यहाँ यह कहावत चलपड़ी है-" चींटी के घर मातम " इसका यह अर्थ है कि " चींटी के घर में सदा काम करने की धुन है "।

चींटियाँ अपने रहने केलिये भीड़ों में या ऊँची ज़मीन में खोंते बनाती हैं, जिन्हें टीलहा कहते हैं। टीलहों के भीतर छोटी छोटी कोठरियाँ तथा उनमें द्वार और राहें भी बनाती हैं। सभी कामों में इनकी चतुराई और सफाई देखीजाती है। किसी कोठरी में अंडे पारती हैं, किसी में भोजन रखती हैं और किसी में सोती हैं। इसी प्रकार एक एक काम केलिये एक एक कोठरी बनाती हैं। रात को जब सोनेलगती हैं तब

द्वार और राहों को खरपात से बन्द करदेती हैं। टीलहों पर रात दिन पहरा पड़ता है। जब कभी शत्रुओं के आक्रमण से टीलहे बिगड़जाते हैं तब शीघ्रही चींटियाँ लगपड़ती हैं और मरम्मत करडालती हैं।

भोर होते ही चींटियाँ जागकर बहुत ही शीघ्र अपने काम में लगजाती हैं। यदि कोई नहीं जागती है तो दूसरी चींटियाँ उसे जगा देती हैं, परन्तु जो बहुत सुस्ती करती है, उसे डंक खाना पड़ता है। चींटियाँ समय को कभी बरबाद नहीं करतीं। इन को आपस में बहुत मेल रहता है, ये मिलकर काम करती हैं। एक चींटी को जब किसी भोजन का पता लग जाता है तब वह औरों को खबर देदेती है और झुंड के झुंड आकर उसे लेजाती हैं। यदि कोई चींटी बीमार पड़जाती है तो और चींटियाँ उस की सेवा बड़े प्रेम से करती हैं। चींटियाँ मीठी चीज़ें खाया करती हैं। इनकी घ्राणशक्ति इतनी तेज होती है कि झट सूँघकर समझजाती हैं कि हमारा भोजन कहाँ मिलेगा। ये दूसरे कीड़ों को भी खाजाती हैं। ये अपना भोजन खुखार में जमा करती हैं और वर्षा तथा जाड़े में आनन्द से दिन काटती हैं।

६. चींटियाँ हमलोगों को बहुत लाभ पहुँचाती हैं। ये हानिकारक पदार्थों और बीमारी फैलानेवाले जीवों को नाश कर देती हैं। हाँ, हानि भी पहुँचाती हैं, प्रायः भोजन के पदार्थों को खाजाती और काठों को बिगाड़डालती हैं।

७. अध्यवसाय, परिश्रम, एकता, समय का समुचित उपयोग, भविष्यत् का ज्ञान, परस्पर दुःख सुख में सहानुभूति, परिमितव्ययिता और संचयी होना इत्यादि कई गुण हमलोग चींटियों से सीख सकते हैं।

"चींटी सहस होंहि इकसंगा। फाड़ि खाहिं मनिआर भुअंगा।"

अंगरेज़ (Englishman).

१. परिचय। २. प्राचीन इतिहास। ३ वंशपरम्परा, भाषा और धर्म। ४. सामाजिक जीवन। ५. राजनैतिक अवस्था। ६ स्वभाव। ७. विशेषता।

१. इंगलैंड के रहनेवाले अंगरेज़ कहलाते हैं, परन्तु हमारे देश में आयरलैंड और स्काटलैंडवाले को भी अंगरेज़ ही कहते हैं। अंगरेज़, इंगलिश अर्थात् अंगरेज़ी भाषा बोलते हैं।

२. प्राचीन समय में 'इंगलैंड' एँगल और सैक्सन जातियों के अधिकार में था। उसी समय फ्राँस की नार्मनजाति ने इंगलैंड पर चढ़ाई की और उसे अपने हाथ में कर राज्य करने लगी। धीरे धीरे तीनों जातियों की रीतिरिवाज, आचारविचार, चालचलन और भावभाषाओं में परस्पर संमिश्रण होनेलगा। इस खिचड़ी का फल यह हुआ कि एक नई जाति पैदा होगई, जो आजकल अंगरेज़ नाम से पुकारी-जाती है।

३ एँगल, सैक्सन और नारमन— तीनों जातियाँ उत्तरीय ट्यूटौनिक वंश की हैं। अतः वंशपरम्परा के विचार से अंगरेज़ जाति भी उसी वंश की हुई। अंगरेज़ी भाषा की जड़ भी ट्यूटौनिक है, परन्तु इस में रोमन भाषा भी मिली हुई है। अंगरेज़ जाति प्रोटेस्टेन्ट सम्प्रदाय का धर्म मानती है। प्रोटेस्टेन्ट सम्प्रदाय ईसाई धर्म की एक शाखा है।

४. सामाजिक जीवन के विचार से अंगरेज़ों और हिन्दुओं में कुछ भी समता नहीं। अंगरेज़ छूआछूत नहीं मानते चाहे किसी देश और किसी जाति का मनुष्य भोजन बनावे, अंगरेज़ बिना किसी आपत्ति के भोजन करलेंगे। अंगरेज़ों के परि-

वारो और कुटुम्बों में परस्पर घनिष्ठ सम्पर्क नहीं रहता। प्रत्येक अंगरेज अपने मा बाप के साथ तभी तक रहता है जब तक विवाह नहीं करता। विवाह होते ही अपना वास किसी नये स्थान में करलेता है। अंगरेज़ जाति में युवती लड़की अपना पति स्वयं चुनती है। अंगरेज़ों में पर्दा कुछ भी नहीं है। स्त्रियाँ जहाँ चाहें जासकती है, उन्हें कोई नहीं रोक सकता। नाचगान, खेलतमाशे, घूमनेफिरने, इत्यादि में स्त्रियाँ अपने अपने पति के साथ रहती हैं।

५. राजनैतिक क्षेत्र में अंगरेज़, और सभी जाति के लोगों से बढ़े हुए हैं। ये स्वतन्त्रताप्रेमी हैं और सदा शासनसम्बन्धी सुप्रबंधों की चेष्टा में लगे रहते हैं। क्या स्त्री क्या पुरुष, सभी राजनैतिक बातों में अपनी धाक रखते हैं।

६. अगरेज़ बड़े अध्यवसायी, साहसी, कष्टसहिष्णु, और कर्मवीर होते हैं। ये खुली हवा में घर बनाकर रहते हैं। इन को फूल पत्तियों से बड़ा प्रेम है। ये चुस्त कपड़े पहनते हैं, इससे इनकी फुर्ती बनो रहती है। ये समय का सदुपयोग भलीभाँति जानते है इनके सभी कार्य निश्चित समय पर होते हैं। ये प्रायः अपना सभी प्रतिज्ञाओं को पूर्ण करते है। इनके व्यवहार मे असत्य नहीं दीखपड़ता।

७. आविष्कारशक्ति, साहस और अध्यवसाय आदि गुणों के कारण अंगरेज़ों ने संसार की सभी जातियों में प्रथम स्थान पाया है। अंगरेज़ी ध्वजा संसार के सभी भागों में फहराती है-ऐसा कहा जाता है कि इनके राज्य में सूर्य कभी अस्त नहीं होता। ये राज्यप्रबन्ध में ऐसे पटु हैं कि कोई चूं तक भी नहीं बोलता। अंगरेज़ी पादरी सभी जगह प्रेम और दया का प्रचार करते दिखाईपड़ते हैं। आजकल अंगरेज़

जाति का नाम सारे संसार में प्रतिष्ठा के साथ लिया-जाता है।

उद्भिद् (Vegetables)-

चाय का पौधा (The Tea Plant)-

१. परिचय और श्रेणी । २ स्वाभाविक जन्मस्थान और प्राप्तिस्थान। ३ खेती और पौधे की प्रकृति । ४ तैयार करना । ५. व्यवहार। ६ लाभ। ७. उपसंहार-चाय के जन्म की कहानी ।

१ अब तो चाय ही चाय की धूम है। सभी चाय पीना पसंद करते हैं। यह लत किसने लगाई ? हमने यूरोपनिवासियों से सीखा। अच्छी बात है। यह कोई बुरी चीज़ नहीं, पीते जाइये। हमारे देश की झाड़ियों के समान चाय भी एक हरा झाड़ीदार पौधा है।

२ चाय की आदिभूमि चीन है, परन्तु अब यह आसाम, दर्जिलिङ्ग, लङ्का, जापान, जावा और ब्राज़िल इत्यादि में भी उपजाईजाती है।

३ चाय की खेती पहाड़ी भूमि में होती है। चैत बैसाख में चाय के बीज बिड़ार में बोयेजाते हैं। जब पौधे रोपने योग्य हो जाते हैं तब उन्हें खेत में लेजाकर अलग अलग रोप देते है। यह पौधा खूब बढ़ता है। यदि छाँटा न जाय तो १५।२० हाथ तक बढ़जाता है। अधिक से अधिक ३।४ हाथ लम्बा होते ही छाँट देते है, जिस से उसमें बहुतसी डालें निकलआती हैं। पत्तियाँ एक वर्ष में चार बार तोड़ी जाती हैं। पहली बार की पत्तियाँ सुगन्धित और बहुमूल्य होती हैं। एक बार का रोगा हुआ पौधा ४-५ वर्ष तक रह सकता है।

४ हरी हरी पत्तियों को खेत से लाकर आग पर भूँजते

हैं। इसके बाद बेलन से दबाकर शीघ्र ही सुखालेते हैं। इस प्रकार तैयार की हुई चाय "हरी चाय" कहलाती है। हरी हरी पत्तियों को कुछ समय तक यों ही हवा में छोड़देते हैं और पीछे कोयले की आग पर धीरे धीरे सुखालेते हैं। इस प्रकार तैयार की हुई चाय "काली चाय" कहलाती है।

५. जल को खूब गर्म करके उसमें चाय छोड़दो फिर ढकने से थोड़ी ही देर बन्द करदो। चाय का लाल अर्क उतर आवेगा। फिर उसमें दूध और मीठा मिला देने से पीने योग्य चाय बन जायगी। चाय को गर्म गर्म पीना चाहिये।

गर्म जल में अधिक देर तक चाय रखना या ठंढी चाय को फिर से गर्म कर पीना हानिकारक है। रासायनिक प्रक्रिया से चाय के सार की टिकियाँ तैयार की गई हैं। एक टिकिया लेकर दूध और चीनी के साथ गर्म जल में देदेने से पीने योग्य चाय बनजाती है। चीनी लोग चाय पीने में दूध और मीठे का प्रयोग नहीं करते।

६. चाय आत्मा को शान्ति देती, चित्त को एकाग्र करती, सुस्ती का दूर करती, थकावट को नाश करती, विचारशक्ति को बढ़ाती, ऊँघ आने को रोकती, शरीर को बल देती और ताजा करती तथा समीक्षणशक्ति को बढ़ाती है।

अधिक चाय पीना उचित नहीं, इससे बूढ़े और बलहीन मनुष्यों को बड़ी हानि होती है। बहुत से मनुष्यों ने इसको तो विलासिता की सामग्री समझलिया है।

७ चाय के जन्म के विषय में चीन में यह कथा प्रचलित है— कन्फ्यूशस ऋषि बन में तप करने गये। गर्मी के कारण उन्हें नींद आगई। साँझ तक सोये रहे। जब नींद टूटी, समय व्यर्थ नष्ट होने पर उन्हें अफसोस हुआ और आँखों की

पपनियाँ नोच कर फेंक दीं, यह समझकर कि इन्हीं के कारण नींद आई और भजन में बाधा हुई । ऋषि के धर्म के प्रभाव से उन्हीं पपनियों की जगह चाय के पेड़ उगगये जिनसे थके माँदे मनुष्यों को इतना आराम मिलता है ।

पान या ताम्बूलीलता (The Betel plant)-

१ परिचय । २. खेत तैयार करना-रोपना । ३. बरोंह और लता की रक्षा । ४. पान के प्रकार । ५. पान की रक्षा । ६ पान लगाना । ७ पान का व्यवहार । ८. लाभ । ९. उपसंहार ।

१. संसार में जहाँ जाइये वहीं प्रकृति की विचित्र शोभा एवं विश्वकर्त्ता के अनन्त रहस्यपूर्ण सृष्टिकौशल के दर्शन आप के नेत्र और हृदय को आनन्द से भर देंगे । जिस देश में जिस वस्तु की आवश्यकता समझी है, भगवान् ने वहाँ उसी की व्यवस्था की है । देशभेद और लोगों के रुचिभेद के अनुसार जहाँ जो अभाव जानपड़ा है, प्रकृतिदेवी ने वहाँ उसे पूर्ण करदिया है । हमारे भारत में ऋतुऋतु के अनुसार देवी ने अपनी प्राकृतिक शोभा दे अनन्त कृपा दिखाई है । वन, उपवन, तड़ाग जहाँ देखिये वहीं नाना प्रकार की लताएँ, पत्तियाँ और फूल फल दीखपड़ते हैं । परन्तु प्रकृतिदेवी की यह ताम्बूलीलता सभी स्थानों में नहीं दीखपड़ती । जान-पड़ता है, देवी ने केवल हमारे ही देश को यह अलभ्यवस्तु भेंट की है ।

२ पान को बहुत ही सावधानी से रोपना होता है और सदा उसकी देखभाल करनी होती है, नहीं तो वह सूर्य की प्रखर किरण, अति वृष्टि और प्रबल वायु के नहीं सहने के कारण शीघ्र ही नष्ट होजाता है । इसकी खेती किसी जलाशय के किनारे ढालू और ऊँची भूमि में होती है ।

पहले खेत में खाद पटाकर उसे भलीभाँति जोतडालते हैं और शकरकंद की लता की भाँति इसे क्यारी बनाते हुए रोप डालते हैं । यदि नियमितरूप से जल न पटायाजाय तो पौधे नहीं बढ़ते । प्रत्येक पौधे के पास ४-५ हाथ का एक बाँस या कोई लकड़ी गाड़देते हैं जिसके अवलम्ब से पौधा ऊपर को बढ़चलता है । जब बाँस की लम्बाई तक बढ़ चुकता है तब उसे नीचे की ओर घुमादेते हैं । पान की खेती गरमी और बरसात में होती है ।

३ पान की खेती को बरेज या बरोह कहते हैं । ऊपर पान का रोपना, खेत का तैयार करना इत्यादि बतायेगये हैं. परन्तु बरोह में पान की रक्षा केलिये और कुछ करना होता है । ऊपर लिख आये हैं कि पान केलिये प्रबल वायु सूर्य की प्रखर किरण और भारी वर्षा की आवश्यकता नहीं । अतः, इन उत्पातों से बचाने केलिये खेत की चारों ओर झिझिरदार टट्टी और ऊपर पतली छाजनी बनादेते हैं, टट्टी में केवल एक दरवाजा एक मनुष्य के आनेजाने केलिये छोड़ दिया जाता है ।

४. नया, पुराना, तीता मीठा, साँची, कपुरिया इत्यादि पान के कई भेद हैं । देशभेद से बंगला और मगही पान हमारे यहाँ मिलते हैं । बरई खेत में जड़ की ओर से पत्तों को तोड़ता है और गिनगिन कर २००।२०० पान प्रत्येक ढोली में देता है । पनेरी बरई से पान खरीद कर बाजार में बीड़े बनाबना कर बेचता है । गिलौड़ा, सिंघाड़ा इत्यादि बीड़ों के कई भेद हैं ।

५. यदि पनेरी पान की रक्षा न करे तो वह बहुत शीघ्र सड़जाता है । पान को प्रतिदिन फेरते रहना और सड़े गले

भाग को कतर कर फेंक देना चाहिये। केवल इसी काम केलिये बड़ेबड़े पनेरियों और बरइयों के यहाँ चतुर नौकर रक्खेजाते हैं।

६ पान लगाने में चूना, कत्था, सुपारी इत्यादि कई मसालों की आवश्यकता पड़ती है। पान सावधानी से लगाना चाहिये, क्योंकि चूना अधिक पड़जाने से जीभ में जलन होने लगती है। जो पनेरी अच्छा पान लगाता है उसकी अच्छी बिक्री होती है। लगाने और मसालों के उचित व्यवहार से पान का एक एक बीड़ा एक या अधिक रुपयों को भी बिकता है। ऐसे बीड़े काशी में खूब बनते हैं।

७ हमारे भारत में पर्व, विवाह इत्यादि जितने शुभ कार्य हैं सभी में पान का व्यवहार होता है। यदि बड़े आदमी किसी के घर पर जाते हैं तो उनके आने और लौटने के समय पान दियाजाता है। भैयादूज इत्यादि व्रत और पूजापाठ में पान का रहना बहुत आवश्यक है। बड़े लोगों के सामने पान खाना असभ्यता का चिन्ह है। पान सावधानी से खाना चाहिये, नहीं तो व्यर्थ ओठ रंगने और कपड़े में पोछ लेने से अनाड़ीपन झलकता है।

८. पान खाने से भोजन के पचने में सहायता मिलती है। अजीर्णरोग और अम्लदोष में इससे कुछ कुछ उपकार होते देखागया है। पान गले को साफ करता, रूप को सुन्दर बनाता और वाणी में मधुरता लाता है। यह उत्तेजक पदार्थ है, इसलिये अधिक खाना उचित नहीं। अधिक खाने से दांत की जड़ हिल जाते हैं। विद्यार्थियों को पान खाना उचित नहीं, क्योंकि इससे जीभ कुछ मोटी होजाती है। रात को पान खाने के बाद कुल्ली कर लेना उचित है, नहीं तो इससे

दन्तरोग होते हैं ।

९ पुराणों में लिखा है कि राजा को पान खाना आवश्यक है। मुसलमान बहुत ही अधिक पान खाते हैं और हमारे देश में रहने पर भी अँगरेज़ प्रायः नहीं खाते ।

ऊख (Sugarcane).

१ परिचय । २. ऊख की खेती कहाँ कहाँ होती है ? ३. प्रकार । ४. ऊख कोलिये उपयुक्त खेत और उसकी तैयारी । ५ बीज तैयार करना । ६ रोपना, पानी पटाना, निकौनी करना इत्यादि । ७ गुड़, चीनी, मिश्री इत्यादि बनाना । ८ लाभ । ९ उपसंहार ।

१. बाँस, नरकट, कंडा इत्यादि के समान ऊख भी घास जाति का एक मीठा पौधा है । अमरकोष में इसके मधुतृण और इक्षुखण्ड इत्यादि नाम भी हैं ।

२. इसकी खेती उष्णदेशों में भरपूर हो सकती है। पहले पहल यह भूमध्यसागर के पूर्वी तटपर उपजाईजाती थी । अब यह भारतवर्ष, चीन, मरीचद्वीप, इउनाइटेड् स्टेट्स, ब्राज़िल, मोरिसस, अज़ोर और पश्चिम भारतीय द्वीपपुञ्ज में उपजाई जाती है ।

३. देशभेद से ऊख के कई भेद हैं, परन्तु हमारे यहाँ कट-रिया, सेमारी, बघिया, कालागेंड़ा, लालगेंडा इत्यादि ऊख के कई भेद दीखपड़ते हैं ।

४. ऊख के खेत की भूमि दोरस हो और ऐसी हो कि पौधा बाढ़ या वर्षा के पानी से डूब न जाय। भूमि को चौमास छोड़देते हैं और खूब गहरी जुताई करके गोबर और राख इत्यादि पटाकर तैयार करते हैं ।

५. जब ऊख की कटनी होती है, उसी समय कुछ पौधे नहीं काटेजाते हैं। फागुन चैत महीनेमें जब रोपने का समय

आता है, उन्हें काटकर लेआते हैं और पत्तियों को हाथ से छीलकर प्राय हाथहाथभर की गुल्लियाँ काटलेते हैं। इन गुल्लियों को राख, पाँक और पानी में सौनकर खेत में छिछली खाई में तीनचार दिनों तक गाड़ छोड़ते हैं। ऐसा करने से गिरहों की आँखें बड़ीबड़ी होजाती हैं, जिससे वे गुल्लियाँ रोपने केलिये तैयार होजाती हैं।

६ तैयार खेत को रस्सी बैठाकर धरियाजाते हैं और प्रत्येक धारी में कुदारी से प्राय. डेढ़डेढ़ हाथ पर दर बनाकर, दर पीछे एक एक गुल्ली रखतेजाते है। इसके बाद मिट्टी से उन्हें फुलके फुलके भरदेते हैं। रोपने का काम हल से भी कियाजाता है। हलवाहा हल जोततजाता है और दूसरा आदमी सिराउर में डेढ़डेढ़ हाथ पर गुल्ली गिरातेजाता है। पीछे चौकी देकर मिट्टी बराबर करदेते हैं।

तेरह कोड़ तीन पानी, ऊख की खेती में मर्दानी। गृहस्थों का यह कहना बहुत ही ठीक है। वास्तव में ऊख की खेती में बड़ी मिहनत है। बारबार निकौनी करना और कई बार पानी पटानापड़ता है। जब तक ऊख के पौधे लगभग २ हाथ के न होजायं तबतक कोडने पटाने में ढिलाई नहीं होनी चाहिये।

ऊख के पौधों में कीडों के लगने का डर है। 'कजरा' कीड़ा मिट्टा के नीचे जड़ में और गर्भसुक्खू इत्यादि ऊपर डाँट में लगते हैं। अतः, कीड़ों पर गृहस्थों की कडी नज़र रहनी चाहिये। खेत को भलीभाँति कोड़ने और जो पत्तियाँ सूखकर गिरी हों उन्हें साफ करदेने से कीड़ों का डर जातारहता है। जिन डांटों में कीड़े लगे हों उन्हें भी काट कर जलादेना उचित है।

७. कातिक अगहन से लोग ऊख पेरनेलगते हैं। रस को कड़ाह में औंटते हैं और गाढ़ा होजाने पर बरतनों में पौर कर गुड़ बनालेते हैं। यदि रस को छान और उसमें कुछ चूना, दूध मिलाकर औंटते है तो मैल निकलजाता है साफ रस गाढ़ा होजाता है। इसके बाद उसमें सौंफ, मिर्च इत्यादि देकर भेली नामक गुड़ बनाते हैं।

चीनी बनाने केलिये रस को गाढ़ा नहीं औंटते, कुछ पतला ही रखते हैं। इस प्रकार औंटे रस को गढ़ों में ढार कर राब बनाते हैं। राब से छोत्रा निकाल लेने पर भूरा या शक्कर बच जाती है। राब को जब दूध, माजूफल का रस इत्यादि देकर औंटते हैं और मैल निकलजाने के बाद सेवार वगैरह से साफ करते है तब चीनी बनजाती है।

ऊपर लिखे उपायों को विशेषता के साथ करने से चीनी से मिश्री और मिश्री से ओला तैयार करते हैं। ओले में कुछ भी मैलापन नहीं रहता और यह बहुत ही मीठा होता है।

८. हमलोग जो कुछ मिठाइयाँ खाते हैं वे गुड, चीनी और मिश्री से बनी है। हमारा कोई मीठा ऐसा नहीं है जिसमें ऊख की बनी कोई चीज न हो। हां, खजूर का गुड़ और मधु भी हमारे भोजन को मीठा करते, परन्तु वे बहुत ही थोड़े मिलते हैं। गुड, चीनी और मिश्री पुष्टिकर पदार्थ हैं। ये चीज़ें हमारे बच्चों की बड़ी ही प्यारी हैं।

९. आजकल ऊख का पेरना और चीनी मिश्री का बनना इत्यादि कार्य कलों के सहारे होनेलगे हैं और बहुतसी चीनी बाहर से भी आती है।

अब हमारे भारतवासी भी ऊख की खेती में मन लगा रहे हैं। अच्छी बात है। इस की खेती से अब खूब ही आमदनी होगी, ऐसी आशा कीजाती है।

अचेतनपदार्थ (Inanimate objects).

नगर–पटना (Patna).

१ नामकरण। २ इतिहास। ३ वर्त्तमान पटना। ४ जल वायु। ५ शिल्प और व्यापार। ६. जाति और धर्म। ७. दर्शनीय स्थान। ८ उपसंहार।

१. आजकल 'पटना' बिहार प्रदेश की राजधानी है। इसका प्राचीन नाम पाटलिपुत्र है। भविष्य, ब्रह्माण्ड और वायुपुराणों में तथा दशकुमारचरित, मुद्राराक्षस, बृहत् कथा, अशोकावदान इत्यादि संस्कृत और महापरिनिर्वाणसूक्त, स्थविरावली इत्यादि पाली ग्रन्थों में पाटलिपुत्र, पुष्पपुर और कुसुमपुर नाम से 'पटने' का उल्लेख मिलता है। ग्रीकवालों ने अपने प्राचीन ग्रन्थों में इसका नाम 'पालिब्रोथ' लिखा है। जब औरंगजेब का पोता 'अजीमउश्शान' बिहार का सूबेदार था तब बादशाह ने इसका नाम 'अजीमाबाद' रखना चाहा था। अब सब कोई इसे 'पटना' ही कहा करते हैं।

२. पाली और संस्कृत ग्रन्थों से पता लगता है कि ईसा के ४९० वर्ष पहले जहाँपर गंगा और सोन का संगम था वहाँ शिशुनागवंशी राजा आजातशत्रु ने मिथिला की वृज्जि जाति की चढ़ाई को रोकने केलिये एक क़िला बनवाया था। वहाँ धीरे धीरे एक गाँव बस गया। ५०–६० वर्ष पीछे उदय नामक राजा मगध की राजधानी राजगृह को छोड़ इसी पाटलि गाँव में आ बसे। इनके साथ बहुतसे धनी-मानी और कर्मचारी लोग भी आये। बस्ती बढ़तीगई, गाँव नगर में बदलगया और राजगृह को उजाड़ कर आप

मगध की राजधानी बनबैठा। ईसा के ३०० वर्ष पहले मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्त ने चाणक्य की सहायता से ' पाटलिपुत्र ' की गद्दी अपने हाथ में करली। इन्हीं के दरबार में ग्रीक का दूत मेगास्थिनिज़ आया था। उसके लिखने से पता चलता है कि उस समय पाटलिपुत्र ९ मील लम्बा और १॥ मील चौड़ा था। चारों ओर शाल की लकडी का घेरा था, जिस में ५४ फाटक और ५७० मंच बने थे। घेरे की चारों ओर ४०० हाथ चौड़ी और ३० हाथ गहरी खाई सोन के जल से सदा भरी रहती थी। उद्यान, तालाब और फल फूलों से सुसज्जित कोट का बना राजभवन पारस के राजभवनों से कहीं सुन्दर था। ५४० ई० तक गुप्तवंश का राज और पाटलिपुत्र राजधानी रहा। गुप्तवंश के समय में पाटलिपुत्र की उन्नति चरमसीमा तक पहुँचगई थी। इतनी धन सम्पत्ति थी जितनी पहले किसी के समय में नहीं रही। देशदेश से यात्री और व्यापारी आते थे जिनका देखभाल केलिये ५ निरीक्षक नियुक्त रहते थे।

ईस्वी सन के आरम्भ से ३०० ई० तक शकों की चढ़ाइयों से पाटलिपुत्र छोटा होतागया। चौथी शताब्दी में मगध के ज़मींदार और लिच्छविराज के दामाद चन्द्रगुप्त ने अपना राज्य स्थापित किया। इनके पुत्र समुद्रगुप्त ने पाटलिपुत्र को अपनी राजधानी बनाई। समुद्रगुप्त के बाद इनके पुत्र द्वितीय चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के नाम से ४०० ई० में गद्दी पर बैठे। इनके समय में पाटलिपुत्र की फिरसे, बहुत ही अच्छी उन्नति हुई। इसी पाटलिपुत्र में ४७६ ई० के लगभग आर्यभट्ट ज्योतिषी ने अपने

* प्रसिद्ध ऐतिहासिक अध्यापक बा० यदुनाथ सरकार कृत एक पुस्तक के आधार पर लिखित।

प्रसिद्ध ज्योतिष ग्रन्थों को बनाया था। पाँचवीं शताब्दी के अंत के साथ साथ पाटलिपुत्र के गौरव का भी अन्त होचला। छठी शताब्दी में हूणों ने पाटलिपुत्र को लूटलूटकर बरबाद कर दिया। चीनी यात्री हुएनसंग ६४० ई॰ में वहाँ आया था। उसने लिखा है-" पाटलिपुत्र उजाड़ होगया है, घासें और जंगल झाड़ होगये हैं, केवल गंगा के किनारे प्राय: १००० घरों की एक बस्ती है।" शेरशाह के पहले तक पाटलिपुत्र की दशा नहीं सुधरी। हाँ, नदियों के संगम पर होने के कारण कुछ वाणिज्य व्यापार होतारहा। शेरशाह ने १५४१ में दिल्ली की राजगद्दी दखल की और पाटलिपुत्र में ईंटों से एक क़िला बनवाया। मुग़लबादशाहों ने पहले इस प्रदेश की राजधानी बिहारनामक नगर में रक्खी, परन्तु पीछे वह पाटलिपुत्र चलीआई। अब यहाँ मुसलमानों का दबदबा बढ़ा जिसकी गंध कुछ कुछ अभी तक है। अठारहवीं शताब्दी के आरम्भ में अजीम उश्शान यहाँ का सूबेदार हुआ तब से कुछ लोग पाटलिपुत्र को अजीमाबाद कहनेलगे। मुगलों के समय में यह प्रदेश मुर्शिदाबाद के नवाबों के हाथ में रक्खा-गया था। धीरेधीरे वे मुगल बादशाहों से स्वतन्त्र रहनेलगे, इसलिये उन्हों ने मुगलों के आक्रमण से बचाने केलिये पाटलिपुत्र के मुख्य भाग को ऊँची और मोटी दीवालों से घिरवाडाला उसी घेरे का पूरब दरवाज़ा और पच्छिम दरवाज़ा ये दोनों अभी तक प्रसिद्ध हैं। इसके बाद 'पाटलिपुत्र' अंगरेज़ी सरकार के हाथ में आया। पहले तो बिहार प्रदेश बंगाल के साथ मिला हुआ था, परन्तु १९११ ई॰ से यह अलग कर दिया गया है। अलग होते ही पाटलिपुत्र को फिर से बिहार की राजधानी बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

३. वर्त्तमान पटने के मुख्य तीन भाग हैं–पटना सिटी, बाँकीपुर और दानापुर । 'पटना सिटी' पूरब में है । यह पुराना शहर है और यहीं हिन्दू मुसलमान की राजधानी थी । अभी भी यहाँ वाणिज्य व्यवसाय की प्रधानता है । बाँकीपुर अंगरेज़ी शासन का केन्द्र है । हाल ही बाँकीपुर और दानापुर के बीच में रेलवे लाइन की दोनों ओर हाईकोर्ट का एक नया शहर बसायागया है । जहाँ लाट साहब का भवन, हाईकोर्ट, सेक्रेटरियेट, हाईस्कूल और कर्मचारियों के डेरे बनायेगये हैं । दानापुर पच्छिम में है, यहाँ फौज़ की छावनी है ।

४ गंगा के किनारे बसने के कारण पटने के लोगों को पीने केलिये गंगाजल मिलजाता है, परन्तु कूओं का जल इतना खारा है कि पीने योग्य नहीं । बस्ती घनी है, इसलिये बीमारियाँ बहुत ही शीघ्र फूट निकलती हैं । केवल हाईकोर्ट वाले शहर की जल वायु अच्छी है, क्योंकि वहाँ की बस्ती घनी नहीं और सभी जगह पानी की कलें लगी हैं । पटना सिटी की जल वायु और भागों से अधिक बुरी है । सम्भव है, वहाँ वाले इसका अनुभव भरपूर नहीं करते हों, परन्तु बाहरवालों केलिये स्वास्थ्यप्रद नहीं ।

५. गंगा, गंडक और सोन के संगम पर बसने के कारण पटना प्राचीन काल से व्यापार का केन्द्र है । यहाँ अन्न इत्यादि के बड़े बड़े गोले हैं । पटना सिटी में शीशा ढालाजाता है तथा चूड़ी, टिकुली इत्यादि स्त्रियों के व्यवहार की चीज़ें, काठ के खिलौने और दस्तकारी के कई पदार्थ यहाँ से बाहर भेजेजाते हैं ।

६ यहाँ भारत की भिन्न भिन्न जातियाँ रहती हैं, जिन में हिन्दू, मुसलमान और ईसाई मुख्य हैं । यहाँ हिन्दू सबसे

अधिक हैं। यहाँ के मुसलमान धनी हैं और उन में अभी तक नवाबी झलक है।

७ पटने में गोलघर, अगमकूआँ, कुम्हडार, गुरुगोविन्द सिंह का जन्मस्थान, खुदाबख़्स खाँ की लाइब्रेरी, मानुक साहब की चित्रशाला इत्यादि दर्शनीय स्थान हैं। गोलघर को अंगरेजों ने १७८६ ई० में अन्न रखने केलिये बनवाया था। गोलघर पर चढ़ने से पटने और गंगा का अच्छा दृश्य दिखाईपड़ता है। लोग कहते है कि अगमकूआँ में अथाह जल है। कुम्हडार 'पटना जंकशन' स्टेशन से प्रायः ॥ कोस पर है। वहाँ प्राचीन नगर का शेषांश दीखपड़ता है। पास ही खुदाई होने से बहुत से ऐतिहासिक पदार्थ मिले हैं। गुरु गोविन्दसिंह का जन्मस्थान पटना सिटी में है, वहाँ अभी तक गुरुमहाराज का 'छानाबाना' रक्खा हुआ है। खुदाबख़्शखाँ की लाइब्रेरी भारत में मुसलमानी ग्रन्थों का सब से उत्तम संग्रहालय है। इसमें मुसलमानी बादशाहत के समय के प्रचुर ऐतिहासिक साधन हैं। मानुक साहब की चित्रशाला में भारतीय प्राचीन चित्रों का अपूर्व संग्रह हुआ है, जिनमें कई चित्र यूरोपीय चित्रों के टक्कर के हैं।

ऐसे ही, पटनदेवी का मन्दिर, हाईकोर्ट के मकान, जाफ़र खाँ का बाग़ इत्यादि भी दर्शनीय स्थान हैं।

८ पटना कई बार उठा और कई बार गिरा, परन्तु अब इसके नक्षत्र चमकपड़े हैं। इसकी दिनोंदिन उन्नति होती आरही है। बिहार में क्या शिक्षा, क्या शासन, क्या व्यापार सभी का केन्द्र हो रहा है। शहर में दानापुर, पटना जंकशन और पटना सिटी ई० आई० रेलवे के मुख्य स्टेशन बने हैं जहाँ से शहरवाले अपनी चीज़ें बाहर भेजते और कबाहरी

चीज़ें मँगाते हैं। जो कुछ हो, ईश्वर करे, पटना अपने प्राचीन गुणगौरव को पहुँचे।

राधाउर (A Village).

१. अवस्थिति। २. नामोत्पत्ति का इतिहास। ३. प्राकृतिक दृश्य। ४. निवास करनेवाले प्रसिद्ध वंश। ५ आधुनिक पुरुष और विद्वान्। ६. जीविका। ७ उन्नति। ८. आपका व्यवहार। ९. उपसंहार।

१. यह गाँव मुज़फ्फरपुर ज़िले के अन्तर्गत सीतामढी से प्रायः ४कोस पूरब दरभंगा राज्य में है। दरभंगे से सीतामढ़ी की ओर बी० एन्० डबल्यू० रेलवे की एक लाइन गई है, इसी में चार स्टेशनों के बाद पाँचवाँ स्टेशन बाजपट्टी है। बाजपट्टी से राधाउर प्रायः २॥ कोस उत्तर हट कर बसा हुआ है। स्टेशन से वहाँ जाने में कोई अच्छी सड़क नहीं मिलती। हाँ, दरभंगा महाराज की बनवाई हुई एक टूटी-फूटी सड़क है। राह तो कोई बुरी नहीं, परन्तु बरसात में दिक़्क़त होती है। राधाउर से उत्तरपूरब के कोन में प्रायः ७ कोस पर जनकपुर है।

२. मुकुन्द ब्राह्मण को यह वरदान मिला था कि आप मिथिला देश में जाकर तपस्या कीजिये, वहीं आपको कृष्ण भगवान् के दर्शन मिलेंगे। इसी वरदान के अनुसार वे मिथिला में आये और आश्रम ठीक करके तपस्या करनेलगे। इन का आश्रम 'मुकुन्दाश्रम' के नाम से विख्यात हुआ। *

जब 'कृष्ण भगवान्' गोकुल से मथुरा चलेगये तब राधामहारानी उनके वियोग से विह्वल होगई। ऊधो उन्हें समझाने आये, तौभी उन्हें ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ। पीछे भग-

* इसी मुकुन्दाश्रम को मुकुन्दपुर और अब मकुनाही कहते हैं।

वान् ने नारदजी के द्वारा राधाजी को कहलाभेजा कि आप मिथिला में मुकुन्दाश्रम के समीप जाकर तपस्या करें। जब हम मिथिला भ्रमण करने आवेंगे तब भेंट होगी। राधा महारानी मुकुन्दाश्रम में आई और मुकुन्दजी से राय ले उनसे दक्खिन में आश्रम बनाकर तपस्या करनेलगी। इनका आश्रम 'राधाश्रम' के नाम से विख्यात हुआ। जब श्री-कृष्ण भगवान् मिथिला आये तब मुकुन्द ब्राह्मण और राधा महारानी के सब मनोरथ पूर्ण हुए।

अभी तक इन दोनों आश्रमों के चिन्ह राधासर और मुकुन्दसर दीखपड़ते हैं। राधासर को अब 'रधेसरी' कहते है। यद्यपि यह तालाब बुरी अवस्था में, तथापि इसमें निर्मल जल भरा रहता है। अभी भी इन दोनों तालाबों की बड़ी महिमा समझीजाती है। इन्हें कभी कभी साधुमहात्मा आकर दर्शन कर जाते हैं। इसी राधाश्रम को राधानगर, राधापुर और अब राधाउर कहते है। ×

२. राधाउर एक बड़ा गांव है। उत्तर से दक्खिन तक यह पौन मील लम्बा और पूरब से पच्छिम तक चौथाई मील चौड़ा है। इसकी प्राकृतिक शोभा बहुत ही अच्छी है। चारों ओर आम के अच्छे अच्छे बगीचे है। जिधर देखिये उधर ही अच्छे अच्छे तालाब दीखपड़ते हैं, जिनमे कई, झीलों की समता रखते है। गाँव से पश्चिम और पूरब चौरों में एक एक नहर है। दोनों क्रमशः अधोबरा और संघी नदियों में जा गिरती हैं। प्राय: सभी तालाबों पर गृहस्थों के खलिहान और छोटी छोटी वाटिकाएँतथा ग्राम्य देवताओं

× स्कन्दपुराण के उत्तरार्द्ध में इसका विशेष वर्णन है। इसकी खोज हमें एक साधु ने बताई थी।

के मंडप हैं । बस्ती घनी है । इसके पच्छिम में उत्तर से दक्खिन को एक सड़क गई है, जो टूटी फूटी अवस्था में है । वर्षा-ऋतु में रघेसरी, चंडी स्थान और लालीपोखर पर ग्रामवासी जुटते हैं और प्राकृतिक शोभा देख देखकर आनन्दित होते हैं ।

४ यहाँ सब जातियों से अधिक भूमिहार ब्राह्मण बसते हैं । इनमें 'हथौड़िया' वंशवाले सब से अधिक धनी और मानी हैं । अभी तक इनकी प्रतिष्ठा बड़े बड़े रजवाड़ों में है । इस वंश में पृथ्वी तिवारी, गुमान तिवारी, भागवत तिवारी और नाथतिवारी बहुत ही अंशिक पुरुष होगये हैं, जिनकी कई अद्भुत बातें दन्तकथाओं के रूप में जवार भर में कहीजाती हैं ।

हथौड़िया के सिवाय 'परसरिया' और 'मैलवारा' ये दो वंश मुख्य हैं । इनमें रामठाकुर और भेखी ठाकुर अच्छे पुरुष होगये हैं । रामठाकुर की सादगी का वर्णन अभी तक होता है ।

यहाँ मैथिल ब्राह्मण भी बसते हैं । इनमें प० हृदयराम पाठक प्रसिद्ध पुरुष होगये हैं, इनका मान दरभंगा महाराज के यहाँ बहुत ही अच्छा था । इस समय राघाउर और मकुनाही में प्रायः ५० घर मैथिल ब्राह्मण हैं । सभी पाठकजी के सम्बन्धी हैं ।

इन दोनों को छोड़ रौनियार वैश्य का वास भी है । इनके पूर्वज भोजपुर में रहते थे और वहाँ जगदीशपुर के बाबू और डुमराँव राज्य से अच्छा मान पाया था । इस वंश में पूरन साहु एक अनुकरणीय पुरुष होगये हैं । ये इतने सीधे सादे और मिलनसार थे कि जवार के लोग अभी तक गुण गाते हैं ।

यहाँ कुछ घर कायस्थ और महापात्र ब्राह्मण के भी हैं। इन लोगों का भी मान अच्छा है और जवार में पूछ है।

इन मुख्य जातियों के सिवाय तेली, सूँड़ी, कोइरी, कुम्हार, लुहार, कान्दूँ, खतबे और दुसाध इत्यादि भी रहते हैं। इनमें "गरभू खतबे" का नाम बारबार लिया जाता है।

५. इस समय रामतिवारी, देवतातिवारी, पंचनतिवारी, प० गेनालाल मिश्र (ज्योतिषीजी) प० थारूपाठक, प० रघुनाथमिश्र, कुंडल ठाकुर, बाबूलाल ठाकुर, रामप्रकाशसिंह, गुलाबलाल और महँगू साहु इत्यादि राघाउर के मुख्य पुरुष हैं। रामतिवारी राघाउर की प्राचीन बातें बहुत जानते हैं। देवतातिवारी एक प्रसिद्ध धनी पुरुष हैं। आप गाँव के सरदार समझेजाते हैं। ज्योतिषीजी का अच्छा मान होता है। महँगूसाहु मुँहदेखी बात करना नहीं जानते। आपने अपने घर को विद्या के प्रकाश से प्रकाशित कर उसे जवार में एक आदर्श बनादिया है।

सीताशरण तिवारी, रामसागर तिवारी, विष्णुदेव तिवारी, वंशलोचनप्रसाद रामलोचनशरण ने आधुनिक शिक्षा प्राप्त की है। आशा है, येही पाँच राघाउर के भविष्य में होनेवाले विद्वानों के सामने पचरत्न समझेजायँगे। यदि ये पाँचों चाहें तो मुख्य पुरुषों की सहायता से राघाउर की अच्छी उन्नति कर सकते हैं।

६ यहाँ के लोगों की मुख्य जीविका खेती है। यहाँ धान की उपज बहुत ही अच्छी होती है। यहाँ वाणिज्य व्यवसाय की ओर लोगों का ध्यान प्रायः नहीं के बराबर है। कुछ लोगों को इधर उधर छोटी मोटी ज़मींदारी भी है।

७. इतने बड़े गाँव में, धनी मानी लोगों के रहते हुए भी,

उन्नति के प्रचुर साधन नहीं हैं। यहाँ एक संस्कृत पाठशाला, एक अपर प्राइमरी स्कूल और दो कन्यापाठशालाएँ हैं। यहाँ के दो चार विद्वान् कई स्कूलों और पाठाशलाओं के अध्यापक हैं, जिनकी इच्छा गाँव की उन्नति केलिये सदा लगी रहती है। यदि यहां के लोग एक मिड्ल इंगलिश स्कूल की नीव डालते तो बड़ी भलाई होती।

८ यह सब होते हुए भी यहाँ के लोगों में मेल नहीं और न परस्पर सहानुभूति है। यदि इन लोगों में मेल होजाय तो आशा है कि यह गाँव शीघ्र ही अपनी उन्नति का मुख देखले। यह तभी हो सकता है जब गाँववाले 'विद्या' को पूर्णरूप से अपनावें कुछ दिनों से गाँव के लोगों का झुकाव इधर होने लगा है। सम्भव है, शीघ्र ही आपस का व्यवहार उत्तम होजाय।

९ यदि सभी बातों पर विचार कियाजाय तो यह गाँव एक 'आदर्शग्राम' कहलासकता है और ऐसा जवार-वाले समझते भी हैं।

श्रीसुन्दर झा, ज्योतिषी।

हिमालय पहाड़ (The Himalayas).

१. परिचय। २. पौधे और जीव। ३ वन, गुफाएँ, नदियाँ, झीलें। ४. देश, नगर और तीर्थ। ५ पहाड़ में रहनेवाले मनुष्यों के स्वभाव, गुण इत्यादि। ६. उपकार। ७ शोभा।

१ पर्वतराज हिमालय को सारा संसार जानता है। यह भारत के उत्तर में पश्चिम से पूर्व तक प्रायः ७५० कोस लम्बा और ७५ कोस चौड़ा है। इसके कई ऊँचे ऊँचे शिखर हैं, जिन में गौरीशङ्कर (एवरिष्ट) धौलागिरि और कञ्चन-

चङ्गा मुख्य हैं। हिमालय सचमुच हिम का आलय है। इसके शिखर सर्वदा हिम से ढके रहते हैं।

२. हिमालय पहाड़ की जड़ से ज्यों ज्यों ऊपर की ओर जाँय, हमें क्रमानुसार वे ही पौधे दीखपड़ेंगे जो भूमध्यरेखा से किसी ध्रुव तक जाने में मिलते हैं। ऊष्ण कटिबन्ध के ताड़, ऊँख, बाँस, समकटिबन्ध के अंगूर, रूई, नारंगी, आम, चाय, मकई, नील, गेंहू, जौ, धान और शीत कटिबन्ध के छोटी छोटी झाड़ियां इत्यादि सभी पौधे हिमालय में नीचे से ऊपर तक सजे हैं। इसके जंगलों में शाल, सीसों इत्यादि वृक्ष खूब ही मिलते हैं।

पौधों की भाँति हिमालय में नाना प्रकार के जीव भी मिलते हैं। यह बाघ, चीते, भालू, कुत्ते, साँप इत्यादि भयङ्कर पशुओं से भरा है। यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार की बकरियों, बिल्लियों और भेड़ों इत्यादि की भी कमी नहीं। सियार पांड़े क्यों छूट जाँय? वे तो बहुत ही हैं।

३. हिमालय में बनों और गुफाओं की कमी नहीं। जिधर जाओ उधर ही विशाल वृक्षों और वनस्पतियों से परिपूर्ण सैकड़ों बन एवं बनैले पशुओं और विषधरों से पूर्ण गुफाएँ पाओगे। इन्हीं भयंकर बनों में सच्चे महात्माओं के 'तपोवन' भी हैं। हिमालय से सैकड़ों नदियाँ निकली हैं जिनमें सिन्धु, झेलम, चनाब, रावी, व्यासा, सतलज, यमुना, गंगा, सरयू, गंडक, बाघमती, कोशी और ब्रह्मपुत्र मुख्य हैं। हिमालय में झीलें भी कई हैं, जिन में मानसरोवर और रावणह्रद मुख्य हैं।

४ हिमालय की तराइयों मे काश्मीर, नेपाल, शिकम, भूटान और आसाम मुख्य देश हैं। भारत की वाटिका की

पदवी काश्मीर को प्राप्त है । नेपाल और भूटान स्वतंत्र राज्य हैं । इन्हीं दोनों के बीच में शिकम है । आसाम भूटान से पूरब की ओर है । श्रीनगर, शिमला, मंसूरी, नैनीताल, काठमांडू, और दार्जिलिङ्ग, तराई के मुख्य नगर हैं । हिमालय में तीर्थस्थानों की कमी नहीं, इनमें बद्रीनाथ, केदारनाथ, हरिद्वार और पारसनाथ मुख्य हैं ।

५. हिमालय की तराइयों में रहनेवाले मनुष्यों में से नेपाली और भोटिया हमारे विशेष परिचित हैं । ये गौरांग, बलवान्, परिश्रमी और कष्टसहिष्णु होते हैं । इनके व्यवहार निष्कपट और सच्चे होते हैं । ये पहाड़ों में मकई, चाय और तराई में अनाज उपजाते हैं । ये ठंढक के कारण सदा ऊनी वस्त्र पहनाकरते हैं ।

६ हिमालय पहाड़ से हमारे देश को बड़े बड़े उपकार होते हैं । सिन्धु, गंगा और ब्रह्मपुत्र इत्यादि नदियाँ यदि हमारे देश में नहीं होती, यदि हिमालय से टकड़ाकर सामयिक वायु हमारे देश में वर्षा नहीं करती तो हमारी भूमि, जो स्वर्णभूमि कहलाती है, उर्वरा होने के बदले मरुभूमि हो जाती और हमारे घर इस प्रकार धन धान्य से पूर्ण नहीं रहते । इतनाही नहीं, इस पहाड़ से हमें भाँति भाँति के फल और मेवे, भाँति भाँति की लकड़ियाँ, जड़ी बूटी, जंगली पदार्थ और हाथी इत्यादि जीव मिलते हैं । हिमालय हमको उत्तर के शत्रुओं से भी बचाता है ।

७. हिमालय के ऊँचे शिखर दूर दूर तक चमकते हैं । सबेरे उन पर जब सूर्य की नई किरणें पड़ती हैं तब वे स्वर्ण के समान जानपड़ते हैं । फूलों से लदी लताएँ, हरी भरी बन-स्पतियाँ, डहडहे वृक्षों पर पंछियों की मीठी तान, वृक्ष वृक्ष

पर बंदरों का कूदना फाँदना, रसिक भौंरों का फूल फूल पर झूमना, जल को छरछराते हुए झरनों का झरना और शिखर छूछूकर बादलों का जल बरसाना इत्यादि दृश्य किस के मन को मुग्ध नहीं करते ? गंगा गंगोतरी से निकलती है, इसकी शोभा कौन वर्णन करे ? हरिद्वार, केदार और बद्रिकाश्रम की शोभा पर कौन मनुष्य लट्टू नहीं होता ? कहीं गहड़ी गहड़ी गुफाएँ हैं जिनमें बोलतेही प्रतिध्वनि सुनाईदेती है । कहीं वन्य पशु कलोल करते हुए सुख से विहार करते हैं । कहीं तपोवन की अपूर्व शोभा दिखाई पड़ती है । वास्तव में, हिमालय पर्वत प्रकृति के चातुर्य का एक अनुपम स्थान है ।

" प्रकृति परम चातुर्य अनूपम अचरज आलय ।
श्रीधर दृग छकि रहत ' अटल छवि ' निरखि हिमालय ॥ "

प० श्रीधर पाठक ।

तपोवनदर्शन ।

१. वन, होम और अध्ययन । २ तप की सामग्री । ३ तपी के दर्शन । ४ दर्शक के भाव । ५. सन्ध्यावन्दन ।

१. तपोवन के निकट पहुँचकर मैंने देखा कि वहाँ के वृक्ष सब कुसुमित और पल्लवित हो रहे थे और फलभार से भूमिस्पर्श करते थे । इलायची और लवङ्ग की सुगन्ध चारों ओर छा रही थी । मधुप झनकार करते हुए एक पुष्प से दूसरे पुष्प पर भ्रमण कर रहे थे । अशोक, चम्पक, किंशुक, मल्लिका और मालती आदि नाना प्रकार के वृक्षों और लताओं के एकत्र होने और उनकी डालियों के मिलजाने से स्थान स्थान पर सुन्दर सुन्दर रमणीक गृह बनगये थे जिनमें

सूर्य की किरण प्रवेश नहीं कर सकती थी। बड़े बड़े ऋषि लोग मन्त्र पढ़ पढ़कर होम कर रहे थे और अग्नि की ज्वाला मे वृक्षों की पत्तियाँ मलिन हो रही थीं और वायु होमगन्धमय होकर धीरेधीरे बह रही थी। सब मुनिकुमार, कोई तो उच्च स्वर से वेद पढ़ रहे थे और कोई शान्तिभाव से धर्मशास्त्र पढ़ रहे थे।

२ वृक्षों की शाखाओं में मुनियों की छालाएँ कमण्डल और मालाएँ लटक रही थीं और नीचे बैठने केलिये वेदियाँ बनी थीं, मानों सब वृक्ष भी तपस्वी का वेष धारण करके तपस्या करते थे।

३. तपोवन को देखकर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ। उसके भीतर मैंने देखा कि रक्तपल्लवसम्पन्न रक्ताशोकवृक्ष के नीचे एक पवित्र स्थान में बेंत के आसन पर महातपी जाबालि ऋषि बैठे हैं और उनके आसपास और और मुनि लोग बैठे हैं। जावालि ऋषि बड़े बूढ़े थे और उनके बाल और रोये सब पकगये थे, ललाट में खली पड़गई थी, सिर नीचा होगया था, पञ्जर और मस्तक की हड्डियाँ निकलआई थीं और श्रवणसम्पुट लोम से ढकगये थे।

४ जावालिऋषि की मूर्ति देखने से जानपड़ता था कि वे करुणारस के प्रवाह, क्षमा और सन्तोष के आधार, शान्तिरूपी लता के मूल, क्रोधभुजङ्ग के महामन्त्र, सत्पथदर्शक और सत्स्वभाव के आश्रय हैं। उनको देखकर मेरे मन में एक बेर भय और विस्मय दोनों उत्पन्न हुए और मैने कहा कि इनका कैसा प्रभाव है। इनके प्रभाव से बन में हिंसा, द्वेष, वैर और मात्सर्य आदि का नाम भी नहीं है। हिरन के बच्चे सिंह के बच्चों के संग सिंहनी का दूध पीते हैं। हाथी और

सिंह परस्पर प्रेम से खेल रहे हैं। मृग सब धीरचित्त होकर शृगाल के सङ्ग चर रहे हैं और सूखे वृक्ष भी कुसुमित हो रहे हैं, मानो सत्ययुग कलियुग के भय से भाग कर इसी तपोवन में आछिपा है।

५. देवार्चन का समय होगया था। ऋषि और मुनिकुमार सब स्नान, पूजा आदि कर्मों में नियुक्त हुए। अब सन्ध्या होगई। मुनिकुमारों ने रक्तचन्दन से अर्घ्य दिया था। वह उनके अङ्ग में लगकर कैसी शोभा देता था जैसे लोहितवर्ण सूर्य। मुनि सब हाथ बाँधकर सन्ध्यावन्दन करनेलगे। कामधेनु के दुहे जाने का शब्द चारों ओर सुनाई देनेलगा। हरी हरी कुशा अग्निहोत्रवेदी पर बिछाईगई।

बा० गदाधरसिंह।

ताजमहल (The Tag Mahal).

१. परिचय। २. बनने का कारण और निर्माण। ३ दृश्य—बाहरी और भीतरी ४ उपसंहार।

१. जगद्विख्यात समाधिमन्दिर ताजमहल को सारा पठित समाज जानता है। यह आगरे में यमुना नदी के तट पर एक उद्यान के बीच में स्थित है। इसे मुग़ल सम्राट् शाहजहाँ ने अपनी प्यारी पटरानी मुमताजमहल की समाधि पर बनवाया है।

२ एक दिन मुमताजमहल ने अपने पति शाहजहाँ से प्रेममय शब्दों में पूछा—“मेरी मृत्यु के पश्चात् मेरे नाम को आप याद रक्खेंगे?” सम्राट् ने उत्तर दिया—“मैं तेरे नाम को चिरस्मरणीय कर दूँगा।” जब वह मरनेलगी, सम्राट् को उपर्युक्त प्रतिज्ञा को पूर्ण करने केलिये कहगई। ताजमहल सम्राट् की इसी प्रतिज्ञा का फल है। यह लाल और संगमर्मर

इत्यादि बहुमूल्य पत्थरों से बनवायागया है। इसका बनना १६३१ ई० में आरम्भ हुआ। २०००० कारीगरोंके कठिन परिश्रम से १७ वर्षों में यह तैयार हुआ।

३. 'ताजमहल' के दर्शन तो दूर से ही होनेलगते हैं, परन्तु ज्योंही फाटक के समीप जाइये, वह आपको सुन्दरता की बानगी देदेगा। भीतर पैठिये और उद्यान की शोभा देख मुग्ध हो रहिये। वृक्षों की सजावट कुछ अजब ही ढंग की मिलेगी। बीच में १८६ वर्गफीट का चबूतरा, सो भी संगमर्मर का-चारों कोनों पर चार मिनारें और बीच में ताज लिये आपको दर्शनीय वस्तुओं के देखने की साध को मिटादेगा। यदि आप चांदनी रात में जायँ और इस अनुपम दृश्य को देखें तो, हम सचमुच कहते हैं, आप अपने को भूल जाइयेगा।

चबूतरे पर चढ़िये, चुपचाप भीतर चलिये और कारीगरों की कारीगरी पर लट्टू हो रहिये। दीवारों की दस्तकारी और पच्चीकारी के काम आपके मन को आश्चर्य में डालदेंगे। चारों बगल संगमर्मर के चार दालान हैं, उनके भी दर्शन कर लीजिये। प्रत्येक दालान में बहुमूल्य पत्थरों के बने स्वाभाविक अपने अपने रूप रंग के फूलों और पत्तियों से आप धोखे में पड़ जाइयेगा और बोल उठियेगा-"क्या ये सचमुच डंटीदार फूल जड़े हुए हैं।" ताज के भीतर जाइये और "गिरा अनयन नयन बिनु बानी" को चरितार्थ कीजिये। वहाँ मनोहर और नेत्ररञ्जक दृश्यों के बीच मुमताजमहल की समाधि और उसके पासही शाहजहाँ की समाधि देखियेगा। अब आप बाहर चलिये और घूम घूम कर खूब देखिये। साथही आजकल के इंजिनियरों की शेखी और उस समय के कारीगरों की खूबी को सोचते रहिये।

सचमुच, ताजमहल संसार में एक अतुलनीय दृश्य है । बहुतसे पदार्थ हैं जिन्हें दोही एक बार देखने से मन भर-जाता है, किन्तु ताजमहल केलिये यह बात नहीं । आप जब जब देखियेगा सदा नया सौन्दर्य पाते जाइयेगा और नये नये भावों से मन भरताजायगा। कर्नल श्लीमन की पत्नी ने ताजमहल को जब देखा था तब वह दीर्घ निःश्वास के साथ आपही आप बोलउठी-"यदि मेरी समाधि पर भी इस भाँति का मन्दिर बने तो मैं कल ही मरने को तैयार हूँ।"

यद्यपि ताजमहल के बहुतसे बहुमूल्य पत्थर लुटगये हैं, यद्यपि चोरों ने उसमें के जड़े हुए रत्नों और लालों को निकाललिया है, तथापि अब भी उसकी जो शोभा है वह संसार के किसी भी महल में नहीं दीखपड़ती। यह भारतीय कलाकौशल का एक अनुपम आदर्श है ।

पुस्तक (Book).

१. परिचय । २ पुस्तकें कैसे बनी और इनकी बढती कैसे हुई । ३. पुस्तको से लाभ । ४. कैसी पुस्तकें पढीजायँ ? ५ पुस्तके किस प्रकार पढी जायें ?

१ जिस बही के लिखे या छपे हुए अक्षरों की सहायता से अपने या दूसरे का मनोगत भाव-चाहे वह आधुनिक हो या प्राचीन-जान सके या जना सकें उसीको पुस्तक कहते हैं।

२. मनुष्य की सृष्टि की बढ़ती के साथ साथ मनुष्यों को बोलने के सिवाय अपने विचार भिन्न भिन्न प्रकार से प्रकाशित करने की आवश्यकता हुई, इसलिये अक्षर बनायेगये और लिखने की प्रथा चली । मनुष्य आवश्यकतानुसार अपने विचार दूसरों के पास लिख लिख कर भेजनेलगे। जैसे जैसे सभ्यता बढ़तीगई वैसे वैसे पुस्तकें भी बननेलगीं।

प्राचीन समय में जो पुस्तकें बनती थीं वे तालपत्र या भोजपत्र पर लिखी जाती थीं और बड़ी कठिनता से लिख-लिख कर लोग प्रचार करते थे। जब से कागज बननेलगा और छापे का आविष्कार हुआ तब से पुस्तकों के प्रचार में दिनों दिन उन्नति होती जारही है। अब तो पुस्तकें इतनी सुलभ हो रहीं हैं कि क्या धनी क्या निर्धन सभी खरीद कर पढ़ने लगे हैं।

३. हम दूसरे देशों में रहनेवाले अथवा मरे हुए सज्जनों से भेंट नहीं कर सकते हैं, परन्तु उनकी सत्संगति पुस्तकों के सहारे हमें प्राप्त होती रहती है। जब हम एकान्त मेंमें बैठे हुए पुस्तकें पढ़ते हैं तब कभी हँसपड़ते हैं, कभी मुसकुरा-उठते हैं। अनेक प्रकार के भावों से हमारा हृदय गद्गद् हो-जाता है। सचमुच शांति प्राप्त करने की सब से उत्तम औषध पुस्तक ही है। यदि पुस्तकें न होतीं तो बहुतसे देश-हितैषी महात्मा और विद्वान्–जो कैद होगये थे–कैद ही में मरजाते।

पुस्तकों में बुद्धिमान् लोगों की विचारी हुई अच्छी अच्छी बातें रहती हैं जिन्हें जानकर हम विद्या की आशातीत उन्नति कर सकते हैं। यदि पुस्तकें न होतीं तो हम अपने पूर्वजों का वृत्तान्त कुछ भी नहीं जानसकते। देखिये, रामायण ने हमारी कितनी भलाई की है! यदि यह न होती तो मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र जी के विषय में हमलोगों को इतना अधिक ज्ञान नहीं होता और न अपने चरित्र केलिये उनको आदर्श बनासकते।

पुस्तकें संसार में अपने बनानेवालों के नाम अमर कर जाती हैं। देखिये 'शकुन्तला' इत्यादि पुस्तकों ही के कारण

भारत ही क्या, सारा संसार कालिदास को जानता है। पुस्तकों से जो लाभ हुए हैं और हो रहे हैं, वे लाख प्रयत्न करने पर भी और साधनों से नहीं प्राप्त हो सकते। "कीर्तिरक्षरसम्बद्धा स्थिरा भवति भूतले।"

४. वर्तमान समय में भिन्नभिन्न विषयों पर इतनी अधिक पुस्तकें मिलती हैं कि यदि एक मनुष्य सबों को पढ़ना चाहे तो यह एकदम असम्भव होगा। इसके अतिरिक्त बहुत सी पुस्तकें ऐसी बुरी लिखीगई हैं कि जिनके पढ़ने से चरित्र पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है। अतः, पुस्तकों के चुनने में बड़ी बुद्धिमानी की आवश्यकता है। जब तुम पुस्तकें पढ़ना चाहो तब अपने से बड़े पुरुषों की सम्मति लेलो। वे तुमको ऐसी अच्छी अच्छी पुस्तकें बतादेंगे, जिनसे लाभ अधिक हो और समय कम लगे।

५ प्रत्येक पुस्तक सोच समझकर पढ़नी चाहिये। एक एक अध्याय पढ़कर पुस्तक बन्द करदो और उसके तत्व को सोचो। यदि कोई बात नोट करने योग्य हो तो उसे नोटबुक पर लिख लिया करो। इस प्रकार पढ़ने से तुम्हारी योग्यता बढ़तीजायगी। जो मनुष्य कोरा एक ही विषय जानता है उस की विद्या पूरी नहीं होती और वह प्रकृति को ठीक दृष्टि से नहीं देख सकता, लेकिन सब विषयों की कचाई इससे भी अधिक बुरी है। एक विद्वान् का कथन है कि कम से कम एक विषय की पूरी जानकारी के साथ अन्य विषयों की भी थोड़ी थोड़ी जानकारी रखनी चाहिये। अतः, भिन्न भिन्न विषयों की पुस्तकें इस ढंग से पढ़ो कि उनके विषय में तुम्हारी जानकारी उचित परिमाण से बढ़तीजाय।

यही विनय त्रिभुवन के स्वामी। हे जगदीश्वर अन्तर्यामी।
कबहुँ न होवे मुझ से न्यारी। मेरी पुस्तक प्राणप्यारी॥

लोहा (Iron)

१. परिचय। २ प्राप्तिस्थान। ३ खान मे लोहे की अवस्था। ४. लोहे के प्रकार। ५. किस लोहे से कौन कौन पदार्थ बनते है? ६ उपकार। ७ उपसंहार।

१ सभ्यसमाज में ढूँढ़ने से कदाचित् ही कोई अज्ञ का पुतला मिलेगा जो लोहे से परिचित न हो। यह धातुओं में सब से अधिक प्रयोजनीय धातु है। लोहा कठिन, धूसरवर्ण और पानी से प्रायः ८ गुणा भारी होता है। लोहे में वायु के संयोग से मुर्चा लगजाता है।

२. लोहा पृथ्वी के सभी भागों में किसी न किसी परिमाण से पायाजाता है, परन्तु इंगलैंड, फ्रांस, स्वीडन और अमेरिका में यह प्रचुर परिमाण से मिलता है। बिहार के मयूरभञ्ज राज्य मे भी इसकी खानें हैं, इन खानों पर ताताकम्पनी का अधिकार है।

३. चाँदी या सोना तो खान में विशुद्ध अवस्था मे रहता है, परन्तु लोहा विशुद्ध अवस्था मे नहीं पायाजाता। खान में लोहे के साथ भिन्नभिन्न धातु और कई वायवीय पदार्थ मिलेरहते हैं। लोहा आग की आँच से विशुद्ध बनायाजाता है।

४. लोहे के तीन प्रकार हैं-गलायाहुआ लोहा (cast Iron), पीटा हुआ लोहा (wrought Iron) और इस्पात (steel)

'गलायाहुआ लोहा' विशुद्ध लोहे की पहली अवस्था है। खान से निकलेहुए लोहे को आग सहनेवाले धातु की भट्ठी में कोयले और काठ के साथ गलाते हैं। भट्ठी में दो छेद होते हैं-एक कुछ ऊपर और एक नीचे। जब

पूरी गर्मी पहुँचती है तब तरल पदार्थ के रूप में नीचे के छेद से एक प्रकार का लोहा निकलआता है। यही गलाया हुआ लोहा है। यह लोहा पूर्ण विशुद्ध नहीं होता, इस में अंगार इत्यादि पदार्थ कुछकुछ मिलेरहते हैं जिससे यह अधिक चोट में टूक-टूक होजाता है।

पीटाहुआ लोहा विशुद्ध लोहे की दूसरी अवस्था है। गलाये हुए लोहे को यन्त्र द्वारा फिर से गलाकर उसमें के अंगार इत्यादि पदार्थों को निकालदेते हैं और इसके पीछे आग में धिपाकर पीटदेते है तब वह पीटा हुआ लोहा होजाता है। यह लोहा दृढ़ और कठिन नहीं होता।

उत्तम पीटेहुए लोहे को दीर्घकाल तक गर्म करके उसी अवस्था मे शीतल जल या तेल में डुबाने से इस्पात नाम का लोहा बनता है। यह लोहा विशेष दृढ़ और कठिन होता है।

५ गलाये हुए लोहे से कड़ाह, पहिये, बटखरे, सहतीर इत्यादि ढलुए पदार्थ पीटेहुए लोहे से काँटे, तार, खेती करने के औजार इत्यादि और इस्पात से छुरी, बन्दुक, तलवार इत्यादि भिन्नभिन्न काम की चीज़ें बनती हैं।

६. लोहे की उपयोगिता का वर्णन नहीं हो सकता। अत्यन्त छोटी सुई से लेकर जहाज इत्यादि बड़ेबड़े पदार्थ लोहे की सहायता से बनते हैं। वस्त्र बनाना, खेती करना, घर बनाना इत्यादि सभी कार्यों मे लोहे की बड़ी आवश्यकता है। लोग सोने-चांदी को बहुमूल्य समझते हैं। हमारे जानते यह बात ठीक नहीं। यदि सोना चांदी नहीं मिले तो हमारी कोई विशेष हानि नहीं, परन्तु लोहे के नहीं रहने से सारा सभ्य संसार अपनी सभ्यता से हाथ धोबैठेगा। सचमुच, लोहे के साथ सभ्यता का बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्राचीन

काल में जब तक लोहा नहीं जानागया था, लोग असभ्य थे।

यह लोहे ही का प्रभाव है कि हमलोग महीनों की राह दिनों में और दिनों की राह घंटों में तै करते हैं। यह लोहा ही है कि लोहा बजाकर शत्रुओं से अपनी रक्षा करते हैं। यह लोहे ही की महिमा है कि विदेशी, शिल्प और व्यापार द्वारा अपने देश को लक्ष्मी का भण्डार बनारहे हैं। जैसे जैसे विज्ञान की उन्नति होतीजाती है लोहे की उपयोगिता के प्रभाव से सांसारिक समृद्धि भी बढ़तीजाती है।

लोहा रक्तवर्द्धक है। जिसके शरीर में रक्त का ह्रास हो जाता है, उसके लिये हमारा आयुर्वेद शास्त्र लौह घटित औषधि की व्यवस्था करता है।

७ हमारा भारत प्राचीनकाल से लोहेका उपयोग जानता है। जिस समय अन्य देश असभ्य थे उस समय भी हमारा देश लौहशिल्प में ख्याति पाचुका था। सैकड़ों वर्ष पहले के बने भुवनेश्वर और कनारा के मन्दिरों में लोहे की कड़ियाँ और दिल्ली में कुतुबमिनार के समीप का लौह-स्तम्भ इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। अभीतक उनको मूर्चे ने कुछ भी हानि नहीं पहुँचाई।

भारत में बहुत दिनों से लौहशिल्प मृतप्राय होगया था। यह आनन्द की बात है कि जमसदपुर में ताता कम्पनी ने एक बड़ा कारखाना खोला है। लोहे का ऐसा बड़ा कारखाना एशिया में कहीं नहीं है।

नमक (Salt).

१. परिचय । २ प्रकार। ३. अम्बुज लवण—प्राप्तिस्थान। ४. खानिज लवण—प्राप्तिस्थान। ५. उपकार। ६. कई देशों में नमक का बड़ा आदर। ७ उपसहार।

लवण बिना बहु व्यञ्जन जैसे।

१. नमक को सभी जानते हैं, क्योंकि भोजनसामग्री में इसका सर्वदा प्रयोजन होता है। इसका स्वाद तीव्र और अतृप्तिकर है। हमलोग चावल का, पश्चिमवाले गेहूँ जौ का और शीतप्रधान देशवाले मांस का आदर करते हैं, परन्तु नमक का आदर सभी करते हैं। इसके बिना भोजन में स्वाद आता ही नहीं।

नमक दानेदार और उजला होता है, परन्तु कोई नमक काला और कोई लाल उजला मिलाहुआ भी होता है। नमक अतिशय द्रवणीय पदार्थ है। ज्योंही वह जल या जलीयवायु से संयोग पाता है, पिघलपड़ता है।

२ नमक साधारणतः दो प्रकार से संग्रह कियाजाता है। कुछ नमक समुद्र, झील इत्यादि के नमकीन जल से पाते हैं और कुछ खानों से मिलता है। समुद्रवाले नमक को अम्बुज और खानवाले को खनिज लवण कहते हैं।

३. अम्बुज लवण-नमकीन झील और समुद्र इत्यादि के नमकीन जल को कड़ाह में औंटकर जल उड़ादेते हैं और नमक उसमें बचजाता है। फिर उसमें स्वच्छ जल देकर फिर से औंटते हैं जिसमें वह साफ होजाता है। ऐसा नमक हमारे यहाँ पहले बहुत ही अधिक बनता था। अभी भी राजपुताने में सांभर झील से और मेदनीपुर तथा उड़ीसा प्रान्त के कई स्थानों में समुद्र से कुछ कुछ तैयार होता है, परन्तु लिवरपूल इत्यादि यूरोप के कई स्थानों में यह कलों से बनायाजाता है।

४. खनिज लवण-इस नमक के बीट, खड़िया, सेंधा इत्यादि कई भेद हैं। भिन्नभिन्न प्रकार के नमक भिन्नभिन्न

खानों में मिलते हैं । इंगलैंड, इटली, पोलैंड और पंजाब इत्यादि में इनकी बहुत खानें हैं । इनमें पोलैंड की खान जगत्-प्रसिद्ध है । वैज्ञानिकों का कहना है कि केवल पोलैंड का पहाड संसार को सैकडों वर्ष तक नमक देगा और तिसपर भी उसमें कमी नहीं होगी । पोलैंडवालों ने उसी पहाड़ को काटकाटकर अपने अच्छे अच्छे मकान और मन्दिर इत्यादि बनालिये हैं । वे जब अपने घरों में दीप बालते हैं तब उनसे एक अनिर्वचनीय शोभा निकलपड़ती है ।

५. नमक एक उत्तम रस है । यह हमारे भोजन के स्वाद को सुधारता है । जिस व्यञ्जन में नमक नहीं पड़ता वह किसी को पसंद नहीं आता । ठीक है, लवण बिना बहुव्यंजन जैसे । नमक रक्तवर्द्धक है और यह पाचनशक्ति का बढ़ाता है । वीट नमक दवा के काम में आता है । कई नमकों के मिलाने से 'पाचक' बनता है । जो पदार्थ नमक में रक्खाजाता है वह जल्दी नहीं बिगड़ता । यही कारण है कि विदेशी, मछली, मांस इत्यादि को बहुत दिनों तक नमक में रखते हैं ।

६. हमारे भारत में नमक बहुत ही सुलभ है, परन्तु अफ्रिका, अरब और अबिसीनिया इत्यादि देशों में इसका मूल्य और आदर अधिक है । अरब और अबिसीनिया-निवासी जब अपने बन्धुबान्धवों से मिलते हैं तब नमक और नमक के शरबत से उनका आदर कियाजाता है । अरब-वाले जल्दी किसी का नमक नहीं खाते और यदि खाते भी हैं तो उसकी सहायता जीजान से करते हैं । 'नमक का सरियत देना'-हमारे यहाँ की यह कहावत भी ऊपर्युक्त बात को पुष्ट करती है । 'नमकहराम' और 'नमकहलाल' शब्द भी उन्हीं के हैं । अफ्रिकावाले अपने पास सदा नमक रक्खा

करते हैं और सूर्य की गर्मी से जब उनके मुँह सूखजाते हैं तब चाटलियाकरते हैं।

७. हमारे देश में नमक बनाने का अधिकार अंगरेज़ी सरकार के हाथ में है। बिना उनकी आज्ञा से कोई नमक नहीं बनासकता, नहीं तो दण्ड का भागी होता है। यहाँ 'नोनिया जाति' बसती है, जिससे यह प्रमाणित होता है कि भारत में नमक बहुत दिनों से बनता चलाआया है।

पत्थर कोयला (Coal).

१. परिचय। २ प्राप्तिस्थान। ३ खान मे कोयले की स्थिति और आकार। ४ कोयला पहले क्या था? ५. कोयला कैसे निकालाजाता है? उत्पात। ६. उपकार। ७ उपसंहार।

१. पत्थर कोयला एक प्रकार का खनिज पदार्थ है।

२. पत्थर कोयले की खानें प्रायः संसार के सभी देशों मे हैं। हमारे देश में रानीगंज, आसनसोल, गिरिडीह, और छोटानागपुर के कई स्थानों में कोयले की खानें बहुत हैं।

३ कहीं तो थोड़ी मिट्टी के नीचे कोयला मिलजाता है और कहीं १००—२०० गज नीचे खोदने की आवश्यकता होती है। कोयले का स्तम्भ देखने में बड़ा सुन्दर पत्थर के समान कठिन और खूब काला होता है। खान में यह स्तम्भ बहुत दूर तक एक समान से नहीं रहता। कुछ दूर तक थोड़ी ही मिट्टी के नीचे, फिर कुछ दूर तक और नीचे की ओर और अन्त में बहुत ही नीचे तक चलाजाता है। कोयले के स्तम्भों के साथ साथ दूसरे दूसरे धातुओं की भी खानें होती हैं, इससे कोयला निकालने में बड़ी असुविधा होती है। यदि स्तम्भों का समूह बहुत दूर तक समानभाव से फैला रहा तो कोयला निकालने में विशेष अड़चन नहीं होती।

४. "भूतत्त्ववित् पण्डितों ने स्थिर किया है कि भूकम्प इत्यादि नैसर्गिक घटनाओं के द्वारा अत्यन्त प्राचीन समय में पृथ्वी के अन्य अंशों के साथ कई वनमय प्रदेश गर्भ में चले-गये हैं। उन्हीं वनों के पौधे इत्यादि अब कोयला होकर निकलरहे हैं। कोई कोई कहते हैं कि उस प्राचीन समय के, जीवजन्तु भी कोयला होगये हैं।" खानों से वृक्षों और जीवजन्तु के रूपों में कोयले के स्तम्भों का निकलना ऊपर्युक्त युक्तियों का पोषक है।

५. अमुकस्थान में कोयले की खान है या नहीं। इसकी जाँच भूतत्त्ववित् पण्डित करते हैं। भूमि में एक प्रकार का यन्त्र वेधकर स्थान की परीक्षा कीजाती है। यदि थोड़ी मिट्टी के नीचे कोयला मिलगया तो कार्य आरम्भ कियाजाता है। सुरंगें खोदकर सड़कें तैयार कीजाती हैं और स्थान स्थान पर चढ़ने उतरने केलिये सीढ़ियाँ बनाईजाती हैं। साथ ही साथ पानी निकालफेंकने केलिये खाइयाँ भी तैयार की-जाती हैं। ऊपर की भूमि नीचे धस न जाय इस केलिये बीचबीच में कोयले के खम्भे बनादियेजाते हैं। खान इस प्रकार खोदीजाती है कि काम करनेवाले लोग आवश्यकता-नुसार कुछ समय तक उसमें वास भी करें।

खान में घना अंधकार रहता है, क्योंकि वहाँ सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँचता। अतः, कार्य करने केलिये प्रकाश की आवश्यकता होती है। खान में एक प्रकार का दहनशील वाष्प उठता है जो अग्नि के स्पर्शमात्र से जलनेलगता है और समूची खान में आग लगादेता है। इस कारण से बहुत सी खानें और बहुतसी जानें नष्ट होचुकी हैं। एक वैज्ञानिक पण्डित ने एक प्रकार का अद्भुत दीप निकाला है जिससे खान

में प्रकाश भी होता है और ऐसी घटना भी नहीं होनेपाती ।

खान में अग्न्युत्पात की भाँति जलप्लावन भी एक भयङ्कर विपत्ति है । खान में कभी कभी झरना फूटपड़ता है और एकबएक बाढ़ आजाती है । बहुतसी खानें और बहुतसे मनुष्य इस विपत्ति से नष्ट होगये हैं । इस अचानक विपत्ति से बचाने केलिये शिल्पविद्या जाननेवाले एक परिडत ने एक आश्चर्यजनक वाष्पयन्त्र निकाला है, जिससे इस प्रकार की घटना में बहुत बड़ी सहायता मिलरही है । आशा है, शिल्प और विज्ञान की उन्नति के साथ साथ खान की ऐसी छोटी बड़ी विपत्तियों का बहुत कुछ सामना होतारहेगा ।

६ कोयले से समाज और देश के बहुत ही उपकार हो रहे हैं । वाष्पयन्त्र और जहाज इत्यादि कोयले से चलाये-जाते हैं । सभी कलकारखानों में कोयला इन्धन का काम देता है । यदि कोयला नहीं होता तो संसार के शिल्प सम्बन्धी कलकारखानों का चलना और भाफ से चलनेवाली गाड़ियों का दौड़ना असम्भव होजाता । अब बहुतसे स्थानों में कोयले की आग से रसोई बनाईजाती है ।

७. जो कोयला इतने परिश्रम से निकालाजाता है । जिसके निकालने में बहुतसे मनुष्य अपनी जानों से हाथ धो बैठते हैं और जो हजारों मील दूर पर से आता है वह लकड़ी से भी सस्ता बिकता है । क्यों ? विज्ञान और शिल्प की यह छोटी करतूत है ।

वज्रोत्पात (Thunder storms)

१ परिचय । २ समय और स्थान । ३ उत्पात से पहले का समय । ४. उत्पात । ५. उत्पात का अन्त । ६. उत्पात के पीछे प्रकृतिदर्शन । ७. लाभहानि ।

१ आंधीपानी, बिजलीलौका, गर्जनठनका इत्यादि का साथ साथ प्रकोप वज्रोत्पात के नाम से पुकाराजाता है।

२. यह उत्पात प्रायः वर्षाऋतु में हमारे देश में कभी कभी हुआकरता है, परन्तु बंगाल की खाड़ी के समीप यह बारबार होता है।

३. जिस दिन यह उत्पात होनेवाला रहता है उसके प्रातः काल ही से मेघों की गति में तीव्रता दिखाईपड़ती है। रुई के गल्ले सरीखे मेघखण्ड यत्रतत्र आकाश में बिखरते रहते हैं। सूर्य की प्रखर रश्मियों के संयोग से उनसे रंग विरंग की प्रभा निकलकर अपूर्व शोभा दिखलाती है। उत्पात के कुछ पूर्व एक प्रकार की सन्नाटा छाईरहती है, परन्तु वायुमण्डल में उष्णता बढ़जाती है और जीवमात्र का हृदय कुछ व्यग्र जानपड़ता है।

४. वायुमण्डल में ज्योंही उष्णता बढ़ती है कि बादलों के दल के दल उमड़ उमड़ कर क्षितिज के पास घनीभूत होने-लगते हैं। क्षणभर में आकाश काली काली घटाओं से ओतप्रोत होजाता है। ऐसा अन्धकार जानपड़ता है कि पास की वस्तु भी दृष्टिगोचर नहीं होती। ऐसी स्थिति थोड़ी ही देर रहती है कि स्वर्ग टूटपड़ता है और प्रलयकालीन मूशलधार वृष्टि होनेलगती है। साथही ऐसा अन्धड़ झकड़ चलता है कि वह सामने के वृक्षों, घरों इत्यादि को इधर उधर फेंकता हुआ पृथ्वी को मटियामेट करने केलिये कटिबद्ध होजाता है। लोग त्राहि त्राहि कर भगवान् भगवान् गोहरानेलगते हैं। दो दो चार चार सेकंडों के अन्तर पर बिजली ऐसी चमकती है कि ज्ञात होता है कि समग्र भूमि जलउठी और अग्नि की लपटें आकाश तक लपकचलीं।

बादलों की गड़गड़ाहट प्रतिध्वनित हो हो कर ऐसा अकथनीय दीर्घकालव्यापी नाद करती है कि मानो देवराज इन्द्र पृथ्वी को छिन्नभिन्न कर बलि का ध्वंस करेंगे। इसके बन्द होने पर भी कुछ काल तक कानों की श्रवणशक्ति स्तब्ध रहती है। बादलों का ठनाका तो बन्द होता ही नहीं, विदित होता है कि सभी पदार्थों को चूर्णचूर्ण कर ही के शान्त होगा। मारे भय से रक्त ठण्ढा पड़जाता है, रोमांच होजाते हैं।

५. कुछ काल के अनन्तर जब ईश्वर की दया होती है तब यह भीषण प्रलय स्थगित होजाता है, मेघमालाएँ तितर-बितर होकर इधरउधर उड़नेलगती हैं और भगवान् भास्कर त्रिभुवन के मुख उज्ज्वल करदेते हैं।

६. संसारचक्र भी क्या ही विचित्र है। रात्रि के अनन्तर दिन, विपत्ति के अनन्तर सम्पत्ति, विषाद के पश्चात् प्रसाद होता ही है। यह नियम सर्वत्र ही देखने में आता है। इसी नियम के अनुसार वज्रोत्पात के कारण जहाँ पहले भीषणता रहती है वहाँ पीछे प्रसन्नता ही प्रसन्नता दिखाईदेती है। जलस्नाता प्रकृतिदेवी अपूर्व छटा दर्शादेती है। वनपर्वत जलावगाहन कर हरियाली से लहलहानेलगते हैं। जल-बिन्दु चूते हुए लाल, हरे और श्यामवर्ण कोमल पल्लवों पर सूर्यबिम्ब प्रकाश को सहस्रगुणित करदेता है। कहीं कहीं स्वच्छ लहलहाते दूर्वादलों का हरा फ़र्श देख जी आनन्द से उमडनेलगता है। पक्षियों की चहक, कोयलों की कूक और पपीहों की पीक आदि सुश्रव शब्दों से मानो सारी प्रकृति भगवान् का गुणानुवाद गानेलगती है। सुस्निग्ध समीर से थोड़े ही पहले का, भीत कम्पित कलेवर का खेद प्रशान्त होजाता है। यदि सूर्यास्त का समय हो तो

सारी प्रकृति लाल साड़ी धारण किये रहती है। किरणों के संयोग से मेघ ऐसे रक्तवर्ण होजाते हैं कि मानो युद्धक्षेत्र से क्षतविक्षत योद्धा लहू में लिथड़ेफिथड़े प्रत्यावर्त्तन कर-रहे हों। आहा! उस समय का सुन्दर दृश्य अवर्णनीय है।

७. वज्रोत्पात से उपकार अल्प और अपकार बहुत ही होते हैं। घर और वृक्ष नष्ट हो जाते हैं। खेत के पौधों और फलों में हानि होती है। जीवों के प्राण जाते हैं। नदियों में नावों की और समुद्र में जहाजों की बुरी गत होती है। चारों ओर हाहाकार मचजाता है। भगवान्, ऐसी आपत्तियों से बचावें!

उल्का (Meteor or Shooting-star).

१ उल्का। २. उल्का का गिरना। ३ कौन उल्का पृथ्वी तक पहुँचती है? ४. उल्काओं की परीक्षा। ५. उपसंहार।

१. रात को जब आकाश निर्मल रहता है तब कभी कभी एकआध तारा टूटकर पृथ्वी की ओर आताहुआ दिखलाई देता है। ऐसे तारे को उल्का कहते हैं।

२. जितने ग्रह और उपग्रह हैं, उनके सिवाय अनेक उल्काएँ आकाश में फिराकरती हैं। आकाश में नये नये ग्रह उत्पन्न हुआकरते हैं और पुराने ग्रह टुकड़े टुकड़े होकर नष्ट होजायाकरते हैं। जो ग्रह टूटजाते हैं उनके असंख्य टुकड़े आकाश में सूर्य की चारों ओर ग्रहों के समान घूमा-करते हैं। ये टुकड़े एक प्रकार के पत्थर हैं। जब पृथ्वी अपनी कक्षा पर घूमतीहुई इन पत्थरों के पास पहुँचती है तब उसकी खिंचावट से ये पत्थर उसकी ओर खिंचआते हैं और कभी कभी बड़े शब्द के साथ पृथ्वी पर गिरते हैं। इन्हीं के गिरने का नाम उल्कापात है।

३. आकाश से अनेक उल्कापात हुआकरते हैं, परन्तु सब उल्काएँ पृथ्वी तक नहीं पहुँचतीं। यदि वे सब पहुँचतीं तो मनुष्यों को अनेक हानियाँ सहनीपड़तीं। वायुमण्डल से पृथ्वी घिरीहुई है। पृथ्वी से प्रायः २०० मील की उँचाई तक वायु है। पृथ्वी के पास वायु बहुत घनी है, परन्तु जैसे जैसे वह दूर होतीगई है, वैसे वैसे पतली भी होतीगई है। आकाश में फिरनेवाली उल्काओं के निकट जब पृथ्वी पहुँचती है तब अपनी आकर्षणशक्ति से वह उन्हें खींचनेलगती है। जब वे पृथ्वी की ओर खिंचाकर गिरती हैं तब वायुमण्डल तक बड़े वेग से चलीआती हैं। वायुमण्डल में आकर उनकी गति कम होजाती है, क्योंकि वे वायु से रगड़ खाती हुई आगे को बढ़ती हैं। इसी रगड़ के कारण उनमें आग उत्पन्न होजाती है और वे इतनी तपजाती हैं कि पृथ्वी पर पहुँचने के पहले ही उनकी भाफ होजाती है। यदि कोई उल्का गलने से बचजाती है तो वह पृथ्वी तक पहुँचती है।

४. उल्काओं की परीक्षा से जानागया है कि उनमें लोहा, तांबा और कोयला इत्यादि धातु मिलेरहते हैं। उल्काओं का रंग सफेद होता है। कभी कभी उनका रंग पीला और हरापन लियेहुए भी देखागया है।

५. १८५१ ई० में कलकत्ते के पास विष्णुपुर में एक बहुत बड़ी उल्का गिरी थी। वह कलकत्ते में अभीतक रक्खी है। विलायत के अजायबघर में इसके कई टुकड़े रक्खे हैं, उनमें कोई कोई असली असली मन के हैं। सुनते हैं कि जहाँगीर बादशाह की तलवार का दस्ता इसी प्रकार के पत्थर का था।

सूर्य, चन्द्र और तारे ।

(Sun, Moon and Stars).

१. परिचय । २. निशाविश्राम । ३. सूर्य । ४. चन्द्र । ५. तारे । ६ केतु । ७. उपसंहार-लाभ ।

१. सूर्य, चन्द्र और तारों से हम अपरिचित नहीं । दिन भर तो केवल सूर्य ही के दर्शन होते हैं, परन्तु ज्यों ही सूर्यास्त हुआ चान्द्र और तारों से लदे हुए आकाश की छटा आपके सामने आजाती है । मानो रात्रिरूपी कामिनी चमकियों से सुशोभित बनारसी नीली साड़ी पहन अपने मुखचन्द्र से मुसकुराती हुई प्रकृतिवाटिका में टहलने चली है । प्राणियों को ऐसे प्राकृतिक दर्शन मिलें-सचमुच, यह ईश्वर की असीम कृपा है

२. हमलोग बचपन में सोचाकरते थे कि हमारी पृथ्वी बहुत ही बड़ी और सूर्य, चन्द्र, तारे इत्यादि इससे बहुत ही छोटे हैं, परन्तु वास्तव में यह केवल भूलभुलैयाँ मात्र है । वैज्ञानिकों ने प्रमाणित करदिया है कि जितना स्थान अकेले सूर्य ने घेररक्खा है उतने में १५ लाख पृथ्वी के बराबर पिण्ड आजायँगे । चन्द्र और कुछ अन्य ग्रह पृथ्वी से छोटे तो है, परन्तु उतने छोटे नहीं जितने देखपड़ते हैं । नीचे सूर्य, चन्द्र इत्यादि के संक्षिप्त वर्णन दियेजाते हैं ।

३. सूर्य-पृथ्वीवासियों केलिये सूर्य परमात्मा की सर्व-श्रेष्ठ कृति है । सूर्य एक तारा है । वह, जहाँ तक हमें ज्ञात है, स्वयं किसी पिण्डविशेष की परिक्रमा नहीं करता । सूर्य के साथ उसके परिभ्रमण करनेवाले प्रकाशशून्य अनेक ग्रहादि-पिण्ड हैं । ज्योतिषियों ने पता लगाया है कि कई तारे जो दूरी के कारण बिन्दुओं के सदृश प्रतीत होते हैं, सूर्य से कहीं

बड़े और अधिक प्रकाशवाले हैं। सूर्य का प्रकाश ८⅓ मिनट में पृथ्वी पर प्रति सेकंड ६२००० कोस चलकर पहुँचता है। अतः, सूर्य पृथ्वी से ४ करोड़ ६५ लाख कोस दूर है। सूर्य का आकार भी अद्भुत है, इसका व्यास पृथ्वी के व्यास से १०८ गुणा है, परन्तु यह जितना बडा है, उतना भारी नहीं। सूर्य का भार पृथ्वी के भार का चतुर्थांश है।

अब सूर्य के ताप को देखिये। जब ४ करोड़ ६५ लाख कोस की दूरी पर सूर्य की गर्मी हमको विह्वल करदेती है तब सूर्य के तल पर उसकी क्या दशा होगी!? हम ऐसी गर्मी की कल्पना भी नहीं कर सकते। यही कारण है कि सूर्य पर कोई भी पदार्थ कठिन रूप में नहीं पायाजाता, वहाँ लोहा इत्यादि जितनी वस्तुएँ हैं सब बाष्पावस्था में। इसका प्रकाश भी कुछ कम आश्चर्यजनक नहीं। पृथ्वी पर, जो कि सूर्य से इतनी दूर है, उसके प्रकाश की तीव्रता को देख हम उसकी आदि तीव्रता का कुछ अनुमान कर सकते हैं। किसी किसी ने ऐसा हिसाब लगाया है कि प्रतिक्षण सूर्य से १५३५० शंख बत्तियों के बराबर प्रकाश निकलता है। ये ऐसी संख्याएँ हैं कि मनुष्य की बुद्धि इनके सामने चकराजाती है।

ऋतुपरिवर्तन और रातदिन का होना सूर्य ही की करतूत है। पृथ्वी सूर्य की चारों ओर परिक्रमा करती है। जब वह २४ घंटे में अपनी धूरी पर घूमजाती है तब रातदिन और जब वह ३६५॥ दिन में सूर्य की चारों ओर घूमआती है तब भिन्नभिन्न ऋतुओं से मिला हुआ वर्ष बनता है।

४ चन्द्र–चन्द्रमा की ओर देखने से हमारी दृष्टि पहले उसके काले धब्बों पर पड़ती है। ये धब्बे क्या हैं? हम में से बहुतों ने वृद्धा स्त्रियों के मुख से सुनाहोगा कि चन्द्रमा

में एक स्त्री बैठी चर्खा कातरही है । कोई इन धब्बों को चन्द्रमा के दुष्कर्मों का फल बतलाता है । विज्ञान इस प्रश्न का और ही उत्तर देता है । उसका कथन है कि चन्द्रमा पर जो बड़ेबड़े काले धब्बे दीखपड़ते हैं, वे पहाड़ हैं । इन पहाड़ों में अधिकांश ज्वालामुखी हैं, परन्तु अब इनमें से अग्नि नहीं निकलती । चन्द्रमा पर जल नहीं है, सूखी नदियाँ और झीलें पड़ी हैं । चन्द्रमा वस्तुतः मृत जगत् है । यह सम्भव ही नहीं, किन्तु निश्चितप्राय है कि किसी समय हमारी पृथ्वी की भाँति उस पर भी वृक्ष, पशु, पक्षी आदि रहेहोंगे । किसी प्रकार के मनुष्यतुल्य प्राणियों का होना भी असम्भव नहीं है, पर अब वे दिन गये । अब चन्द्रमा शुष्क और वायुहीन है, उस पर जीव रह नहीं सकते । कम से कम जैसे जीवों से हम इस पृथ्वी पर परिचित हैं, वैसे जीवों का होना असम्भव है । चन्द्रमा का व्यास लगभग दो हजार मील है ।

चन्द्रमा एक उपग्रह है । जिस प्रकार पृथ्वी सूर्य की चारों ओर घूमती है, उसी प्रकार चन्द्रमा पृथ्वी की चारों ओर घूमता है । इस घूमने में उसे लगभग २७॥ दिन लगते हैं । चन्द्रमा के पृथ्वी की चारों ओर घूमने के कारण ही ग्रहण लगाकरते हैं । जब चन्द्रमा घूमतेघूमते पृथ्वी और सूर्य के बीच में इस प्रकार आजाता है कि सूर्य का प्रकाश पृथ्वी तक नहीं पहुँचता, तब सूर्यग्रहण लगता है । इसी प्रकार जब पृथ्वी सूर्य और चन्द्रमा के बीच में पड़कर सूर्य के प्रकाश को चन्द्रमा पर नहीं पहुँचनेदेती तब चन्द्रग्रहण लगता है । हम-लोग सूर्यग्रहण अमावस्या को और चन्द्रग्रहण पूर्णिमा को देखते हैं ।

५. तारे—आकाश में इतने तारे हैं कि गिन नहीं सकते। इनमें जो स्थान बदलने है वे ग्रह हैं। वे सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं और उसी की चारों ओर घूमतेरहते हैं। बुध, शुक्र, पृथ्वी, मङ्गल, बृहस्पति, शनिश्चर, युरेनस और नेपचुन मुख्य ग्रह हैं। बहुतसे तारे ऐसे है जो जगह नहीं बदलते। ये स्वयं एकएक सूर्य है और दूर रहने के कारण छोटे दीखपड़ते हैं।

आकाश में बहुतसे तारे एकएक झुंड में देखपड़ते हैं। ऐसे झुंड के सब तारे आपस में एक दूसरे से निश्चित दूरी पर रहते हैं। यदि एक झुंड के तारों को लकीरों से मिलादो तो जो आकार बनेगा वह भ्रमण के समय में कभी नहीं बदलेगा। ऐसे तारे नक्षत्र कहलाते हैं और एकएक झुंड को नक्षत्रराशि कहते है। बहुतसी नक्षत्रराशियों में सप्तर्षि, आकाशगंगा, मृगशिरा, लुब्धक, छोटा कुत्ता, वृषभ, कचपचिया और मिथुन मुख्य हैं।

६. केतु (पुच्छलतारा)—केतु भी भ्रमण करनेवाले तारे हैं। ये झाडू के समान दीखपडते हैं। किसी में एक, किसी में दो और किसी में कई पूछें होती हैं। एक समय था जब लोग इन केतुओं को देखकर डरजायाकरते थे। अब भी ससार के सभी देशों में करोड़ों ऐसे मनुष्य है, जिनका विश्वास है कि जब केतु का उदय होता है तब ससार में कोई न कोई दुर्घटना अवश्य होती है। मैं नहीं कह सकता कि फलित ज्योतिष की इस विषय में क्या सम्मति है? पर अब वह समय गया जब दसबीस वर्ष में कहीं एक केतु मिलजायाकरता था। अब तो यन्त्रों की सहायता से प्रतिवर्ष बहुत से केतु देखपड़ते हैं। इन के प्रभाव से क्याक्या

घटनाएँ होती हैं, यह कहना कठिन है। ऐसा कदाचित् ही कोई व्यक्ति होगा जो इनको देखकर आश्चर्य से न भर-जाता हो। विद्वान् और मूर्ख सभी इस दृग्विषय को देख-कर स्तब्ध होजाते हैं और इसके अतुल सौंदर्य और महत्ता से मुग्ध हो ईश्वर की रचना का बखान करते हैं।

७. लोग कहते हैं इस प्रकृति की सभी वस्तुएँ प्राणियों के लाभ की हैं, परन्तु यह हमारी समझ के बाहर है कि ईश्वर ने किस पदार्थ को किस कार्य केलिये बनाया। सूर्य, चान्द, तारे सभी हमारे लाभ के हैं। इनके लाभों का अनुभव हमें प्रतिदिन होतारहता है, परन्तु ऐसा विश्वास कियाजाता है कि केतु हानिकारक है।

दुर्गापूजा (The Durga Puja).

विजयादशमी।

१. परिचय। २. समय और उत्पत्ति। ३. तातील और व्यापार। ४ प्रतिमानिर्म्माण और कारण। ५ पूजन और विसर्जन। ६ विजयादशमी और रामलीला। ७. उपसहार।

१ हमारे भारत में पूजाओं और पर्वों का अन्त नहीं। कदाचित् ही कोई महीना ऐसा है जिसमें कोई पूजा या कोई पर्व न पड़ता हो। जिस प्रकार अंगरेजों में 'बड़ा दिन' और मुसलमानों में 'मुहर्रम' नामक प्रसिद्ध उत्सव हैं उसी प्रकार दुर्गापूजा-विजयादशमी हिन्दुओं का सर्वप्रधान महोत्सव है।

२. यह महोत्सव प्रतिवर्ष दो बार मनायाजाता है। जो पूजा वसंतऋतु के चैत्रमास में होती है उसे वासन्ती पूजा कहते हैं। प्राचीनकाल में सुरथराजा ने दुर्दान्त दानवों के अत्याचार को दमन करने केलिये प्रीति के साथ दुर्गाजी की

बासन्ती पूजा की थी। उसी समय से इस पूजा की रीति चली है। जो पूजा शरद्काल में आश्विन में होती है उसे शारदी पूजा कहते हैं। त्रेतायुग में रामजी ने रावण पर विजय पाने की इच्छा से दुर्गादेवी की शारदीपूजा की थी। उसी समय से यह पूजा प्रचलित है। इस समय शारदी पूजा की प्रधानता है।

३. हमारे यहाँ दुर्गापूजा की छुट्टी सभी कचहरियों, कालेजों और स्कूलों में होती है। ज्योंज्यों पूजा का दिन समीप आता है, प्रवासवाले सभी घर जाने की धुन में लग-जाते हैं। जाने की चर्चा बारबार हुआकरती है। लोग अपने और अपने परिवार केलिये नयेनये वस्त्र खरीदते और नयेनये पदार्थ संग्रह करते हैं। इस समय बाजार गर्म रहता है। कपड़ेवालों की अच्छी बिक्री होती है। घरवाले भी अपने स्वजनों से भेंट की प्रतीक्षा करनेलगते हैं। केवल छुट्टी होने तक देरी रहती है। जहाँ छुट्टी हुई कि लोग घर पहुँचे और परस्पर मिलकर आनन्द से पूजा की तैयारी में लगपड़े।

४ इस अवसर पर कहींकहीं–विशेषकर बंगाल में दशभुजी भगवती की प्रतिमा बनाईजाती है। बीच में भगवती की मूर्ति अपने दसों हाथों में दस प्रकार के अस्त्रशस्त्र लिये रहती है और उसका बायाँ चरण महिषासुर के काँधे पर और दाहिना अपने वाहन सिंह पर रहता है। भगवती एक हाथ से महिषासुर को बर्छा मारतीरहती है। भगवती की दाईं ओर लक्ष्मी और बाईं ओर सरस्वती की मूर्तियाँ रहती हैं। लक्ष्मी की दाईं ओर गणेश और सरस्वती की बाईं ओर सेनापति कार्तिकेय रहते हैं। ऊपर की ओर शिवजी की मूर्ति बनती है।

महिषासुर का उल्लेख मार्कण्डेयपुराण में है। जब देवतागण दानवों से, जिनका अगुआ महिषासुर था, सतायेगये तब उन्होंने दुर्गाजी की आराधना की और उन्हें अस्त्रशस्त्र से सुसज्जित किया। भगवती ने दानवों का नाश करदिया। आजकल इसी आधार पर दुर्गाजी की प्रतिमा बनाईजाती है।

५. आश्विन अमावस्या को महालय होता है और शुक्लपक्ष की परिवा को कलशस्थापन के साथ दुर्गापाठ आरम्भ होता है। फिर मूलनक्षत्र में देवी की स्थापना के साथ पूजा आरम्भ होती है। षष्ठी से पूजा आरम्भ होती है। तीन दिन खूब धूमधाम रहती है। बलिप्रदान भी होता है। विजयादशमी को प्रतिमाविसर्जन होता है। लोग धूमधाम और गाजेबाजे के साथ प्रतिमा को किसी नदी या तालाब में विसर्जन करदेते हैं। विसर्जन के बाद सध्या को समाज के सभी लोग द्वेषभाव छोड़कर परस्पर मिलतेजुलते हैं। और नीलकण्ठ के दर्शन करते हैं।

६. इसी दशमी के दिन रामचन्द्रजी ने रावण को नाश करके विजय पाई थी, इसलिये इसे विजयादशमी कहते हैं। इसी आनन्द में अभीतक अवध के आसपास बहुतसे ग्रामों और नगरों में रामलीला होती है और सभी हिन्दू राजा महाराजा अपने दलबल को साजकर विजयादशमी के दिन बाहर निकलते हैं। विजयादशमी का दिन हिन्दुओं केलिये बहुत ही शुभ समझाजाता है। ज़मींदारों का कर उगाहना, व्यापारियों का व्यापार करना, घर बनाने की नीव डालना और किसी के जाने आने की यात्रा इत्यादि शुभ कार्यों का प्रारम्भ विजयादशमी को करना अच्छा समझाजाता है। इस अवसर पर कई मेले लगते हैं, जहाँ मित्रों का परस्पर मिलन होता है।

७ जो कुछ हो, यह हमारा राष्ट्रीय पर्व है। इसमें सभी को सम्मिलित होना चाहिये। जो इससे अलग रहते हैं उन से बढ़कर मनहूस कोई नहीं। बहुतसे मनुष्य तो ऐसे शुभ अवसर पर विदेशयात्रा करते हैं, जो हमारे जानते उचित नहीं। हाँ, यदि स्वास्थ्यलाभ की इच्छा से जाना चाहें, तो हमें कुछ आपत्ति नहीं।

मुहर्रम (Moharram).

१. परिचय। २ समय। ३. उत्पत्ति। ४ वर्णन। ५. हानिलाभ। ६. उपसंहार—हिन्दुओं को भाग लेना।

१. विजयादशमी के समान 'मुहर्रम' मुसलमानों का सर्व-श्रेष्ठ पर्व है। इसे केवल सीया फिर्केवाले मुसलमान मनाते हैं और सुन्नीलोग इस रीति से उत्सव मनाना धर्मविरुद्ध समझते हैं।

२ मुसलमानों के यहाँ समय की गणना चन्द्र के अनुसार है, इसलिये कोई निश्चित महीना नहीं कि कब यह पर्व पड़ेगा, परन्तु हिन्दुओं के महीने के अनुसार हर चौथा पर्व एक महीना पीछे हटकर पड़ता है।

३. मुसलमानी धर्म के प्रवर्त्तक मुहम्मद साहेब की एकमात्र सन्तान फातिमा नाम की कन्या थी जो जहरत अली को व्याहीगई। हजरत अली को हसन और हुसैन नामक दो पुत्र हुए। मुहम्मद साहब के मरने पर क्रमशः हजरत उमर, हजरत उसमान और हजरत अली खलीफा हुए। इसके बाद फूट के कारण हजरत अली के बेटों को गद्दी नहीं मिली, राजधानी मदीने से उठकर दमिश्क को चलीगई तथा अमीर मुआविया और इसके बाद यजीद ख़लीफ़ा बना। इसने हसन को विष देकर मरवाडाला और हुसैन के साथ गहरी लड़ाई

की। यह लड़ाई २० वर्ष तक रही। अन्त में शत्रुओं ने हुसैन को घेरलिया। यह और इसके साथी १० दिनों तक बिना अन्न जल के करबला नामक स्थान में घिरायेरहे। जब प्यास और भूख से व्याकुल होगये तब लड़ाई में आडटे और वीरगति को प्राप्त हुए। मुहर्रम पर्व इसी घटना की याद में मनायाजाता है।

४. मुहर्रम महीने में अमावस्या के बाद जिस दिन चन्द्र-दर्शन होता है उसी दिन से १० दिनों तक यह पर्व मनाया-जाता है। रात को लोग जमा होकर लाठी, गदा, बाना, तलवार इत्यादि लेकर खेलते और हसनहुसैन कहकहकर छाती पीटते हैं। कुछ लोग मर्सिया पढ़ते और कुछ फतेहा करते हैं। हुसैन की याद में बाँस की कमचियों और कागज की ताजिया बनती है। दसवें दिन ताजिया घुमाईजाती है और 'करबला' पर लेजाकर दफ़न करदीजाती है।

इन दस दिनों तक धार्मिक मुसलमान रातरातभर जगकर कुरान पढ़ते हैं। कई स्थानों में शरबत बाँटाजाता है और गरीबों को भोजन दियाजाता है।

सुन्नीलोग भी शोक प्रकाश करते हैं, परन्तु वे ताजिये इत्यादि का अनुचित समझते हैं।

५. पर्व मनाना तो उचित ही है, परन्तु कभी कभी आपस की आनाकानी से दंगाफसाद भी होजायाकरता है। अब यह बात उठरही है और आपस का वर्ताव अच्छा होता-जारहा है।

६. यद्यपि यह पर्व मुसलमानों का है, तथापि हिन्दूलोग भी इस में भाग लेते हैं और कहीं कहीं तो हिन्दुओं ही के द्वारा इसका महत्त्व बढ़गया है। यह मिलन हिन्दूमुसलमान में परस्पर प्रेम का अच्छा उपाय है।

प्रातःकाल ।

१. स्वाभाविकशोभा । २. सूर्योदय के समय-पृथ्वी की अवस्था । ३ प्राणियों की अवस्था । ४ मनुष्यो की मानसिक अवस्था-समय के व्यवहार से लाभहानि ।

१. ' प्रातःकाल ' अतिरमणीय, आह्लादजनक और कार्योपयोगी समय है । इस समय प्रकृति एक अभिनवमूर्ति धारण करती है । शीतल और मन्द प्रभातवायु सुगन्धित पुष्पों का सौरभ लेकर नाना स्थानों में बिकीर्ण करदेती है । फलभार से अवनत वृक्षशाखाओं से शिशिरबिन्दु भूतल पर धीरेधीरे गिरते हैं । पुष्पभारनम्र लतासमूह प्रभातपवन से आन्दोलित होकर मनुष्यों के चित्त को आकर्षित करलेता है ।

२. इस समय पूर्वदिशा में एक अपूर्व शोभा होती है। दिवाकर की किरणों से आकाश लोहित वर्ण धारण करता है । नवोदित सूर्य की किरणों से आकाशमण्डल का अपूर्व सौष्ठव सम्पादित होता है । उच्च वृक्ष और अत्युन्नत पर्वतशृङ्ग स्वर्णरेणुरञ्जित ज्ञात होते हैं । क्रमशः सूर्य्यकिरणों से सारी पृथ्वी प्रकाशित होजाती है और जो स्थान अन्धकारमय थे, वे समुज्ज्वल दीखपड़ते हैं ।

३. इस समय पृथ्वी के समस्त जीव जगपड़ते हैं । वृक्षशाखाओं पर पक्षिगण कलरव से दिवस के आगमन की घोषणा कर सुप्तप्राणियों को जगाने की चेष्टा करते है, तत्पश्चात् नीडों को त्याग आहार अन्वेषण केलिये प्रस्थान करते हैं । वन्यजन्तु निद्रोत्थित हो अपने अपने अभिलषित स्थान को चलपडते हैं । मनुष्यगण शय्या त्याग अपने अपने कार्य में दत्तचित्त होजाते हैं । ग्रामों में कृषक कृषिकार्यों में नियुक्त होते हैं और उनके बालक गौओं को साथ ले बन को जाते

हैं। छात्र भी अपना अपना पाठ मनोयोगपूर्वक पढ़ते हैं।

४ प्रातःकाल में मनुष्य का मन प्रफुल्ल और प्रशान्त रहता है। निशाकाल की निद्रा जीव की श्रान्ति को दूर करती है। प्रातःकाल निद्रा त्यागने पर शरीर में नूतन बल और अन्त करण में नवकार्य्यानुराग सञ्चारित होता है। इस समय भ्रमण करने से अतिशय आनन्द प्राप्त होता है तथा शरीर और मन में प्रफुल्लता और कार्यक्षमता आती है। इस समय किसी को सोना उचित नहीं। समस्त रात्रि जागरण करके प्रातःकाल जो निद्रा में मग्न रहते हैं उन्हें नाना प्रकार के रोग आक्रमण करते हैं और वे अकाल ही में कालकवलित होजाते हैं।

भारत की ऋतुएँ (The Sensons in India)

१ परिचय। २ ऋतुपरिवर्तन का कारण। ३ ग्रीष्म। ४ वर्षा। ५ शरत्। ६. हेमन्त। ७ शीत। ८. वसत। ९ उपसंहार।

१. ग्रीष्म, वर्षा, शरत्, हेमन्त, शीत और वसन्त-ये छः, भारत की ऋतुएँ है. परन्तु अनुभव में इनके बदले ग्रीष्म, वर्षा और शीत-येही तीन ऋतुएँ जानपड़ती है। वैशाख और ज्येष्ठ को ग्रीष्म, आषाढ़ और श्रावण को वर्षा, भादों और आश्विन को शरत्, कार्तिक और अग्रहण को हेमन्त, पौष और माघ को शीत तथा फाल्गुन और चैत्र को वसन्तऋतु कहते है। कार्तिक के अन्त से शीत का कुछकुछ अनुभव होनेलगता है और इसका प्रभाव फाल्गुन के प्रारम्भ तक रहता है। फिर वर्ष के शेषभाग में ग्रीष्म का अनुभव होनेलगता है। वृष्टि के कारण वर्षाऋतु की गणना है. नहीं तो वर्षाकाल में भी ग्रीष्मही का अनुभव होता है। जिस काल में-ग्रीष्म, वर्षा, शरत् इत्यादि में, जिसकी विशेष प्रधानता है उसी के अनुसार भारत की प्रत्येक ऋतु बनी है।

२ ऋतुपरिवर्तन का प्रधान कारण पृथ्वी का सूर्य की चारों ओर अण्डाकार मार्ग से चक्कर लगाना है। ज्योंज्यों पृथ्वी मार्ग में स्थानपरिवर्तन करतीजाती है, ऋतुएँ भी बदलतीजाती हैं। पृथ्वी के घूमने के कारण जब सूर्य उत्तरायण रहता है तब ग्रीष्म और जब दक्षिणायन रहता है तब शीत का आगमन होता है।

३. 'ग्रीष्म'—सभी ऋतुओं में ग्रीष्म अधिक कष्ट देती है। सूर्य अपनी प्रखर किरणों से प्राणियों को व्याकुल करदेता है। दुपहर को घर से बाहर निकलना कठिन होजाता है। लू से आँखें तिरमिराजाती हैं और शरीर झुलसनेलगता है। सभी पौधे मुरझायेहुए जानपडते हैं। कहींकहीं घास तो एकदम सूख ही जाती है। पछैया हवा के झोंकों से धूल उड़ाकरती है, शरीर सूखनेलगता है और प्यास से 'हाय पानी, हाय पानी' करनापड़ता है। वह पानी भी नदी, तालाब इत्यादि में कठिनता से मिलता है। पथिकों की बुरी गत होती है, दुपहर को राह चलना कठिन होजाता है। सभी जीव वैरभाव छोड़कर छाये की खोज में दौड़तेफिरते हैं। बिहारी ने क्याही अच्छा कहा है—

> किहलाने ईकत रहत, अहि मयूर मृग बाघ।
> जगत तपोवन सों कियो, दीरघ दाघ निदाघ ॥१॥
> बैठि रही अति सघनबन, पैठि सदन तन माँहि।
> निरखि दुपहरी जेठ की, छाँहौं चाहत छाँहि ॥२॥ *

* साँप और मोर, मृग और बाघ एकसाथ क्यों रहते हैं? ग्रीष्म की जेठ की दुपहरी ने संसार को तपोवन बनादिया है ॥ १ ॥ जेठ की दुपहरी को देखकर छाँह भी छाँह चाहती है, इसीलिये वह अत्यन्त सघन बन में छिपती है, घरों के भीतर घुसती है और शरीर के तले आश्रय ढूँढती है ॥२॥

ग्रीष्मऋतु में दिन बड़ा और रात छोटी होती है। वह छोटी रात भी काटे नहीं कटती। शरीर पसीने से तरबतर हुआरहता है। उड़िस और मच्छड़ पहुँचजाते हैं जो खूबही सतायाकरते हैं। यदि प्रकृतिदेवी की कृपा हुई तो भोर में कुछ ठण्ढी वायु चलपड़ती है, जिससे नींद आजाती है।

इस ऋतु में कहींकहीं प्लेग और हैजे का प्रकोप अलग हो रहता है। बहुतसे धनी मानी शीतप्रधान स्थानों में शरण लेते हैं। निर्धनों को तो बुरी गत हुई है। जो कुछ हो, परन्तु भगवान् की कृपा से आम, जामुन, कटहल इत्यादि मधुर फल हमें मिलजाते हैं, जिससे इस व्यग्रता में कुछ शान्ति मिलती है।

४. वर्षा-वर्षाकाल पहुँचते ही, मनमें शान्ति का अनुभव होनेलगता है। आकाश घने बादलों से छिपजायाकरता है। कभी प्रचण्ड वायु चलती है। कभी घोर गर्जन सुनाईपड़ता है। कभी झींसी पडती है और कभी मूसलधार वृष्टि होती है। कभी बदली लगती है तो सूर्य के दर्शन दुर्लभ हो-जाते हैं। इसी समय हमारे देश में सामयिक वायु चलती है और प्रचुर वर्षा करती है। झील, नदी, तालाब, गढ़े सभी जल से पूर्ण होजाते है। रात को घना अंधकार रहता है। बेंगों की टरटराहट और झींगुरों की सुरीली ध्वनि सुनाई-पड़ती है।

इस समय गाँवों की राहें कीचड से भरजाती हैं जिससे चलनेफिरने में दुःख होता है। खेती केलिये यह ऋतु सब से अच्छी है। सभी गृहस्थ कृषिकार्य में लगपड़ते हैं। धान्न की रोपनी खूब होती है। बन उपवन सभी हरे भरे होजाते हैं। जानपड़ता है कि प्रकृतिदेवी ने हरी सारी पहनली है।

५. शरत्-वर्षा विगत होतेही शरत्ऋतु आती है। आरम्भ में घटा दीखपड़ती है, परन्तु मूसलधार वृष्टि नहीं होती। हाँ, कभीकभी थोड़ीसी वर्षा होजाती है और इन्द्रधनुष के दर्शन हुआकरते हैं। जब कुछ दिन निकलजाते हैं, आकाश स्वच्छ होजाता है और चन्द्र की चन्द्रिका आनन्द बढ़ाने-लगती है। राहें सूखजाती है। नदी पोखरे इत्यादि का जल निर्मल होजाता है और कुमुद, कमल इत्यादि के खिले फूल अपूर्व शोभा देते हैं। खेतों में धान के फूल और फल दिखाई-पड़ते हैं, इन से हरेहरे पौधों की शोभा और बढ़जाती है। इस ऋतु में किसी नदी या जलाशय के किनारे जाइये, आप को अपूर्व आनन्द प्राप्त होगा। इसी ऋतु में खञ्जन के दर्शन और अगस्त्य तारे का उदय होता है। दुर्गापूजा इत्यादि कई पर्व इसी ऋतु में पड़ते हैं। इन सब आनन्दों के बीच में कहींकहीं मनुष्य मलेरिया ज्वर के चपेटे में पड़जाते हैं।

६. हेमन्त-हेमन्त में सन्ध्या ही से हिम गिरनेलगता है ज्योंज्यों दिन बीतते हैं, हिम में वृद्धि होती ही जाती है जिस से मनुष्यों को कफ सतानेलगता है। इस समय ऊनी वस्त्र पहनना सुखदायक होता है। हेमन्त में कृषक बड़े आनन्दित दीखपड़ते हैं। धान कटाने और बटोरने में रातदिन लगेरहते हैं। घरघर 'नवान्न' का उत्सव मनायाजाता है। सचमुच इस समय गाँव के दृश्य मनोहर रहते हैं।

७ शीत-शीत को शिशिरऋतु भी कहते हैं। शीत का आगमन तो कार्तिक ही से होता है, परन्तु पूस माघ में इसकी अधिकता रहती है। इस समय दरिद्रों की बुरी गत होती है। वे जाड़े के कारण ठिठुरेरहते हैं। धनीमानी तो कस कसकर खाते और गलीचों में घुसकर मौज़ करते हैं। पूस माघ की

धूप बड़ी प्यारी होती है। साँझ सवेरे कुहरा घेरे रहता है। कभी कभी मघाड़ पानी भी बरसजाता है। शीतऋतु में नैसर्गिक दृश्य चित्ताकर्षक नहीं होते, क्योंकि अनेक झाड़ियाँ और वृक्ष पत्रहीन होजाते हैं। हाँ, इधर उधर गुलाब इत्यादि के फूल दीखपड़ते हैं। हेमन्त में रात बहुत बड़ी और दिन बहुत छोटा होजाता है।

आवत जात न जानिये, तजि तेजहिँ सियरान।
घरहि जमाई लौं घट्यौ खरौ पूस दिनमान॥ (बिहारी)*

८. वसंत–शीत के खिसकते ही वसन्त की अवाई हुई; इस समय न शीत का कम्पन और न ग्रीष्म का उत्ताप रहता है तथा शीतल, मन्द और सुगन्धित वायु बहनेलगती है। इन्हीं कारणों से शरीर में एक अपूर्व उमंग भरजाती है। वसंत में प्रकृतिदेवी रमणीय सौन्दर्य धारण करती है तथा प्रत्येक वृक्ष नूतन पल्लवों, पुष्पों और फलों से लदजाता है। नाना प्रकार के पुष्प चारों दिशाओं को अपनी सुगन्ध से सुवासित करदेते हैं। मनुष्यों को कौन कहे, पशुपक्षी भी इस ऋतु में मत्त होजाते हैं। रातदिन कोयल कुहूकुहू की रट लगाती है। यही ज्ञात होता है कि स्वयं प्रकृतिदेवी भी आनन्द से फूलगई है। इस ऋतु में संध्या सवेरे भ्रमण करने से मन को बड़ी प्रसन्नता होती है। वसंतपञ्चमी, शिवरात, होली और रामनौमी इत्यादि पर्व इसी ऋतु में होते हैं। सच-मुच, यह वसंत ऋतुओं का राजा ऋतुराज है।

* जिस प्रकार दामाद का मान ससुराल में निरंतर रहने से घटजाता है उसी प्रकार पूस का दिनमान भी घटजाता है, उसे आतेजाते कोई नहीं जानता तथा उसमें उष्णता भी नहीं रहजाती।

६. भारत में जिस प्रकार ऋतुओं का प्रबंध है, वैसा इंगलैंड इत्यादि अन्य देशों में नहीं। इंगलैंड में 'वसंत, ग्रीष्म, शरत् और शीत' येही चार ऋतुएँ हैं। वहाँ वर्षा केलिये कोई निश्चित समय नहीं। उत्तर और दक्षिण ध्रुवों पर केवल शीत ही का राज्य है। अफ्रिका के कई प्रान्तों में दो चार वर्षों तक वर्षा होती ही नहीं। सचमुच भारत सौभाग्यशाली है और प्रकृति का वास्तविक सुख भोगरहा है।

विवरणात्मक लेख (Narrative Essays).

ऐतिहासिक विषय (Historical subjects).

रामवनगमन (Ram's Exile).

१. सूचना। २. सत्यानुराग। ३ मातापिता के प्रति भक्ति। ४. पतिभक्ति या सीताजी का स्वार्थत्याग। ५. भाइयों का स्वार्थत्याग या आत्मविसर्जन।

१. प्राचीन समय में अयोध्या में श्रीदशरथजी राज करते थे। इनके तीन रानियाँ थीं-कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा। इनसे चार पुत्र हुए-राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न। राम की माता कौशल्या थीं और भरत की माँ कैकेयी। लक्ष्मण और शत्रुघ्न सुमित्रा के लाल थे। ये चारो राजकुमार शशिकला की भाँति बढ़नेलगे। जब ये युवावस्था को प्राप्त हुए तब वृद्ध राजा ने रामजी को युवराज बनाकर उन्हें अपना गुरुतर राज्यकार्य सौंपदेना चाहा। धीरेधीरे अभिषेक की सामग्री इकट्ठी होनेलगी।

एकबार राजा दशरथजी ने युद्ध में कैकेयी की सेवा शुश्रूषा से प्रसन्न होकर यह वचन दिया था कि जब तुम चाहेगी, मैं तुम्हारी कोई दो बातें पूरी करदूँगा। कैकेयी

ने अपनी मन्थरा दासी के द्वारा जब यह सुना कि कल राम को युवराज की पदवी मिलेगी तब उसी दासी की राय से उसने दशरथजी से कहा कि अपनी पूर्व प्रतिज्ञा के अनुसार राम को १४ बरस केलिये वन में भेजदीजिये और भरत को युवराज बनाइये।

२. यह अशुभ सुन राजा दशरथ एक ओर प्रतिज्ञाभङ्गजनित पाप से भीत और दूसरी ओर पुत्रस्नेह के वशवर्ती हो "भई गति साँप छछून्दरि केरी" की भाँति विलाप करनेलगे। ज्यों ही रामजी को इस बात की ख़बर लगी कि वे आकर राजा को धीरज दे बोले-" पिताजी, सत्य छोड़ना उचित नहीं। आप चिन्ता मत करें; मैं सत्यरक्षा में आप की सहायता अवश्य करूँगा। यह मेरा शुभ भाग्य है कि आज मैं अपने मातापिता की आज्ञा मानने को तैयार हूँ।

मङ्गल समय सनेह वश, सोच परिहरिय तात।
आयसु देइय हरषि हिये, कहि पुलके प्रभुगात॥
आयसु पालि जन्मफल पाई। ऐहौं वेगिहि देहु रजाई॥

३. मातापिता के प्रति रामजी की असाधारण भक्ति थी। वनगमन के समय माता कौशल्या को धीरज बँधाकर बोले- "माता कैकेयी को किसी प्रकार की निन्दा न होवे, इसके लिये तू सदा चेष्टा करना।" राम आनन्द की ऐसी मूर्ति थे कि जब वे बन से लौटे तब सब से पहले कैकेयी को प्रणाम करनेगये और उन्हें बहुत ही आश्वासन दिया। रामजी की सुमित्रा के प्रति भी वसी ही निश्छल भक्ति थी। आप की पितृभक्ति की तुलना नहीं। जिसमें पिता का सत्यभङ्ग न हो इस केलिये वनवास के कठिन दुःख सहे, परन्तु विचलित न हुए।

४. रामजी जब बन जाने केलिये प्रस्तुत हुए तब वे अपनी पत्नी सीताजी को समझाने गये और गुरुजनों की सेवा की रीति बताकर अनेक उपदेश दिये, परन्तु सीताजी ने अयोध्या रहना पसंद नहीं किया। वह रामजी के साथ वन जाने की अभिलाषिणी थीं। रामजी ने वन के बहुतसे दुःख बताकर समझाने की बड़ी चेष्टा की, परन्तु इसका कुछ फल नहीं हुआ। सीता बोली–" हे नाथ, इस संसार में जितने नेह और नाते हैं सभी पति के बिना स्त्री को सूर्य से भी बढ़कर जलानेवाले हैं। शरीर, धन, घर, पृथ्वी और राज सब पति के बिना शोक के समाज हैं। जिस प्रकार प्राण-रहित शरीर और जलरहित नदी व्यर्थ है उसी प्रकार पुरुष के बिना स्त्री व्यर्थ है। इत्यादि।" अन्त में उन्हें सीताजी को अपने साथ लेजानापड़ा।

५. रामजी को वन जाने केलिये प्रस्तुत देख लक्ष्मण भी उनके साथ जाने को उद्यत हुए। भला, जो लक्ष्मण जन्म-कालही से छाया की भाँति रामजी की सेवा में लगेरहते थे वे इस विपत्ति में कब रुकनेवाले थे! रामजी ने उन्हें लाख समझाया, परन्तु सारी चेष्टा वृथा हुई। लक्ष्मण को साथ लेना ही पड़ा। इस समय भरत और शत्रुहन ममहर में थे। रामजी को बन जाते ही दशरथजी को बड़ा सोच हुआ और वे इसी सोच में मरगये। यह समाचार भरतजी को भेजागया। वे दोनों भाई घर आये और इन बातों को सुन बड़े दुःखी हुए तथा कैकेयी को खूब ही धिक्कारा। पिता की श्राद्ध कर शीघ्र ही रामजी को ढूँढ़ने चले। भेंट होने पर रामजी ने कहा–" हमलोगों को मातापिता की आज्ञा भङ्ग करना उचित नहीं। मेरे लौटने से उनका वचन भी भङ्ग

होजायगा इसलिये मैं समय बीतने ही पर लौटूँगा।" इस पर भरतजी लौटआये और रामजी की खड़ाऊँको सिंहासन पर रखदिया जिसमें लोग समझें कि रामजी ही राजा हैं और आप ब्रह्मचर्य व्रत से राजकाज संभालनेलगे। जब रामजी वन से लौटआये तब भरतजी ने उनको राज्य सौंपदिया और तीनों भाई अन्तःकरण से उनकी सेवा में लगगये।

जीवनचरित्र (Biographical Essays)

सुक़रात (Socrates).

१. जन्म। २. बाल्यावस्था। ३ कार्य और गुण। ४. मृत्यु। ५. उपसहार।

१. जिस समय यूनानदेश विद्या, शिल्प, विज्ञान आदि केलिये अति प्रसिद्ध होरहा था उसी समय ईसा के ४६६ वर्ष पहले एथेन्स नगर मे वैज्ञानिक विद्वान् सुकरात का जन्म हुआ।

२ सुकरात ने 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' इस कहावत के अनुसार छोटी ही अवस्था में अपने पिता के व्यापारसम्बन्धी कार्य सीखने में बुद्धि की प्रखरता दिखाई। इसके पीछे यह सब प्रकार की विद्याओं के सीखने में प्रवृत्त हुआ और विद्वानों का संग किया। इस सत्संग से वह कुछ ही दिनों में विद्या, विज्ञान और शिल्प में कुशल होकर बड़ेबड़े विद्वानों और दार्शनिकों से वादविवाद में अग्रसर होनेलगा। यूनानभर में इसकी बुद्धि की धूम मचगई।

३. एकबार सुकरात के पिता कहीं बाहर यात्रा को गये और उसे ४ हजार रुपये खर्च केलिये देगये। सुकरात ने

वह रुपये एक मित्र को ऋण देदिये। मित्र ने रुपये नहीं लौटाये और सुकरात ने इसकी चर्चा भी नहीं की।

मेसिडोनिया के राजा ने बहुत चाहा कि सुकरात हम से कुछ माँगे, परन्तु उस ने उस की ओर ध्यान ही नहीं दिया।

'एक दिन अटिका का राजा अलसिविडीस बड़े घमण्ड में भरा यह दून हाँक रहा था कि मेरे पास बड़ा धन है और मैं बड़े भारी राज्य का स्वामी हूँ।' सुकरात ने भूगोल के मान-चित्र में उसका क्षुद्र राज्य दिखा उसके घमण्ड को चूरचूर करदिया।

सुकरात के मन की सब से बड़ी अभिलाषा जिस केलिये वह अत्यन्त लौलीन रहता था—यह थी कि जिस तरह हो हम अपनी जन्मभूमि को कुछ लाभ पहुँचा सकें और सब लोग कुमार्ग से बचकर सच्ची और सीधी राह पर चलें तथा एक दूसरे की बुराई कभी न सोचें। यद्यपि इस सज्जन पुरुष ने कोई स्कूल या धर्मस्थान नहीं बनवाया तथापि जहाँ बड़े लोगों की भीड़ रहती, वह घंटों तक सदुपदेश दियाकरता और रातदिन मन,वचन और कर्म से अपने देश के हित केलिये तत्पर रहाकरता था।

४. ईसा के ३९९ वर्ष पूर्व कुछ अत्याचारी निष्ठुर मनुष्यों ने सुकरात पर यह दोष लगाया कि यह बूढ़ा नवयुवकों के चरित्र को बिगाड़ता है लोगों को नास्तिक बनाना चाहता है और देवी देवताओं की निन्दा करता है। इस पर राजा ने सुकरात को विष पीकर मरजाने की आज्ञा दी। यह सुनकर उसके बन्धुबान्धव विलाप करनेलगे, परन्तु सुकरात अत्यन्त धैर्य के साथ विष का प्याला उठाकर पीगया और मरते दम

* भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के एक लेख के आधार पर लिखित।

तक सदुपदेश देतारहा। जब विष के फैलने से वह बोल नहीं सका तब आँखें बन्द करलीं और स्वर्ग चलागया।

५. मरती बार सुक़रात ने तीन बातों केलिये अपनी प्रसन्नता प्रकट की और हाथ जोड़कर कहा, "हे जगदीश्वर मैं तुझे कोटिकोटि धन्यवाद देता हूँ कि तू ने मुझे बातों के मर्म समझने की बुद्धि दी, यूनान ऐसे देश में जन्म दिया और अफ़लातून ऐसा शिष्य मुझे मिला।"

जमशेदजी नसरवानजी ताता।

१. परिचय। २. जन्म और बचपन। ३. व्यापार। ४. उपकार। ५. दान। ६. स्वभाव। ७. उपसंहार।

१. यों तो सारा पठित संसार ताता के नाम से परिचित है, परन्तु इस भारत में वे अपनी सच्ची दानशीलता के कारण प्रातः स्मरणीय होरहे हैं। आज उनकी संक्षिप्त जीवनी पाठकों के सम्मुख रखते हैं।

२. ताता ने बम्बई में पारसी जाति के एक साधारण व्यापारी के घर जन्म लिया। १३ वर्ष की उम्र में ये पढ़ने केलिये बैठायेगये। इन्हों ने कुछ दिनों तक एलफिंस्टन कालेज में भी शिक्षा प्राप्त की। बाल्यावस्थाही से आपकी मानसिक शक्तियाँ व्यापार की ओर झुकी हुई थीं। ये अपने पिता के व्यापार में भी योग दियाकरते थे।

३. बीस वर्ष की अवस्था में इन्हों ने चीन में जाकर 'ताता कम्पनी' खोली और लाभ देखकर कुछ ही दिनों के बाद जापान, अमेरिका और फ्रांस में भी इसकी शाखाएँ खोलडालीं। जब इनके पास अच्छी सम्पत्ति होगई तब इन्हों ने अपने भारत की ओर ध्यान दिया और बम्बई में 'एलेक्जेण्डर मिल' खोलकर देश और देशी मजदूरों का उपकार किया। देशी

उद्योग धन्धों को बढ़ाने केलिये ये जीजान से लगपड़े और मध्यभारत,नागपुर इत्यादि में लोहे, कपड़े इत्यादि के कई कल कारख़ाने खोलडाले। यदि गत महायुद्ध में नागपुरवाली इम्प्रेसमिल के कपड़े नहीं मिलते रहते तो भारत की और बुरी गत होती। आपने भारत में कपास की खेती का अच्छा प्रचार किया। इन्हों ने अंत में लोहे के एक बड़े कारखाने केलिये बीड़ा उठाया। उद्योग कर ही रहे थे कि १९०४ ई० में चलबसे। शीघ्र ही उनके सुयोग्य पुत्रों ने उनका मनोरथ पूर्ण करदिया। बिहार के सिंहभूमि ज़िले के कालीमाटी * नामक स्थान का 'कारखाना' इसी उद्योग का फल है। ऐसा कारखाना एशिया में कहीं नहीं है। इस में प्रायः २० हजार मनुष्य दिनरात काम करतेरहते हैं।

४. आप से भारत को जो उपकार हुए हैं वे गिने नहीं जा सकते। आपने देश के शिल्पों को बढ़ा देश का धन बचाया। हज़ारों मनुष्य अपनी जीविका केलिये विदेश में ठोकर खाते थे, उन्हें जीविका की राह सुझाई। आपने संसार को दिखादिया कि भारतीय भी अपने का आदर्श बना सकता है। आशा है, शीघ्रही बहुतसे भारतीय ताता के पथपर चलकर अपने देश का धनसम्पत्ति से भरदेंगे।

५. ताता का दान सच्चा दान था। आपने भारत के उत्थान केलिये बहुतसे रुपय व्यय किये। ५ लाख रुपये होनहार विद्यार्थियों के शिक्षार्थ विलायत भेजने केलिये दिये। डाक्टरी फिलासफी और विज्ञान की उन्नति के विचार से रिसर्च युनिवर्सिटी खोलने केलिये ३० लाख रुपये दिये। इसी प्रकार इन्होंने भारतीय उद्योग धन्धों की उन्नति केलिये बहुतसे

* हालही कालीमाटी का नाम बदलकर जमशेदपुर करदियागया है।

रुपये दिये हैं। भारत इनके उपकार और दान से चिरऋणी रहेगा।

६. ताता का स्वभाव सरल था। ये धुन के पक्के थे। अनेक विघ्नबाधाओं के उपस्थित होने पर भी ये अपनी राह पर अटल रहकर कार्य करही डालते थे। भला, जो एक सवा सौ रुपये लेकर घर से निकले और करोड़ों की सम्पति सुमार्ग पर चलकर प्राप्त करे! यह उद्योग नहीं तो और क्या? प्रत्येक मक्खी मारनेवाले भारतीय को इन से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

७. हमलोग अमेरिका के कारनेगी और फ्रांस के लिपटन के विषय में सुनते हैं कि वे बड़े व्यापारी होगये हैं। अब विदेशी भी हमारे 'ताता' का नाम इसी प्रकार लेते हैं।

अहिल्याबाई।

१. परिचय। २. जन्म और शिक्षा। ३ विवाह। ४ पारिवारिक सुख-दुःख। ५. राज्यशासन। ६. चरित्रसमालोचन।

१ अहिल्याबाई इन्दौर के होलकर वंश में एक प्रसिद्ध रानी होगई हैं। भारत के इतिहास में यह सर्वश्रेष्ठ रानी हुई हैं। इनमें 'आदर्शरमणी' के सभी गुण वर्त्तमान थे, साथ ही साथ इनमें वे गुण भी जो इस समय प्रायः पुरुषों में भी नहीं पायेजाते। यही कारण है कि यह प्रातःस्मरणीया होरही हैं।

२. १७३५ ई० में मालवाप्रदेश के पाथरडी गाँव में अहिल्या-बाई का जन्म हुआ। यह गाँव अब अहमदाबाद जिले में पड़ता है। इन के पिता आनन्दराव एक धर्मपरायण पुरुष थे। आनन्दराव ने देवाराधन कर वृद्धावस्था में फलस्वरूप इस सन्तान का मुख देखा। इससे अहिल्या अपने माता-

पिता की बड़ी दुलारी हुईं। इन्हों ने बचपन में थोड़ीसी शिक्षा भी प्राप्त की।

३. अहिल्या ९ वर्ष की हुईं। एक समय होलकर राजा मल्हारराव अपनी सेना के साथ कहीं जारहे थे। बीच में पाथरडी गाँव पड़ता था। कार्यवश वहीं छावनी डालकर ठहरगये। उन्हों ने वहाँ अहिल्या को देखा। यद्यपि ये वैसी सुन्दरी नहीं थीं तथापि इन का गंभीर भाव मल्हारराव के मन में गडगया। इस पर उन्हों ने अहिल्या को अपनी पतोहू बनाने केलिये उन के पिता से विनय की। आनन्दराव ने सहर्ष अपनी कन्या मल्हारराव के पुत्र खण्डेराव को व्याहदी।

४ विवाह होने पर अहिल्या ससुराल आईं और अपने मीठे व्यवहार से थोड़े ही दिनों में सबों की प्रेमपात्री बन-गईं। यह जन्म ही से परिश्रमी थीं। यद्यपि आप रानी बनीं, तथापि आप में विलासिता नहीं घुसी। यह आडम्बर से बहुत ही दूर रहती थीं। यह धर्म के पथ से कभी विचलित नहीं हुईं। जब इस प्रकार आनन्द से कुछ समय बीतचला तब इन्हें मालीराव नाम का एक पुत्र और मुक्ताबाई नाम की एक कन्या हुई। यह आनन्द कुछ ही दिनों तक रहा कि कुटिल काल ने २० ही वर्ष की अवस्था में इन्हें पतिवियोग का दुःख देदिया। यह सती होना चाहती थीं, परन्तु ससुर को दुःख से विह्वल देख रुकगईं और राज्यकार्य में सहायता देनेलगीं। पीछे इन के ससुर ने सभी राज्यभार अहिल्या को सौंपदिया और आप युद्धकार्य में समय व्यतीत करनेलगे।

५. १७६५ ई० में मल्हारराव भी स्वर्गवासी होगये। अहिल्याबाई ने अपने पुत्र मालीराव को गद्दी पर बैठाया,

परन्तु यह ९ ही महीने के बाद मरगये। अहिल्या पुत्र के वियोग में बहुत ही दुःखित हुईं, परन्तु हो क्या सकता है! निरुपाय हो अपने से राज्यकार्य संभालनेलगीं । तुकोजी को सेनापती और गङ्गाधर को मन्त्री बनाया । इसी समय राज्य के कतिपय दुष्ट कर्मचारियों ने पेशवा के भाई रघुनाथ-राव को अहिल्या के विरुद्ध उत्तेजित किया। रघुनाथराव ने राज्य पर चढ़ाई की, परन्तु अहिल्या की चतुराई के सामने उन से कुछ भी करतेधरते न बना और बिना युद्ध किये ही लौटगये। इस के पश्चात् अहिल्या ने सुप्रबन्ध के साथ बिना विघ्नबाधा के राज्य किया। इन्हों ने अपने जीवनकाल ही में तुकोजीराव को अपना उत्तराधिकारी चुनलिया था। जब आप स्वर्गवासिनी हुईं तब यही गद्दी पर बैठे। अभी एक यह राज्य इन्हीं के वश में है।

६ पहले ही लिखआये हैं कि अहिल्या में आदर्श स्त्री और पुरुष के सभी गुणों का पूर्ण समावेश था। इन में कोमलता, दया, धर्मनिष्ठा, परदुःखकातरता इत्यादि स्त्री के गुण और दृढ़ता, साहस, स्वाधिकाररक्षणतत्परता, तीक्ष्ण-बुद्धिमत्ता और नीतिकुशलता इत्यादि पुरुष के गुण—सभी उन में एकसाथ दीखपड़ते थे। उन्हों ने दिखादिया कि हिन्दुललना भी राज्यकार्य भलीभाँति चलासकती है। यद्यपि आप ने दरिद्र के घर में जन्म लिया और यौवनावस्था में अतुल ऐश्वर्य की अधिकारिणी बनीं तथापि आपमें ऐश्वर्य का मद छू तक नहीं गया। आप ने जीवन-भर ब्रह्मचर्यव्रत धारण कर अपनी सम्पत्ति परोपकार और धर्म में लगाई। भारत में जितने तीर्थ स्थान हैं सभी जगह इन के धर्मकार्य दीखपड़ते हैं। इन कार्यों में गया के विष्णुपद-

जी का मन्दिर और काशी में अहिल्याबाई का घाट ये दोनों विशेष उल्लेखनीय हैं।

इन्हों ने प्रजा को पुत्र के समान पालन किया। जिस समय समस्त भारत में अराजकता फैली हुई थी उस समय भी इन्दौर में रामराज्य था। मैलकम साहब ने लिखा है कि अहिल्या के समान रानी ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत ही कम हुई है। निरपेक्षभाव से न्याय करनेवाली ऐसी धर्मपरायणा रानी केलिये केवल इन्दौर ही को नहीं, बल्कि सारे भारत को गौरव है और उन का प्रातःस्मरणीय नाम तथा जीवन हिन्दूललनाओं केलिये एक अति उत्कृष्ट अनुकरणीय आदर्श है।

भ्रमणवृत्तान्त (Travels).

रेल की यात्रा (A journey by Rail).

१. कारण। २. यात्रा। ३. विवरण। ४ सजीवन राय से भेंट। ५. जगन्नाथबाबू से भेंट। ६. मुजफ्फरपुर से काशी तक का विवरण और हितचिन्तक प्रेस में ठहरने केलिये जाना।

१ बड़का गाँव निवासी बाबू जगन्नाथप्रसाद गुप्त ने दो तीन पत्र दिये कि १७-१८-१९ अक्तूबर को काशी नागरी-प्रचारिणी सभा का वार्षिक अधिवेशन है। आप को हमारे साथ अवश्य चलना होगा, हम १६ को मुज़फ्फरपुर स्टेशन पर २ बजे दिन की गाड़ी से साथ देने केलिये तैयार रहेंगे। हमें तो कार्यों की अधिकता के कारण इतनी छुट्टी नहीं थी कि 'हाँ, ना' का उत्तर उन्हें भेजदेते, परन्तु उनकी व्यग्रता ने हमें तैयार होने केलिये विवश करडाला। अतः, एक चिट्ठी लिखदी कि हम उस तारीख को अवश्य चलेंगे, आप तैयार रहियेगा।

२. चिट्ठी लिखने के बाद हम डेरे के प्रबन्ध की चिन्ता में लगे। किसी तरह हाथ पाँव पटककर प्रबंध करसके। १६ अक्तूबर को सबेरे ७॥ बजे की गाड़ी से चलने केलिये लहेरिया सराय स्टेशन पर आये। स्टेशन पहुँचतेपहुँचते गाड़ी भी आगई। खिड़की पर टिकट लेनेवालों की भीड़ उतनी तो नहीं थी, परन्तु १०-५ मूर्खों ने ठेलमठेली मचारक्खी थी। हम भीतर चलेगये और टिकट माँगा. परन्तु 'काशी' का टिकट ही नहीं था। झट से टिकटबाबू ने 'रसीद' देदी। हम गाड़ी में जाबैठे।

३. प्रायः १५ मिनट गाड़ी ठहरीरही। इसके बाद वह चलनेलगी। गाड़ी चलीजाती थी और हम धान से भरे खेतों और बीचबीच में कमल के फूलों से सुशोभित जलाशयों के दर्शन पातेजाते थे। बीच में बाघमती नदी मिली। यही नदी नेपाल की राजधानी काठमांडू में पारसनाथजी के मन्दिर के समीप है। तीन स्टेशनों के बाद समस्तीपुर जंकशन पर गाड़ी पहुँची। हमें वहाँ उतरनापड़ा। प्रायः १ घंटा ठहरने के बाद सिमरियाघाट से गाड़ी आई। हमें इसी गाडी में चढ़ना था। चले गाड़ी पर चढ़ने, परन्तु चढ़ना बहुत ही कठिन था। जहाँ एक किवाड़ खुलता कि लाग उस में घुल-पड़ते। रेलवे कम्पनी की ओर से कोई भी अच्छा प्रबन्ध न था। कई जगह लात मुक्के की नौबत पहुँचगई थी। खैर, किसी तरह से ठेलमठेली करके लोग चढ़े तो सही, परन्तु भीतर बैठने की जगह नहीं। हम अभी तक बाहर थे और इधरउधर घूमकर चढ़ने की चिन्ता में लगे थे कि गाड़ी में बाबू शिवसिंह दीखपड़े। अब क्या था, उन्हों ने किवाड़ खोल-कर हमें भीतर बुलालिया। हम आनन्द से बैठे और लगे उन से

बात करने। कुछ देर बाद गाड़ी खुली। हमलोग बात में लगे थे, इधर गाड़ी पूसारोड स्टेशन पर पहुँच गई। सिंहजी ने कहा कि इस स्टेशन से दो कोस पर पूसा है जहाँ कृषिकालेज बना है। हमलोग इसी कालेज के विषय में बातें करनेलगे और गाड़ी चलनेलगी। ढोली और सिलौत स्टेशन तै करके गाड़ी मुज़फ्फरपुर पहुँची। हम और सिंहजी गाड़ी से उतरे। सिंहजी तो मोतीहारी जानेवाली गाडी में जाबैठे और हम जगन्नाथ बाबू की खोज में लगे। इधरउधर बहुत ही खोज की, परन्तु उन से भेंट नहीं हुई। क्या करें, मुसाफ़िरखाने में ठहरनापडा।

४. मुसाफ़िरखाने में बैठे थे कि शिवहर स्कूल के हमारे सहपाठी बाबू संजीवनरायजी ने आकर हमसे पूछा—"आप हमको पहचानते हैं?" हम ने उन्हें भलीभाँति देखा और कुछ सोचने के बाद बोले कि आप बाबू संजीवनराय जान-पड़ते हैं। वे हँसपडे-बड़ा आनन्द हुआ। दोनों बैठे और अपनी अपनी रामकहानी ओटनेलगे। घंटेभर तक बड़ी खुशी हुई। इस के बाद रायजी मिलजुलकर चलेगये।

५ गाड़ी का समय होचला था कि बा० जगन्नाथप्रसादजी आपहुँचे और हमारी चिंता भगी। कुशल मंगल के बाद जगन्नाथबाबू टिकट लाने गये। टिकट खरीदने में बड़ी अड़चन थी। खिड़की पर बड़ी भीड़ थी और इधर कम्पनी के सिपाही मुसाफिरों से एकएक पैसा घूस लेलेकर भीतर से टिकट लादेते थे। हमें इस अन्याय पर बड़ा दुःख हुआ। जगन्नाथबाबू ने भीड़ हटजाने पर टिकट खरीदा और हमलोग गाड़ी में जाबैठे।

३. गाडी खुली और तुर्की, कुरहनी इत्यादि स्टेशनों को तै कर हाजीपुर पहुँची। यहाँ बहुतसे मुसाफिर थे, गाड़ी

पहुँचते ही टीडी के समान वे दौडे । किसी प्रकार वे ठेल-ठालकर, चढ़ायेगये, परन्तु तौभी बहुतसे छूटगये और गाड़ी चलपड़ी। बीच में गंडक का पुल मिला, पुल पर पहुँचते ही लोग "हरिहरनाथ की जय" मनानेलगे, क्योंकि पास ही में हरिहरनाथजी का मन्दिर है। यहाँ प्रतिवर्ष हरिहरक्षेत्र का मेला लगता है। गाड़ी सोनपुर पहुँची, हमलोग उतरगये और बनारस जानेवाली गाड़ी पर चढ़ने चले। यहाँ भी चढ़ने में बड़ी दिक़्क़त हुई। ख़ैर, चढ़े, गाड़ी चली और कई स्टेशनों के बाद, ७ बजे साँझ को छपरा पहुँची। यहाँ बहुतसे मुसाफ़िर उतरकर दूसरी ओर जानेवाली गाड़ियों में चढ़गये। हमलोगों को पूरी जगह मिलगई। लगे बिछावन बिछाबिछाकर सोने की तैयारी करने। जगन्नाथबाबू ने ३-४ भजन गाये, वे बड़े ही मधुर थे। गाड़ी खुली, हमलोगों को नींद आगई।

औड़िहार जंकशन पर टिकटकलक्टर ने हमलोगों को उठाया और टिकट जाँचने केलिये टिकट माँगे। टिकट जाँचने के बाद हमने उन से पूछा कि क्या समय है? उन्हों ने कहा कि ३। बजे है। हमलोग उठपड़े। जगन्नाथबाबू ने प्रभाती गाना आरम्भ किया। गाडी भी दो तीन स्टेशनों के बाद ५। बजे बनारस सिटी पहुँची। हमलोग उतरगये, टिकट देकर बाहर निकले और हितचिन्तकप्रेस में डेरा देने केलिये एक्के पर चढ़ के चलपड़े।

आकस्मिक घटनाएँ (Accidents).

गङ्गा की बाढ़ (The flood of the Ganges).

१. परिचय। २. विवरण। ३. हानि और हानि के स्थान। ४. सहायता। ५. उपसहार।

१. संसार परिवर्त्तनशील है। यहाँ सुख के बाद दुःख और दुःख के बाद सुख सदा लगा ही रहता है। जो गंगा हमलोगों को अपने स्वच्छ जल से सदा आनन्दित करती रहती है और जो हमारे दुःख दारिद्र्य को नाश करती है वही कभीकभी हमें ऐसी विपत्तियों से सामना कराती है जिसे याद कर रोमाञ्च होआते हैं। यों तो अनावृष्टि और अतिवृष्टि दोनों दुष्काल अकाल के कारण हैं, परन्तु गत १९१६ की अतिवृष्टि से गंगा में जो बाढ़ आई, उसे गंगातटस्थ देश वासी और पत्र-पत्रिकाओं के पढ़नेवाले भारतीय कभी भी नहीं भूलसकते।

२. ज्योंही अगस्त का महीना चढ़ा, कभी यहाँ, तो कभी वहाँ मूसलधार वृष्टि होनेलगी और पानी से नदियों का पेटभरने लगा। कौन जानता था कि गंगा इस प्रकार बढ़ेगी। आधा महीना बीतते बीतते इसके भी बढ़ने के लक्षण दिखाई देनेलगे। यह रोज़रोज़ बढ़ती ही गई। पहले तो लोगों ने समझा कि अन्य वर्षों की भाँति दोही चार दिनों में वह बढ़ौती ख़तम हो-जायगी, परन्तु प्रकृति की कुछ और ही लीला थी सभी इस बढ़ती को देख भगवान्‌भगवान् गोहरानेलगे। क्या खेत, क्या गाँव और क्या शहर—जहाँ देखो वहीं गंगा का पानी घुसनेलगा और बिना राह की राह बनाली। बांधों और सड़कों का कुछ पता नहीं रहा। किनारे के कई गाँव बहगये और बहुतसे धराशायी होगये। हजारों मनुष्यों और पशुओं के प्राण गये। बहुतों ने इधरउधर टीलहों और वृक्षों पर आश्रय लिया और कितने तो धार में छप्परों और पेड़ों पर बहनेलगे। इस दुर्घटना का हृदयविदारक दृश्य लिखते आँखें भरआती हैं। उस समय गंगा का पाट प्रायः १२ कोश हो-गया और लाखों जीवों के प्राण संकट में पड़गये। क्या धनी,

क्या निर्धन सब एकएक दाने केलिये तरसनेलगे। ऐसी गति होगई कि सबों ने हिम्मत हारदी और अधमरे हो हो कर बहनेलगे। यह गति चौथी सितम्बर तक (प्रायः २० दिन) रही, तब गंगा ने अपना विराट् रूप त्यागना आरम्भ किया और जल घटनेलगा।

३. गंगा की इस बाढ़ से जो हानि हुई उसका अनुमान नहीं हो सकता। कई गाँवों के चिन्ह तक भी न रहे और हजारों गाँव नष्ट होगये। करोड़ों की सम्पत्ति गई और हजारों मनुष्यों के प्राण गये। उस वर्ष की उपज एकदम मारीगई। हजारों धनीमानी कंगाल होगये। यहाँतक हानि हुई कि किसानों को फिर घर बनाने और बीज बोने केलिये कुछ भी नहीं बचा, वे बरसों केलिये महाजनों के पंजे में पड़-गये। उस समय कई दिनों तक डाक बन्द रही और महीनों तक रेल की सड़कें और साधारण सड़कें बिगड़ीरहीं। इन के सुधारने में लाखों रुपये लगगये।

सयुक्त प्रदेश के बनारस, मिर्जापुर, गाज़ीपुर और बलिया तथा बिहार के आरा, पटना और छपरा जिलों के निवासियों को इस बाढ़ ने बहुत ही बड़ी हानि पहुँचाई। यहाँतक कि आरे और बलिये के सैकड़ों गाँव नष्ट भ्रष्ट होगये। गंगाकिनारे के अन्य जिलों को भी थोड़ीबहुत हानि हुई।

४ बाढ़ के समय में रिलीफ फंड की ओर से सैकड़ों स्वेच्छासेवकों ने नावों के सहारे हजारों भाग्यहीन मनुष्यों और जीवों के प्राण बचाये और भोजन का प्रबंध किया। जब स्वेच्छासेवक नावों को लेलेकर पीड़ितों के पास पहुँचते थे तो उन्हें जान में जान आजाती थी और वे ईश्वर को धन्यवाद तथा सेवकों को आशीर्वाद देते थे।

सरकार और धनीमानी देशवासियों ने भी जहाँतक हो सका-इस दुर्घटना से पीड़ित मनुष्यों के जानमाल की अपने धन से भरपूर रक्षा की। यत्रतत्र फंड खोलेगये, जिन से बहुत दिनों तक उन भाग्यहीन मनुष्यों को भोजन और वस्त्र मिलतेरहे। यदि इस समय इन महापुरुषों की कृपा न होती तो सैकड़ों मनुष्य मृत्यु के मुख में पड़जाते।

५. इस बाढ़ की चर्चा अभीतक कभीकभी होजाया-करती है और बूढ़े लोग बोलउठते हैं कि भाई, ऐसी बाढ हमने इसके पहले कभी नहीं देखी या सुनी थी। हमलोग ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वे फिर कभी ऐसी दुर्घटना न दिखावे।

निमतले का अग्निकाण्ड (A fire).

१ प्रारम्भ। २. स्थान। ३. वर्णन और रोकने के उपाय। ४. अग्नि काण्ड का इतिहास।

(१) १३१६ साल में माघकृष्ण ९, गुरुवार को कलकत्ते के निमतले में लोमहर्षण अग्निकाण्ड हुआ। लाखों रुपये की सम्पत्ति इस भीषण अग्निकाण्ड मे भस्मीभूत होगई। इस अगलग्गी का विवरण इस प्रकार है।

(२) निमतले का दर्माहाट, काठ के गोलों केलिये प्रसिद्ध है। स्ट्रांडरोड की दोनों ओर प्रायः दो सौ गोले पहाड़ों के समान दीखपडते हैं। यहाँ सर्वदा लाखों रुपयों का काठ तैयार रहता है।

(३) गुरुवार की आधी रात को रामलाल घोष के गोले से यह दुर्घटना आरम्भ हुई। इस की ख़बर लोगों को २ बजे लगी। झटपट पुलिस को ख़बर दीगई। ३ बजने के कुछ ही बाद साजसामान के साथ एक " फायरब्रिगेड इंजिन " आ

पहुँची, परन्तु उस समय तक अग्नि ने भीषणरूप धारण करलिया था और रामलालबाबू के गोले को भस्मीभूत करके दूसरे गोलों में घुसचुकी थी।

बिचारी एक "फ़ायरब्रिगेड इंजिन" से क्या हो सकता था। पुलिस ने चटपट लालबाजार और हबड़े में टेलीफोन से खबर भेजी। सबेरा होते ही दोनों जगहों से तीन आग बुझावानेली इंजिनें पहुँचगईं। फ़िलिपसाहब इजिनियर को यह भार सौंपागया। उन्हों ने भिन्नभिन्न स्थानों में इंजिनें लगाकर जहाँतक होसका आग बुझाने की बड़ी चेष्टा की, परन्तु सब व्यर्थ हुई।

देखतेदेखते यह आग काठ के गोलों के साथसाथ महलों तथा दूसरे गुदामों को भी नाश करने चली। इसने दर्माहाट के प्रसिद्ध जमीन्दार बाबू शिवनारायण घोष के महल को अपने नाट्यक्षेत्र में खींचलिया और लगी लाखों की सम्पत्ति स्वाहा करने। इन के घर में दुष्प्राप्य पुस्तकों का एक पुस्तकालय और वैज्ञानिक यन्त्रों का एक यन्त्रागार था। ये दोनों सदा के लिये भस्म होगये। पास ही लालबिहारीबाबू के मकान में आग पहुँचगई और उसे भी भस्म करडाला।

काठ के गोलों के समीप अन्न के कई बड़ेबड़े गुदाम थे। इन में रामप्रसाद नाग कम्पनी का गुदाम प्रायः २५ हजार रुपये का, एकदम जलगया और तीन हिन्दुस्थानी गुदामों के अन्न को कुलियों ने बड़े कष्ट से बाहर किया।

इस प्रकार इस दुर्घटना ने प्रायः तीस बीघे पर के काठ के सभी गोलों को तथा कई महलों और गुदामों को भस्म करडाला और साथ ही साथ स्ट्रांड रोड की ट्रैमलाइन और टेलीग्राफ के तार को भी बड़ी हानि पहुँचाई। शुक्रवार को इस अग्नि ने

चण्डिकारूप धारण किया था। जिन्हों ने उस रूप के दर्शन किये, वे अभी तक भयङ्करता के साथ उस का वर्णन करते हैं।

जब इंजिनियर आग बुझातेबुझाते थकगये और आग नहीं रुकी तब उन्हों ने आग रोकने की चेष्टा में इंजिनें लगाईं और किसी प्रकार इस में सफल भी हुए। शनिवार को आग रुकी, परन्तु चारपाँच दिनों में बूझबाझकर ठंढा हुई।

४. इस के पूर्व निमतले में और दोबार आग लगचुकी है। पहली आग प्रायः ६० वर्ष पहले मधुसूदनबाबू के काठ के गोले से आरम्भ हुई थी और प्राय: ३० लाख रुपये की हानि हुई। दूसरी आग १८८० ई० में लगी, काठ के सभी गोले भस्म होगये, जिस से प्रायः ७०-८० लाख की हानि हुई। लोगों का अनुमान है कि इस तीसरी आग मे प्रायः ५०-६० लाख रुपये की हानि हुई है। (वसुपती से अनूदित।)

आविष्कार और शिल्प इत्यादि।

(Inventions, Arts and Manufactures).

रेलगाड़ी (Railway).

१. परिचय। २. आविष्कार और विस्तार का इतिहास। ३. रेलगाड़ी का वर्णन। ४ लाभ। ५ हानि। ६. उपसंहार।

१. अब भारत में कदाचित् ही कोई होगा जिस ने रेलगाड़ी न देखी हो या कम से कम जिस ने इस की चर्चा न सुनी हो। यात्रा केलिये यह बहुत ही तेज़ और सुभीते की सवारी है। यह सवारी भाफ की इंजिन के बल से चलती है।

२. प्राचीन काल से यह कदाचित् ही कोई जानता था कि भाफ में इतना बड़ा बल है। यह जार्ज स्टिफेन्सन की

कृपा है कि अब सारा संसार भाफ के उपकारों का अनुभव कररहा है। स्टिफेन्सन के आविष्कार से बहुतसी भाफ की इंजिनें बनीं, परन्तु उन में थोड़ीसी कमी थी। अठारहवीं शताब्दी के मध्य में सर जेम्स वाट ने भाफ की शक्ति का पूर्ण अनुभव प्राप्त किया और अच्छी इंजिनें बनाईं। ये इंजिनें बहुत दिनों तक और और कार्य करती रहीं १८३० ई० से इंगलैंडवालों ने इन्हें सवारी के कार्यों में लगाया। तब से सारे संसार में रेलगाड़ियाँ फैलगई हैं और फैलती जारही हैं। लार्ड डलहौसी के समय से हमारे देश में रेलगाड़ियाँ दौड़ती हैं।

३. 'डाकगाड़ी, एक्सप्रेस, पसिंजर और मालगाड़ी' येही चार रेलगाड़ियों के प्रधान भेद हैं। प्रत्येक ट्रेन में ८-१० से लेकर १००-१५०तक गाड़ियाँ रहती हैं। 'मालगाड़ी' माल ढोती है और शेष गाड़ियाँ यात्रियों को ढोती है। प्रत्येक ट्रेन में आगे भाफ की एक इंजिन रहती है। इस की चाल १० से २५-३० मील तक है। मालगाड़ी और गाड़ियों से कम चलती है।

यात्रियों को ढोनेवाली गाड़ियों के पहला दर्जा, दूसरा दर्जा, ड्योढ़ा दर्जा और तीसरा दर्जा-ये चार भाग हैं। पहले से दूसरे का, दूसरे से ड्योढ़े का और ड्योढ़े से तीसरे दर्जे का किराया कम है। मालगाड़ी का किराया सभों में कम है। गति के अनुसार भी किराये में कमीबेशी है।

४. जब रेलगाड़ियाँ नहीं दौड़ती थीं उस समय बड़ी यात्राओं में कठिन आपत्तियों का सामना करना पड़ता था वे दुःखों और कठिनाइयों से भरीहुई रहती थीं। सड़कों के किनारे चोर डाकू छिपे रहते थे और यात्रियों के धन सर्वस्व और प्राण सभी हरलेते थे। कोई मनुष्य तीर्थयात्रा या

व्यापार करने केलिये निकलता था तो वह कदाचित् ही घर लौटकर अपने प्रिय परिवार से मिलसकता था ! ये आपत्तियाँ रेलगाडी के समय से बहुत दूर होगई हैं। अब किसी के प्राण नहीं जाते किसी की सम्पत्ति नहीं जाती । यात्रा एकदम सरल और आनन्द देनेवाली होगई है, इस में कोई विघ्नबाधा नहीं जानपड़ती । यात्रा में कोई विशेष खर्च नहीं और न अधिक समय लगता है । गाड़ी पर चढ़िये और सैकड़ों मील जाकर दोहीएक दिन में अपने प्रेमियों से मिललीजिये, देवताओं के दर्शन कीजिये और प्रकृतिअवलोकन का आनन्द लूटिये ।

रेलगाड़ी ने व्यापार को बड़ी ही सहायता पहुँचाई है । यदि रेलगाड़ी नहीं होती तो जहाँ जौन पदार्थ उत्पन्न होता वह वहीं सुलभ मूल्य पर बिकता और दूसरे प्रान्तों में उसकी बड़ी महँगी रहती । इस ने विद्या और सभ्यता में भी अच्छा योग दिया है । रेलगाड़ी की कृपा से हमें देशदेश के लोगों से भेंट होती है, जिन की रीति नीति, रहनसहन और गुण-अवगुण जानकर अपने को सुधारतेजाते हैं । यह दूरदूर देशों से अनाज लाकर अकालपीड़ित देशों को सहायता करती है । यह देश को शत्रुओं से भी बचाती है । यदि कोई शत्रु देश पर चढ़ाई करे तो रेलगाड़ी सेना लेजाकर उसे खदेड़ भगाती है । सारांश यह है कि रेलगाड़ी ने संसार में युगान्तर उपस्थित करदिया है ।

५ जिस रेलगाड़ी से इतने लाभ हुए हैं, उसी ने देश को हानि भी पहुँचाई है । कभीकभी संचालकों की असावधानी से रेलगाड़ियाँ आपस में लड़बैठती हैं जिस से सैकड़ों मनुष्यों के प्राण निकलजाते हैं । जहाँजहाँ रेल की सड़कें गई हैं

वहाँ की अगलबगल की भूमि की उपज कम होगई है, पानी रुकगया है जो मलेरियाज्वर फैलता है और वहाँ के लोग आलसी बनचले हैं, इन्हें २-४ मील चलना कठिन हो रहा है। रेलगाड़ी अनाज को इधर से उधर कररही है जिस से कई अच्छे देश अकाल के मुख में पड़तेजाते हैं और दरिद्र भी होरहे है।

६ हमारे देश में बी० एन्० डब्ल्यू० और ई० आई० आर० इत्यादि कई कम्पनियों की रेलगाडियाँ दौड़ती है। इधर कई कम्पनियाँ इस विचार में लगीहुई है कि कौनकौन उपाय करें कि देश सदा स्वस्थ बनारहे। जोकुछ हो, रेलगाड़ी से सभ्यसमाज को बड़ा लाभ पहुँचा है।

मुद्रणकला (The Art of Printing).

१ सूचना। २. मुद्रायन्त्र की सृष्टि और क्रमोन्नति। ३ उपकार। ४ अपकार। ५ उपसहार।

१. शिक्षाविस्तार के साथसाथ मानवजाति की सभ्यता में भी उत्तरोत्तर वृद्धि होतीजाती है। नाना प्रकार के शिल्प यन्त्रों के आविष्कार से हमलोगों की सुखस्वच्छन्दता और विलास का पथ दिनदिन कण्टकरहित होताजाता है। गत दोतीन शताब्दियों के इतिहास की आलोचना करने से शिल्पोन्नति के नाना आविष्कार हमलोगों को आश्चर्य में डालदेते हैं। इन दिनों जिन यन्त्रों को हम नित्य प्रयोजनीय समझते हैं, दो शताब्दी पूर्व उनके आविष्कार की कल्पना का साहस किसी ने किया था या नहीं-सन्देह है। जो मुद्रायन्त्र इस समय मनुष्य के अशेष उपकार करता है, कई शताब्दी पूर्व की उसकी अवस्था पर विचार करने से विस्मित होनापड़ता है। यह कहने में अत्युक्ति न होगी कि शिल्पजगत्

के जितने प्रयोजनीय पदार्थ सभ्यजातियों के अभावों को दूर करने केलिये आविष्कृत हुए हैं उन में मुद्रायन्त्र सर्वप्रधान है।

२. ईसा की नवीं शताब्दी में चीन देश में मुद्रायन्त्र की प्रथम सृष्टि हुई। उस समय काठ के टुकड़ों पर अक्षर खोदकर छापने का काम चलता था। पन्द्रहवीं शताब्दी से पाश्चात्य देश में मुद्रणकार्य आरम्भ हुआ। जर्मनी ने इसकी उन्नति में पहला हाथ लगाया। सुविख्यात शिल्पनिपुण स्टोनहोप ने यन्त्रनिर्माण कर कई पुस्तकें और समाचारपत्र इत्यादि मुद्रित किये। इन्हीं के समय से ज्ञानप्रचार का पथ बहुत कुछ परिष्कृत होगया। उन्नीसवीं शताब्दी में वाष्पीय मुद्रायन्त्र की सृष्टि हुई। इस समय से विज्ञान की उन्नति के साथ साथ इस की भी विलक्षण उन्नति हुई है और दिनदिन होतीजारही है।

३. लिखआये हैं कि मुद्रायन्त्र हमलोगों केलिये विशेष प्रयोजनीय और अभावमोचनकारी पदार्थ है। इन दिनों यह ज्ञानविस्तार का प्रधान साधन है। प्राचीन काल में पुस्तकें हाथ से लिखीजाती थीं। एक पुस्तक के लिखने में बहुत समय लगता था। मूल्य की अधिकता के कारण इन हस्त-लिखित पुस्तकों का संग्रह और प्रचार कठिन था जिस से विद्योपार्जन करने में सभी समर्थ नहीं हो सकते थे। मुद्रायन्त्र ने इस अभाव को एकदम दूर करदिया है। अब कुछ ही घंटों में एक पुस्तक की लाखों प्रतियाँ छपजाती हैं और बहुत ही अल्प मोल पर सभी को सुगमता से मिलजाती हैं।

मुद्रायन्त्र के पहले किसी को किसी का समाचार कठिनता से मिलता था। समाचारपत्र का कहीं नाम निशान भी नहीं था।

देशों को कौन पूछे, एक प्रान्तवासी दूसरे प्रान्त के समाचार नहीं पा सकते थे। यह मुद्रायन्त्र ही का प्रभाव है कि सारे संसार की खबरें कोनेकोने तक पहुँचती रहती हैं और इन खबरा को पा लोग अपने कल्याणसाधन में लगेरहते हैं।

प्राचीनकाल की बहुतसी हस्तलिखित पुस्तकें मुद्रायन्त्र के कारण छपगई हैं जिस से उनके लोप होने की शङ्का ही दूर होगई। हमारे वेद, पुराण, शास्त्र इत्यादि प्राचीन उपदेशपूर्ण ग्रन्थ, जो अभी तक अप्रकाशित थे, छपगये हैं जिनके प्रचार से सारा संसार ज्ञान प्राप्त कररहा है। सचमुच, मुद्रायन्त्र की सहायता से विज्ञानजगत् में एक नया युग आपहुँचा है।

४. मुद्रायन्त्र की कृपा से जिस प्रकार देश के अशेष उपकार हुए है और ज्ञानविस्तार का पथ सुगम हुआ है उसी प्रकार कुछ अनिष्ट भी हुए हैं। कई कुनीतिपूर्ण पुस्तकें छपी है जो मनुष्यों के चित्त को कलुषित करती हैं, परन्तु यह हानि उपकारों के विचार से बहुत ही थोड़ी है। संसार में ऐसा कोई पदार्थ ही नहीं, जिसके अपव्यवहार से अपकार न होता हो। हम समझते हैं कि कभीकभी अपकार भी उपकार के आदर को बढ़ादेता है।

५. इस मुद्रायन्त्र ने हमें विद्वानों से परिचय कराया, गुणियों के गुण दिखाये, हमारी धर्मपुस्तकों को नाश होने से बचाया और संसारयात्रा के पथ को सदा केलिये कण्टक-हीन करदिया। सचमुच, यह मानवसभ्यता का श्रेष्ठ स्तम्भ है।

कागज बनाना

(The Manufacture of Paper).

१ परिचय। २. इतिहास। ३. कागज बनाने की रीति। ४ भारत में कागज के कलकारखाने। ५ उपकार। ६ उपसंहार।

१. हमारे भारत में या यों कहिये कि सारे संसार में प्राचीन समय में मनुष्य पत्तों पर और पीछे छालों पर लिखने के कार्य करते थे। अभी भी कई पुस्तकालयों में तालपत्रों और छालों पर प्राचीन समय के लिखे ग्रन्थ दीखपड़ते हैं। हमलोग आजकल भी भूर्जपत्र इत्यादि पर यन्त्र मन्त्र लिखते हैं। प्राचीन काल में जब मुख्य बातें लिखनी होती थीं तब उन्हें ताम्रपत्र और प्रस्तरखण्ड पर लिखलेते थे। यह सारे कार्य अब प्राय· कागज ही पर होते हैं। पुराने संस्कार के कारण अभी भी कोईकोई कागज को पत्र या दल इत्यादि कहाकरते हैं।

२. कागज के इतिहास के विषयमें दो मत है। कोई इसकी आदि भूमि भारतवर्ष को बताते हैं और प्रमाण में संस्कृत ग्रन्थों को सामने रखते है और कोई कहते हैं कि पहली सदी में चीनवालों ने कागज बनाना आरम्भ किया। जो कुछ हो, इसके बाद से कागज बनाने के ढंग में धीरे धीरे उन्नति होती-गई और साथ ही टारटरी, अरब, मीसर इत्यादि देशों में इस का प्रचार बढ़तागया। मूरलोगों ने बारहवीं सदी में कागज बनाने की क्रिया स्पेनदेश को सिखाई। यूरोप में पहलेपहल रोम के बादशाह दूसरे फ्रेडरिक के समय में एक प्रकार का अच्छा कागज बना और इसी समय से सारे यूरोप में इस ढंग का प्रचार होगया। १८५५ ई० में इंगलैंडवालों ने कागज बनाना आरम्भ किया, परन्तु पहलेपहल वे अच्छा कागज नहीं बना सके और फ्रांस और हालैंड से कागज लेकर अपने कार्य चलाते रहे। अब अंगरेजों ने यह कला फ्रांसवालों से सीखली है।

३. चिथड़े, सन, एक प्रकार के काठ और घास इत्यादि

को कल की सहायता से भलीभाँति साफ करके बुकनी बना देते हैं। बुकनी को खासखास मसालों के सहारे गलाकर माड़ बनाडालते हैं। माड़ में चूना मिलादेने से वह उजला होजाता है। इस माड़ को कल के सहारे बड़ेबड़े साँचों में एक ओर से ढालतेजाते हैं और भिन्नभिन्न प्रक्रियाओं के बाद सूखकर दूसरी ओर से कागज का थान निकलताजाता है और साथ ही उसपर एक प्रकार के मसाले की पुट पड़ती-जाती है जिस से कागज पर रोशनाई नहीं फैलती। यदि पुट नहीं दीजाय तो ब्लौटिंगपेपर या स्याहीसोख़ तैयार होजाता है। इस के बाद थान को इच्छित लम्बाई चौड़ाई में कल ही के सहारे काटकर ताव और गिनगिनकर जिस्ता, रीम इत्यादि बनालेते हैं। यदि रंगीन कागज बनाना हुआ तो माड़ में इच्छित रंग मिलादेते हैं। मोटा या पतला, हलका या भारी जिसप्रकार का कागज बनाना हो सब कल के सहारे बनाते हैं।

४ हमारे भारत में कागज बनाने के कल कारखाने बहुत ही कम या नाममात्र केलिये है। टीटागढ़, सिरामपुर, लखनऊ और बंगाल की मिलें कुछकुछ कागज बनाती हैं, तौभी विदेशी कागज हमारे यहाँ बहुत आता है। इधर लोगो का साहस बढ़ा है और कागज बनाने की मिलें खोलने में लगपड़े हैं, आशा है, थोड़ेही दिनों में कुछ मिलें और दीखपड़ेंगी।

५ कागज ने हमारा बड़ा उपकार किया है। इसी की कृपा है कि विद्या, विज्ञान इत्यादि के साधन सुलभ होरहे हैं। और सभ्यता में उत्तरोत्तर वृद्धि होतीजारही है। सभ्यसमाज में ऐसा ही कोई काठ का पुतला होगा जिसने पढ़ने लिखने में कागज का उपयोग न किया हो। पुस्तकें, समाचारपत्र इत्यादि पढ़ने के पदार्थ कागज ही के कारण हमें सुलभ मोल

पर मिलरहे हैं। मोटे कागज से बाकस बनाते हैं। जापान में कागज का छाता, दीवाल और कई प्रकार के उपयोगी पदार्थ बनते हैं।

६. हमारे देश में कागज़ी जाति के मुसलमान पहले कागज बनाते थे, परन्तु जबसे मिलों से बनकर कागज सुलभ होगया है, उनकी कारीगरी गायब होगई। नेपाल में बसहो कागज बनायाजाता है। नेपाल सरकार के सभी काम बसहा कागज़ पर होते हैं।

वाष्पयन्त्र।

(The Invention of the Steam Engine).

१ परिचय। २ इतिहास। ३ वाष्पयन्त्र से लाभ। ४. उपसंहार-भारत में कलकॉटे।

१. हमलोगों ने भाफ के बल से चलनेवाली कोई न कोई इंजिन अवश्य देखी होगी। रेलगाड़ी इसी इंजिन से चलती है। जहाज चलानेवाली यही इंजिन है। आटे की कल, लोहा ढालने की कल, सड़क बनाने की कल और सूत कातने की कल सभी इसी भाफ की इंजिन के बल से काम करती हैं। इसी भाफ की इंजिन का दूसरा नाम वाष्पयन्त्र है।

२. ईसा के १३० वर्ष पूर्व सिकन्द्रिया के रहनेवाले हीरो ने भाफ की छानबीन की थी। इसी खोज के आधार पर स्पेन देश के एक कप्तान ने १५५३ ई० में भाफ से चलनेवाला जहाज बनाया, परन्तु वह भलीभाँति सफलीभूत न होसके। १६१५ ई० में फ्रांस के इंजिनियर ने एक वाष्पयन्त्र कूएँ से जल निकालने केलिये बनाया, परन्तु इस में भी बहुत कुछ कमी रही। इस कमी को प्रायः ४८ वर्ष बाद मार्किस आफ अर्चेस्टर

ने सदा केलिये दूर करदिया । इसी समय से वाष्पयन्त्र में धीरेधीरे उन्नति होनेलगी । इस उन्नति में स्टेमेन्सन साहब ने बहुतकुछ सहायता पहुँचाई और नयेढंग का एक वाष्पयन्त्र बनादिया । यह सब होतेहुए भी 'सर जेम्सवाट' ही इस वाष्पयन्त्र के सम्बन्ध में प्रधानपुरुष समझेजाते हैं । एकबार इन्हों ने चूल्हे पर चाय की डेगची के ढक्कन को भाफ के बल से ऊपर नीचे होते देखा । उसी समय से ये बाष्प के बल की जाँच में लगगये । समय पाकर इन्हों ने न्यूकसन साहब की इंजिन को देखा और अपनी बुद्धि से एक बहुत ही उत्तम बाष्पयन्त्र बनालिया । इसके पीछे वालटन साहब से मिलकर एक बहुत ही बड़ी इंजिन बनाई तथा धीरे-धीरे उस में तरह तरह के सुधार करदिये । इस समय स अच्छी इंजिनें बननेलगीं और अभी तक सुधरती हुई बहुत-सी इंजिनें बनती चलीजारही हैं ।

३. बाष्पयन्त्र इस समय नाना प्रकार के कार्यों में व्यवहृत होते हैं । आटा पीसना, सुरखी कूटना, टाटबनाना, कपडा बिनना, सूत कातना, लोहा ढालना, पुस्तकें छापना तथा रेलगाड़ी, जहाज़ और हवाईजहाज का चलना इत्यादि भिन्नभिन्न कार्य बाष्पयन्त्रों ही के सहारे होते हैं । वाष्पयन्त्र ने शिल्प और वाणिज्य में युगान्तर उपस्थित करदिया है । इस ने मनुष्य के शारीरिक श्रम और समय को बचाकर बहुतसे पदार्थ बनाडाले हैं जो बहुत ही थोड़े मोल पर मिलरहे हैं । बहुतसे लोगों को इसने रोज़ी देडाली है । विद्वानों ने कहा है कि ज्योंज्यों कलकाटों का आविष्कार और व्यवहार बढ़ताजायगा, सभ्यता में भी उत्तरोत्तर वृद्धि होतीजायगी । यह बात अक्षरअक्षर ठीक है । देखिये, जिस

देश ने कलकाँटों को अपनाया है, वह सभ्य समझा भी जाता है।

४. भारत में कलकाँटों के प्रचार होने की बड़ी आवश्यकता है, क्योंकि अन्य देशवालों ने कलकाँटों से बनी भाँतिभाँति की वस्तुएँ भेजकर हमारे देश के प्रायः सभी हस्तनिर्मित शिल्प-कार्य नष्ट करदिये हैं और अब वह समय भी नहीं है कि हाथों से कलकाँटों की बराबरी कर सकें। यदि हमारी दृष्टि कलकाँटों की ओर नहीं जाती है तो यह हमारी अभाग्यता हैं। इधर कई युवकों का ध्यान इस ओर गया है और आशा है कि वे इसमें अच्छा योग देंगे।

काँच (Glass).

१ निर्माणप्रणाली और आविष्कार के विषय मे किम्वदन्ती। २. साधारण वर्णन। ३ गुण और धर्म। ४ व्यवहार और उपकार। ५ उपसहार।

१. बालू में आलकली (Alkali) से बना एक प्रकार का क्षार और थोड़ा चूना मिलाकर कड़ी आँचपर गलाने से काँच बनता है। ऐसा कहाजाता है कि फिनीशिया देश के कतिपय व्यापारी सीरिया के उपकूल में जहाज के डूबजाने के कारण पहुँचे। वहाँ उन्हों ने आलकली नामक वृक्ष की लकड़ी से बालू पर रसोई बनाकर भोजन किया। भोजन के बाद देखा कि चूल्हे में काँच बनाहुआ है। इसी प्रकार उनलोगों ने काँच बनाना सीखलिया।

२ बाज़ार में भिन्नभिन्न प्रकार के काँच दीखपड़ते हैं। जब काँच तरल अवस्था में रहता है तब नलियों और साँचों के सहारे जैसी चीज़ चाहें बनासकते हैं। यदि तरल अवस्था में रंग मिलादें तो रंगीन काँच बन जाता है।

३. काँच स्वच्छ पदार्थ है। यह आलोक को नहीं रोक-सकता। यदि इसकी एक पीठ पर पारा लगादें तो दूसरी

ओर सभी पदार्थ भलीभाँति देख सकते हैं। यद्यपि काँच अत्यन्त कठिन, उज्ज्वल और चिकना पदार्थ है तथापि इस में एक दोष है। यह बहुत ही तुनुक है और धक्का लगते ही चूरचूर होजाता है । टूटने पर यह जोड़ा नहीं जासकता और इस पर कोई चिन्ह भी नहीं बनसकता । यह हीरे के टुकड़े या गर्म कियेहुए लोहे को छोड़ और किसी चीज़ से सीधा नहीं कट सकता। काँच में एक विशेष गुण यह है कि यह एक ओर की गर्मी को दूसरी ओर नहीं जाने देता।

४. काँच से हमारे नित्य व्यवहार की-शीशी, बोतल, ग्लास, कटोरा, झाड़, लैम्प, चूरी, खिलौना और आईना इत्यादि भिन्नभिन्न प्रकार की वस्तुएँ बनती हैं। इससे चश्मा और भिन्नभिन्न वैज्ञानिक यन्त्र बनायेजाते हैं। पीतल और काँसे के बरतनों में भोजन के पदार्थ अधिक काल तक रहने से बिगड़जाते हैं, परन्तु काँच के बरतनों में यह विकार नहीं होता। आजकल सभ्यसमाज में काँच से बहुत ही बड़ी सहायता मिलरही है।

५. प्राचीन सस्कृत ग्रन्थों मे काँच का उल्लेख पाया जाता है । तीन हजार वर्ष पहले मीसर देश में काँच के बरतनों का व्यवहार था-इस का स्पष्ट प्रमाण मिला है। हिन्दू काँच को अपवित्र मानते है और इसके स्थान में पत्थर के बने बरतन काम में लाते है,परन्तु अब यह धारणा बदलतीजारही है।

मिश्रित लेख (Miscellaneous Essays).

डाकविभाग (The Postal System).

१ परिचय। २ इतिहास। ३ डाकविभाग की शाखाएँ और कार्य। ४ उपकार। ५. उपसहार।

१ सारा सभ्य संसार डाकविभाग का ऋणी है। इससे मनुष्य समाज की जो भलाइयाँ हुई हैं, वह अकथनीय हैं। डाक केवल उस एकता का नाम है जो सब मनुष्यों ने सरकार द्वारा अपने समाचार पहुँचाने केलिये करली है।

२ अतिप्राचीन काल से भारत में डाक द्वारा पत्रों के भेजने की प्रथा है, परन्तु आजकल की कार्यप्रणाली से उस समय की प्रणाली बहुत ही भिन्न थी। मुसलमानों के समय में डाक की व्यवस्था विपत्तियों से भरी और बहुत ही खर्चीली थी। घोड़े पर डाक भेजीजाती थी वह रास्ते में कभीकभी लुटजाती थी। लोग एक दूसरे के पत्र पढ़कर छिपी हुई बातें जानजाते थे। समय निश्चित नहीं था। पत्र कभी शीघ्रही और कभी महीनों में पहुँचता था। खर्च का कोई ठिकाना नहीं था। पुराने समय में इंगलैंड में भी प्रायः इसी प्रकार की गति थी। क्रौमवेल ने इसमें बहुत कुछ सुधार किया। इस सुधार के अनुसार १८३० ई० तक कार्य होते रहे, तब हिल साहब ने प्रतिपत्र १ पैंस का खर्च ठहराकर डाकविभाग में उस समय के अनुसार एक अच्छा सुधार करदिया। आजकल जिस व्यवस्था के अनुसार डाक के कार्य होरहे हैं, वह सुविख्यात पण्डित पामर साहब की कीहुई है। इसने अपने परिश्रम और अनुभव से डाकविभाग के नियम और क्रम ठीक किये। वेही नियम इस समय अटल सिद्धान्त के समान मानेजारहे हैं। इसी व्यवस्था के अनुसार लार्ड डलहौसी ने भारत में डाकविभाग जारी किया। इस समय तक प्रायः १९ हजार डाकघर यहाँ होगये हैं।

३ भारत का डाकविभाग कई शाखाओं और प्रशाखाओं में

विभक्त है। चिट्ठीपत्री की जो शाखा है, वह बिना विश्राम लिये सदा कार्य करती रहती है, किसी उत्सव या पर्व पर उसे छुट्टी नहीं मिलती। एक शाखा मनिआर्डर विभाग है, इसके द्वारा बिना किसी विपत्ति के अपने आत्मीय बन्धु या किसी दूसरे के पास रुपया पैसा भेजसकते हैं। यदि हम चाहें कि हमारा पत्र या कोई चीज़ बिना किसी बाधा के अभिलषित स्थान पर पहुँचजाय तो उसे रेजिस्ट्रेशन विभाग द्वारा भेजते हैं। इन्सियोरेन्सविभाग बीमा करता है और यह प्रतिज्ञा करता है कि यदि किसी की भेजी हुई वस्तु गुम होजाय तो डाकविभाग उसका मोल देदेगा। एक विभाग सेविंगबैंक है, इसमें हम बचीखुची आमदनी जमा करके परिमितव्ययी बनते है, यहाँ कुछ सूद मिलता है। मुख्य मुख्य स्थानों में डाक के साथ तारविभाग भी है, जो हमारी खबर कुछही घंटों में हजारों मिलं पर पहुँचा देता है। कुछ दिनों से डाकविभाग ने कुनैन बेचने का भी भार लिया है, जिससे यह बहुत ही सुलभ होगई है और प्रजा मलेरिया ज्वर से बचरही है।

४. डाकबिभाग के उपकार और प्रयोजन पर विचार करने से लोगों को अवाक् होनापड़ता है। जब हमारे आत्मीय बन्धु हम से दूर पड़जाते है तब इसी डाक द्वारा हम उन का कुशल मंगल जानते है और समय पर रुपया पैसा और अभिलषित वस्तु भेजकर उन की सहायता करते है। यदि हमारा कोई बन्धु विदेश में विपत्ति मे रहता है तो इसी डाक द्वारा हम उसको विपत्ति से बचाने के उपाय करते हैं। केवल एक पैसे के ख़र्च मे हमारा पत्र सैकड़ों कोस पर हमारे मित्र के पास दोही चार दिनों के भीतर

पहुँच जाता है और कोई हमारा भेद भी नहीं जानने-पाता। यदि हम चाहते हैं कि कुछही घंटों में हमारी ख़बर निश्चित स्थान में पहुँचजाय तो कुछ आने खर्च करके तार देदेते हैं। डाकविभाग ने व्यापार और शिक्षा के प्रचार में बहुत बड़ा योग देकर हमारी सभ्यता को सुधार दिया है। अतः, हम उसके बड़े ऋणी हैं।

डाक से हम एकता की शिक्षा पाते हैं। हमारे ही एक-एक पैसे ने इतना बड़ा कार्य संभाला है, कर्मचारियों को लाखों रुपये वेतन देकर रक्खा है और समाज की इतनी भलाइयाँ की हैं।

५ डाकविभाग में जाल और असत कार्य का निर्वाह नहीं। उस पर सरकार की कड़ी नजर रहती है। यदि किसी कर्मचारी का दुर्विचार जानपड़े तो उसे शीघ्रही यथोचित दण्ड दिया जाता है। यदि कोई पत्र पते की गड़बढी से अभिलषित मनुष्य को नहीं पहुँचाया जा सका तो वह डेडलेटर आफिस को भेज दिया जाता है। वहाँ वह खोल कर पढ़ा जाता है और उस पर उचित विचार होता है। यदि कुछ भी खबर नहीं लगे तो जला दिया जाता है।

समाचारपत्र (Newspapers).

१. समाचारपत्र क्या है। २. इसे कौन लिखता है। ३ इसका जन्म। लाभ। ५ भारत में समाचारपत्र के बहुत कठिन कार्य है। ६ उपसहार।

१. जो पुस्तकें नियत तिथियों पर भिन्नभिन्न देशों के समाचार छापकर बेचीजाती हैं, उन्हें समाचारपत्र कहते है। आजकल पत्रों में केवल समाचार ही नहीं छपते, बल्कि उनमें सुधार की बातें भी रहती हैं तथा उपयोगी विषयों पर

निबन्ध भी लिखेरहते हैं। बहुतसे समाचारपत्र साप्ताहिक हैं जिन में एक सप्ताह की बातें लिखी रहती हैं। इसी प्रकार दैनिक, अर्धसाप्ताहिक, पाक्षिक और मासिकपत्र भी निकालेजाते हैं।

२. समाचारपत्र को एक मनुष्य नहीं लिखता, वह बहुत से मनुष्यों का लिखा होता है। हाँ, परन्तु उसका सम्पादन कोई एक प्रधान मनुष्य करता है जिसको सम्पादक कहते हैं। वही समाचारपत्र के लिखे विषयों का उत्तरदाता भी होता है।

३ सबसे पहला समाचारपत्र इटली के वेनिस नगर से निकला था। जब इसके लाभ लोगों को मिलनेलगे तब यूरोप के सभी देशवालों ने पत्रों का निकालना आरम्भ कर दिया। महारानी इलिजाबेथ के समय में इंगलैंड का पहला समाचारपत्र निकालागया। हमारे भारत का सबसे पहला पत्र ' इंडिया गज़ट " है जिसको अंगरेज़ी सरकार ने १७८४ ई० में निकाला। आजकल तो यहाँ कईसौ पत्र निकलरहे हैं, तोभी अन्य उन्नत देशों की अपेक्षा यह संख्या बहुत ही कम है।

४. भिन्नभिन्न समाचारपत्रों के उद्देश्य भी भिन्नभिन्न होते हैं। कई पत्र प्रजा और राजा की बातें एक दूसरे को पहुँचायाकरते हैं, जिससे आपस का मनोमालिन्य दूर होजाता है और शासन में पूरी सहायता मिलती है। यह पत्रोंही का काम है कि वे किसी उचित कार्य केलिये देशवासियों को सतर्क करें और अनुचित कार्यों से रोकें। यूरोप में समाचार-पत्रों की शक्ति इतनी प्रबल है कि वे जिस कार्य के लिये कान उठाते हैं, देशवासियों को वही करना पड़ता है।

संसार की उन्नतिसम्बन्धी नईनई वस्तुएँ, विज्ञान के आविष्कार, कांग्रेस, कानफ्रेंस और महामण्डल इत्यादि की

करतूतें तथा सामाजिक सुधार की बातें समाचारपत्रों ही के द्वारा हमलोग जानते हैं । संसार के किस भाग में कौन कौन वस्तुएँ किस भाव से बिकती है, व्यापार केलिये कहाँ क्या सुभीता है-इत्यादि विषयों का पता समाचारपत्र ही बताता है । जब कोई मनुष्य कारणवश अपने इष्ट मित्रों से दूर पड़जाता है तब समाचारपत्र ही उसका प्यारा मित्र बनजाता है और अपने नयेनये समाचारों से, मनोहारिणी कविताओं से तथा नानाप्रकार की कथा कहानियों से उसके मुर्झाये हुए चित्त को प्रफुल्लित करता है ।

५ भारत में समाचारपत्रों को बहुत ही कठिन कार्य करने हैं । ये परदेशवासी अंगरेज़ी सरकार और उनकी भारतीय प्रजा के मध्यस्थ के काम करते हैं । भारतवासियों को परदेशी शासनकर्त्ता से प्राकृतिक सम्बन्ध अत्यल्प है। इसी प्रकार हमारे शासनकर्त्ता भी भारतवासियों से कदाचित् ही परिचित है। ऐसी अवस्था में यह समाचारपत्र ही है कि वह शासनकर्त्ता और भारतीय प्रजा को आपस की भेंट कराता है और एकदूसरे का भेदभाव दूर करता है। जो पत्र भारत के हितैषी हैं, वे राजा और प्रजा दोनों में सन्तोष फैलाते हैं, ऐसा प्रयत्न करते हैं जिसमें किसी से कोई त्रुटि न होनेपावे । ऐसी अवस्था में कभी कभी सरकार के कामों पर उन्हें बड़ी चतुराई से आक्षेप करना होता है। यदि असत्य बातें लिखी गईं तो गवर्नमेंट उनके सम्पादकों को खोटी खरी सुनाती है और कभीकभी दण्ड भी देती है। अतः, सम्पादकों को उचित है कि वे उचित वक्ता हों. विघ्न बाधाओं से न डरें और अपने कठिन कर्त्तव्य को उचित रीति से पूर्ण करें ।

६ भारत के बहुतसे पत्र कुछ प्रधान मनुष्यों के उत्साह पर चलते हैं जब वे स्वर्गयात्रा करजाते हैं या उनका उत्साह घटजाता है तब वे पत्र भी बन्द होजाते हैं। यही कारण है कि प्रदीप बिहारबन्धु और उचित वक्ता इत्यादि पत्रों के दर्शन दुर्लभ होगये हैं। पाश्चात्यदेशों में यह बात नहीं है वहाँ सम्पादक या मैनेजर न भी रहें तौभी पत्रों के निकलने में कोई बाधा नहीं होती, क्योंकि प्रत्येक पत्र का प्रबन्ध बहुत ही उत्तम रहता है और लेखकतथा संवाददाता भरपूर रहते हैं देखें. भारतवर्ष के सुखमयदिन कब आते हैं।

विचारात्मक लेख (Reflective Essays).

गुणविषयक लेख

(Essays on Abstract Subjects).

सत्य वादिता (Truthfulness).

१ प्रारम्भ। २. असत्य बोलने से हानि। ३ सत्य से लाभ। सत्यकथन। ५. उपसहार।

१ जिस पदार्थ का जैसा ज्ञान मन में हो उसको ठीक ठीक उसी प्रकार कहने का नाम सत्य है। यदि हम जानते हैं कि श्याम चार दिनों से पटने में है, चाहे वह पटने से कहीं चला भी गया हो और हम यह कहें कि श्याम आज पटने में है तो हम सत्य बोल रहे हैं। यदि हम जानते हैं कि वह पटने से काशी चला गया है और यह कहें कि वह पटने में है तो यह कहना झूठ होगा। अतः अपने ज्ञानके अनुकूल कहनाही सत्य हुआ और इसके प्रतिकूल कहना झूठ।

५. झूठ बोलने से विश्वास उठजाता है । यदि सब लोग झूठ बोलना आरम्भ करदें तो संसार के सारे काम बन्द होजायँ । जब हम बाजार में कोई वस्तु मोल लेने जाते हैं तब केवल हमारे विश्वास पर बेचनेवाला वह वस्तु तौलकर देदेता है और पीछे हम उस का मूल्य देते हैं । यदि बेचनेवाले को यह शङ्का होजाय कि हम झूठ बोलते हैं या हमें ही शङ्का होजाय कि पहले दाम देने से बेचनेवाला झूठ बोलकर हड़पजायगा तो इस प्रकार दोनों की बड़ी हानि होगी-बड़ीबड़ी कठिनाइयाँ झेलनीपड़ेंगी, यहाँतक कि संसार के सभी कार्य बिगड़जायँगे ।

झूठ बोलनेवाले की बड़ी दुर्गति होती है, क्योंकि झूठ बहुत दिनों तक छिप नहीं सकती । जैसे चोर के पाँव नहीं होते उसी प्रकार झूठ के भी पाँव नहीं होते । जो यह समझता है कि मेरी झूठ कोई नहीं जानसकेगा, वह भारी भूल करता है । जहाँ एकबार भी लोगों को तुम्हारी झूठ का पता लगगया, बस समझलो कि तुम्हारा विश्वास जातारहा और तुम में तथा कहानी के भेड़ चरानेवाले गड़रिये में कुछ भेद न रहा । जैसी गति गड़रिये की हुई वैसी ही गति तुम्हारी भी होगी । झूठे को एक झूठ छिपाने केलिये बीसियों झूठी बातें बनानीपड़ती हैं । यदि हम झूठ बोलना छोड़दें तो चोरी इत्यादि कोई बुरा कर्म हम नहीं करसकते ।

३ मुँह का भूषण सत्य है । जो समझते हैं कि पान से मुँह की शोभा होती है, वे भूलते हैं । जो साँच बोलता है उस का हृदय पवित्र होजाता है । सत्य बोलने से साधुता, सरलता इत्यादि सच्चरित्र होने के जितने गुण हैं सब

मनुष्य में आजाते हैं। यदि कदाचित् सत्यवादी का मन किसी बुरे काम की ओर जाय तो उसे सदा वह खटका लगा-रहेगा कि कहीं मुझसे कोई पूछबैठा तो मुझे साँच साँच कहनापड़ेगा—यह ध्यान में आते ही वह उस काम से अवश्यही बचजायगा। अतः, हमलोगों को उचित है कि सदा साँच बोलकर अपने को पवित्र बनायेरहें।

४. बहुतसे मनुष्य ऊपर से सत्य बोलते जानपड़ते हैं, परन्तु भीतर का भाव दूसरा रहता है। कितने सामने में सत्य बोलदेते हैं परन्तु पीछे उसके विरुद्ध वर्ताव करते हैं: इस प्रकार सत्य के खोल में असत्य भाव छिपाना घोर पाप का मूल है।

जो बात समयानुकूल न हो, यदि वह सत्य भी हो तौभी उसे बोलना अनुचित है। यदि हमारे पास कोई एक आँखवाला मनुष्य आवे और उसको हम "कनहू भाई-कनहू भाई" कहकर पुकारें तो उसका हृदय दुखजायगा और अप्रिय होने से एक प्रकार की हिंसा समझीजायगी। "सत्यं-ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियं।"

५. यदि हमलोग चाहते हैं कि सदा साँच बोलें, झूठ कभी भी न बोलें तो हमें चाहिये कि ईश्वर पर विश्वास करें, उसे सदा अपने समीप समझें, क्योंकि कोई स्थान ऐसा नहीं है जहाँ ईश्वर का वास न हो। ईश्वर सर्वान्तर्यामी है, वह घटघट की बातें जानता है। वह हमलोगों की झूठ को शीघ्रही जानजायगा और समय पर अवश्यही दण्ड देगा। जो मनुष्य ईश्वर से डरते हैं, वे कभी नहीं झूठ बोलसकते। भला, ऐसा कौन होगा जो एक न्यायी राजा को जनाकर झूठ बोले? अतः, हमलोगों को चाहिये कि

ईश्वर से सदा डरतेरहें और झूठ कभी भी न बोलें।

"नहि सत्यात् परो धर्म्मः।"

विद्या।

१. प्रारम्भ। २. इससे लाभ। ३ सर्वोत्तम आभषण। ४. सब धनो से श्रेष्ठ। ५ विद्या प्राप्ति के उपाय। ६. उपसहार विद्या प्राप्ति के स्थान।

१. ऊपर जो शब्द लिखागया है वह 'विद्' धातु से निकला है, जिसका अर्थ है-जानना। क्या जानना? सैकड़ों वाक्यों का अर्थ जानना, विज्ञान का कोई प्रयोग जानना या गणित के किसी जटिल प्रश्न का उत्तर जानना विद्या है? हमारे जानते इस शब्द का पूर्ण अभिप्राय इन्हीं इनीगिनी बातों से नहीं निकलता। जो मनुष्य की छिपी हुई स्वाभाविक शक्तियों को विकसित करदे और जिससे किसी वस्तु का यथार्थ ज्ञान प्राप्त होजाय, उसी का नाम विद्या है।

२. ईश्वर ने सारी शक्तियों के बीज मनुष्यों को देरक्खे हैं। जब इन बीजों को विद्या से भेंट होती है तब यह फटजाते हैं और सारी शक्तियाँ चारों ओर फैलनेलगती हैं, जिनसे मनुष्यों का स्वभाव, चरित्र, चालढाल, रहनसहन, बातचीत सब सुधरजाते हैं। जिन बातों का ज्ञान मूर्ख को स्वप्न में भी नहीं होता, उन्हीं को विद्वान् प्रत्यक्षरूप में दिखादेता है। रेल, तार, जहाज और तोप इत्यादि वस्तुएँ लोगों ने विद्याही के बल से बनाई हैं। संसार की जो जो जातियाँ विद्वान् नहीं हैं वे आजतक जगलों में नंगी रहती और पत्तियाँ पहनती हैं। विद्याही के बल से मनुष्य पृथ्वी के भीतर से सोना, चाँदी इत्यादि द्रव्य निकालकर धनाढ्य होजाते हैं। जब परदेश में रहते हैं तब विद्या ही के द्वारा अपने बन्धु बान्धवों से पत्रव्यवहार कर अपने

को शांत रखते हैं। यह विद्याही का फल है कि प्राचीन लोगों का इतिहास भी हमलोग जानतेजारहे हैं।

३. जिसने विद्यारूपी आभूषण को धारण किया है उसे दिखावटी आभूषणों के पहनने की कुछ भी आवश्यकता नहीं है। जिस प्रकार पत्थरकट के हाथ में पड़कर पत्थर के बेडौल टुकड़े अनुपम सुन्दर मूर्तियाँ बनजाते हैं उसी प्रकार बेडौल मनुष्य भी विद्या पढ़कर सुडौल बनजाते हैं और उनके सभी गुण प्रकट होनेलगते हैं। यही कारण है कि विद्वानों की प्रतिष्ठा राजाओं से भी बढ़कर होती है। राजा तो केवल अपने देश में मान पाते हैं, परन्तु विद्वान् जहाँ जायँ वहीं उनका मान होता है। विद्वान् मरकर भी जीवित रहते हैं, क्योंकि वे अपनी कीर्ति इस संसार में छोड़जाते हैं। यह विद्वानोंही की करतूत है कि वे इस संसार में बड़ेबड़े लोगों के नाम स्थायी करजाते हैं। कहिये, यदि वाल्मीकिजी रामायण न लिखजाते तो श्री रामचन्द्रजी को आज कौन जानता?

४. जिसने विद्या प्राप्त की है वह कभी भूखों नहीं मर सकता, क्योंकि विद्या सदा उसकोधन देतीरहेगी। विद्याधन की रक्षा केलिये ईश्वर ने लोगों को हृदयरूपी एक ऐसा सन्दूक दिया है कि न तो इसे कहीं लेजाने में कठिनाइयाँ झेलनीपड़ती हैं, न इस केलिये ताले रखनेपडते हैं और न रातभर जागनापड़ता है। जहाँ चाहो लिये फिरो, चोर, डाकू या राजा कोई नहीं छीनसकता। और धन खर्च करने से घटता है, परन्तु विद्याधन जितना चाहो खूब खर्च करो, बढ़ताही चलाजायगा। स्त्री, पुत्र, बन्धु बान्धव सब स्वार्थ के कारण प्रेमी हैं, परन्तु विद्या निःस्वार्थ मुझ से प्रेम

रखती है, सदा आनन्द देती है और कभी साथ नहीं छोड़ती। अतः, प्रमाणित होता है कि विद्या सर्वोत्तम धन है, यह अपनी उपमा नहीं रखती।

५ सदा केवल पुस्तकों ही के कीड़े बनेरहने से विद्वान् नहीं होसकते। पुस्तकों का पढ़ना तो केवल एक अंशमात्र है। यदि हम पूरी विद्या प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें चाहिये कि प्रकृति-संसार की वस्तुओं का अवलोकन अच्छी रीति से करें। पुस्तकों को पढ़कर उनपर विचारें कि जो कुछ उनमें लिखा है. ठीक है या नहीं। यदि पढ़नेलिखने से हर वस्तु को ठीक दृष्टि से देखलेने का विवेक नहीं हुआ तो सब व्यर्थ है। यूनान देश का विद्वान् सुकरात बहुत कम पढ़ाहुआ था, परन्तु उसके अपूर्व विवेक के कारण एक बच्चा तक भी उसका नाम जानगया है। पंजाबकेशरी महाराजा रंजीतसिंह पढ़े न थे, परन्तु अच्छेअच्छे विद्वान् उनसे हार मानते थे।

६, विद्या जहाँ मिलजाय, वहीं से सीखलेनी चाहिये। जिसप्रकार अपवित्र स्थान में पड़ेहुए सोने को कोई नहीं छोड़ता उसी प्रकार यदि अपने से नीच के पास भी विद्या हो तो उसे अवश्य प्राप्त करलेना चाहिये, क्योंकि जो विद्वान् है वही बड़ा है। प्रकृति अवलोकन में भी लगारहना चाहिये जिससे जीवन की कठिनाइयाँ आप से आप गलजायँ।

राजा निज देशहि पूजै, विदुष पुजे सर्वत्र।

आशा (Hope)-

१. आरम्भ। २. आशा से लाभ। ३. निराशा। ४. आशा बनी रहनेके उपाय

१. मैं विद्यार्थी हूँ। सबेरे ही नित्यकर्म समाप्त कर पढ़ने

बैठता हूँ । अच्छी रीति से कठिन परिश्रम करता हूँ । समय पर पाठशाला जाता हूँ । रात को दीपक के सहारे पुस्तकें पढ़ता हूँ । गर्मी पड़ती है, नींद सताती है, कीड़े दुःख देते हैं, तौभी मैं पढ़ता ही चलाजाता हूँ । यदि मुझसे कोई पूछता है कि इतना कठिन परिश्रम क्यों करते हो ? मैं उत्तर देता हूँ कि मुझे परीक्षा पास करने की आशा लगी है । कहिये, यदि मुझे यह आशा नहीं रहती तो मैं कभी पुस्तकें छूता ?

कृषक खेत की कड़ी मालगुज़ारी देता है । बारबार ईति-भीति से सतायाजाता है । ग्रीष्मकाल में कड़ी धूप सहकर हल चलाता है । उसको आशा लगी है कि इस कठिन परिश्रम से मुझे खेत की उपज मिलेगी । कहिये, यदि उसे यह आशा नहीं रहती तो वह कभी इतना परिश्रम करता ?

आशा का क्या अर्थ है, इसका क्या अभिप्राय है—ऊपर की जाँचों से हमलोग समझगये होंगे ।

२ आशा ही पर संसार स्थिर है । जितने कार्य हैं सब आशा ही के सहारे चलरहे हैं । इस संसार में बड़ेबड़े नगर, बड़ीबड़ी आलीशान इमारतें, गगनस्पर्शी स्वर्णजड़ित मंदिर, कलकारखाने, तालाबपोखरे दीखपड़ते हैं और चारों ओर चहलपहल, बाजारमंडी, मेलाउत्सव, धर्मकर्म इत्यादि जितने कार्य देखने में आते हैं, वे सब आशाही के फलस्वरूप हैं । 'जब-लग साँस तबलग आस'–यदि ऐसा न होवे, यदि मनुष्य निराश होजाय तो एक पल भी जीना दुर्लभ होजाय । आशा कार्य में परिणत करनेवाली एक ऐसी शक्ति रखती है जिससे मृतप्राय शरीर में भी कुछ क्षण केलिये चेतना आजाती है । यदि ऐसा न होता तो रोगी की चिकित्सा पर कोई क्यों ध्यान देता । बड़े से बड़े कार्य को आरम्भ कराने और चलानेवाली आशा ही

है। यही आशा है कि मनुष्य का सम्बन्ध भविष्यत्काल के साथ जुड़जाता है।

आशा मनुष्य के जीवनरूपी दीये का ढकना है। जिस प्रकार प्रचंडवायु के झोंके से दीया बिना ढकने के बुझजासकता है उसी प्रकार बाहरी दुःख और चिन्तारूपी आँधियों से रक्षा करनेवाली आशा ही है। यदि दुःख में सुख की आशा न होवे तो उस असह्य दुःख से पार पाना कठिन होजाय।

३. निराशा से जीवन में दुःख होता है। ऐसे तो निराशा मनुष्यों के मन में बहुत समय तक नहीं ठहरती या यों कहिये कि ठहरतीही नहीं। यदि किसी प्रकार की आशा पूरी न होने पर पलमात्र केलिये निराशा उत्पन्न हो भी जातीहै तो आशा की चपेट में उसे शीघ्र ही भागनापड़ता है। जिस मनुष्य के मन में आशा चिरकाल केलिये वासकरलेती है वह कार्यसिद्धि की सीमातक पहुँचसकता है। अतः,"आशा हि परमं सुखम्" यही मूलमंत्र व्यवहार में निरत रहनेवाले सांसारिक मनुष्यों का होना चाहिये।

४. जब यह बात सिद्ध होगई कि आशा मनुष्य के जीवन केलिये ऐसी सहायक है तब सदा ऐसा प्रबन्ध करतेरहना चाहिये कि आशा न टूटनेपावे। कभी ऐसी वस्तु की आशा न करें जो असम्भव हो या जो अनिश्चित हो। बहुतसे मनुष्य अनिश्चित आय की आशा करके अपना खर्च बढ़ादेते है, पर जब उनकी वह आशा पूर्ण नहीं होती तब सिर पीटकर रोते हैं। अतः, ऐसा करना सर्वथा अनुचित है, भला बादल को देखकर घड़े फोड़ना मूर्खता नहीं है तो और क्या?

मनुष्य को ऐसे कार्य करने चाहियें, जो उनकी शक्ति के

भीतर हो। जो अपनी शक्ति से बाहर काम उठालेते हैं, उनको सफलता प्राप्त नहीं होती और जब ऐसी अवस्था कई बार होती है तब आशा टूटजाती है और दुःख के ढेर सिर पर आजाते हैं। यदि सब कार्य पूर्ण होतेचलेजाय तो आशा बढ़ती ही जाती है। अतः, हमलोगों को उचित है कि अपनी शक्ति से बाहर कोई काम न करें।

आशा सर्वदा बनीरहने केलिये हमलोगों को ईश्वर पर विश्वास रखना चाहिये। जो ईश्वर पर विश्वास रखता है वह यह समझता है कि मेरी सहायता केलिये एक बड़ी शक्ति उपस्थित है और इस प्रकार उसकी आशा कभी भंग होने ही नहीं पाती। दुनिया ब-उम्मेद क़ायम।

संगति (Society).

१. प्रारम्भ। २. संग की आवश्यकता। ३. कैसी संगति। ४ सत्सङ्ग से लाभ। ५. बुरी संगति। ६. मनुष्य की पहचान संग से होती है। ७. कुसंग में पड़े हुए का बचाव। ८ सत्सङ्ग की आदत।

१. मनुष्य का ऐसा स्वभाव है कि वह सदा समाज में रहना पसंद करता है, सदा दूसरों का साथ ढूँढ़ता है। इस संसार में कदाचित् ही कोई ऐसा मिलेगा जो अकेला रहना चाहता हो। निर्जनवास मनुष्य की प्रकृति के विरुद्ध और कष्टदायक है। यही कारण है कि मनुष्य अपने मन के अनुसार अपना संग पसंद करलेता है।

२. मनुष्य अकेले रहकर अपना जीवन शान्तिपूर्वक कभी व्यतीत नहीं करसकता। जीवन बिताने केलिये बहुतसे मनुष्यों की आवश्यकता होती है। जो भात हम खाते हैं उसके प्रस्तुत करने में एक नहीं, दो नहीं-सैकड़ों मनुष्यों के हाथ लगे होंगे। पहले गृहस्थ ने हलवाहे से खेत जुतवाया

होगा, जिसमें हल की आवश्यकता पड़ीहोगी । हल लकड़ी और लोहे से बनता है, जिसके बनाने में लोहार, बढ़ई इत्यादि कई मनुष्यों के हाथ लगे होंगे। जब खेत तैयार हुआ तब बीज लाने, उसे खेत में डालने, पानी पटाने और उसे रक्षा करने इत्यादि कामों में कई मनुष्य लगगये होंगे । जब धान पकगया होगा तब उसे काटकर दौनी करने तथा चावल बनाने में कई मनुष्यों की आवश्यकता पड़ी होगी। उस चावल को नौकर बेचनेवाले से खरीदकर लाया और रसोइये ने भात बनाया तब कहीं हमें खाने को मिला। यदि इतने मनुष्यों के हाथ न लगेहोते तो वह भात जिसको हम अपनी कमाई हुई वस्तु समझते हैं, हमारे भाग्य में नहीं होता। केवल भोजन ही नहीं संसार में जितनी, मनुष्य के काम की चीजें हैं, सब संग ही से प्राप्त होती हैं। चरित्र पर शिक्षा की अपेक्षा संगति का प्रभाव अधिक होता है। 'संसर्गजा दोषगुणा भवन्ति' अर्थात् संसर्ग से ही मनुष्य के चरित्रसम्बन्धी दोष और गुण उत्पन्न होते हैं । इससे प्रत्यक्ष जानपड़ता है कि मनुष्य के जीवनसम्बन्धी सुखदुःख सब संग ही के ऊपर निर्भर हैं।

३. जब यह जानगये कि हमलोगों को संगति की आवश्यकता है तब यह देखलेना चाहिये कि जिसके संग जीवन बिताना है उसका चरित्र कैसा है, क्यों कि संगी के चरित्र का प्रभाव अलक्षितभाव से हमलोगों के चरित्र पर पड़ता है। जो मनुष्य अच्छे लोगों के बीच में रहता है उसके संस्कार भी अच्छे होते हैं और जो बुरों के साथ रहता है उसके बुरे। अतः, हमलोगों को उचित है कि अच्छों की संगति अर्थात् सत्संग में रहें और कुसंग का नाम तक भी न लें।

४. सत्संग मनुष्य की आत्मा को उच्च बनाता, बुद्धि की जड़ता को हरता, वाणी मेँ सत्यता लाता, प्रतिष्ठा को बढ़ाता, पाप को दूर करता, चित्त को प्रसन्न रखता और चारोँ दिशाओँ में यश को फैलादेता है। इससे बुरे मनुष्यों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है, जिससे वे सुधरजाते हैं। यह सत्संग ही का फल है कि फूलों के साथ कीड़े देवता के मस्तक पर पहुँचजाते हैं। काजल आँखों में शोभता है। दूध के साथ पानी भी बिक-जाता है। गङ्गाजी में पड़कर सभी वस्तुएँ पवित्र होजाती हैं। पान के साथ तुच्छ पत्ते भी बड़ों के कमलकरों में पहुँचजाते हैं। वायु की संगति या अपवित्र वस्तुएँ भी उत्तम स्थानों में जा विराजती हैं। चन्दन की संगति से दूसरे वृक्ष भी सुगन्धित होजाते हैं। सचमुच, सत्संग का फल बड़ा ही आश्चर्यजनक है। वे पुरुष धन्य हैं जिनको सदा सत्संग ही का वास है।

५. अपने घोड़ों को गधों के घर में बाँध दो, और कुछ नहीं तो दुलत्ती चलाना अवश्य ही सीखजायगा। कोयले की दलाली करो, हाथ अवश्य काले हो जायँगे। किसी वस्तु को लेकर नमक के बोरे में रखदो, कुछ दिनों के बाद वह भी नमक ही होजायगी। यही अवस्था मनुष्यों की भी है। अच्छे लोग जब बुरों की संगति में रहनेलगते हैं तब उनकी बुद्धि भ्रष्ट होजाती है, दुष्ट पुरुषों से रीतिव्यवहार करनेलगजाते हैं और अंत में बुरे ही बनजाते हैं। यदि तुम्हारे पास ऐसे लोग रहते हैं जो मद्य पीते, जुआ खेलते और अन्य दुष्टकर्म करते हैं तो अवश्यही तुम भी वैसेही होजाओगे। संभव है कि इस चपेट्टे में आकर तुम्हें कठिन विपत्तियों का सामना करनापड़े। अतः, यदि तुम सज्जन होना चाहते हो तो कुसंगति से बचो।

६ मनुष्य की पहचान संगति से होती है । यदि वह बुरे की संगति में रहता है तो लोग उसे बुरा ही समझेंगे । इसी प्रकार अच्छी संगति में रहनेवाले को लोग अच्छा ही समझते हैं। यदि कलाल दूध लिये जारहा हो तो उसे देखकर सबलोग यही समझेंगे कि वह मदिरा लिये जारहा है । खर्बूज़े को देखकर खर्बूजा रंग बदलता है । इसी प्रकार एक मनुष्य को देखकर दूसरा मनुष्य कार्य करता है । अतः, यदि कोई कहे कि मैं बुरी संगति में रहकर अच्छा बनारहूँगा तो उसका यह कहना वैसाही असम्भव है, जैसे वायु चलने पर पत्तों का नहीं हिलना ।

७. यदि कार्यवश अच्छे लोग बुरी संगति में पड़जायँ तो उन्हें उचित है कि वे अपनी दृढ़ता को न छोड़ें । अपनी चाल इस प्रकार रक्खें कि बुरों के दुष्ट गुणों का प्रभाव उन पर न पड़े । सदा अच्छे काम करतेरहें और बुरों को धीरेधीरे समझातेरहें । ऐसे काम में पहले तो कठिनाइयाँ झेलनी पड़ेंगी, परन्तु कुछ ही दिनों में वही कुसंग सत्संग म परिणत होजायगा ।

८. सत्संग का अभ्यास बालकों को बचपन ही से कराना चाहिये । बालकों का हृदय कच्चा होता है, उनपर दूसरों का रंग शीघ्रही चढ़जाता है । बुरी संगति में पड़कर बच्चे गालियाँ सीखलेते हैं और अनेक प्रकार की कुचेष्टाओं के वशीभूत होजाते हैं। ये बुरी आदतें उन्हें जीवनभर दुःख देती हैं और कठिन परिश्रम करने से भी नहीं छूटतीं। अतः, मातापिता को उचित है कि वे बच्चों पर बाल्यावस्थाही से कड़ी दृष्टि रक्खें, किसी अवस्था में भी उन्हें बुरों की संगति में न जानेदें ।

प्रेम (Love).

१. आरम्भ। २ प्रेम का प्रभाव। ३ प्रेम सुख की जड है। ४ प्रेम का उपयोग और बुद्धि के साथ उसका सम्बन्ध। ५ प्रेम स्थायी रहने के उपाय। ६ उपसहार।

१. अनेकों शक्तियाँ मनुष्यों के हृदय में भरीहुई हैं। ये हमलोगों के दृष्टिगोचर नहीं होतीं, परन्तु उनके विकाश और अभाव का पता हमलोग लगालेते हैं। इन्हीं शक्तियों में से प्रेम भी एक सुमधुर प्रभावकारिणी शक्ति है। जिस कार्य के करने में और शक्तियाँ थकजाती हैं, वह इसके बायें हाथ का खेल है। औरऔर शक्तियाँ भी प्रेम के अतुलप्रभाव के कारण इसकी अनुगामिनी बनजाती हैं। सारा संसार केवल प्रेम ही की डोरी में बँधाहुआ है।

२. किसी गृहस्थ का घर देखिये, वह क्या है? थोड़ेसे ऐसे मनुष्यों का समूह है जो आपस में प्रेम रखते हैं। माता-पिता, पुरुष स्त्री, भाई बहिन सब प्रेम का ही प्रकाश है। यही प्रेम कहीं मा का रूप धारण कर अपने बेटे की जुदाई में तड़प-रहा है। यही प्रेम था जिसने सीता को राम के साथ वन में भेजा। इसी प्रेम ने राजा दशरथ को मारडाला। यही प्रेम मनुष्यों को ईश्वरभक्ति में लगाता है। संसार में ऐसा कोई धर्म या मत नहीं है जिसने प्रेम को ईश्वरप्राप्ति का द्वार न माना हो।

प्रेम से लोहा भी मोम होजाता है। प्रेमरूप रस्सी को न आग जलासकती है, न पानी गला सकता है और न लोहा काट सकता है। बड़ेबड़े वीर जो तलवार से भी वश में नहीं होसकते-केवल प्रेम से ऐसे वश में होजाते हैं कि उनको पीछा छुड़ाना कठिन होजाता है। जो वीर एक छोटीसी गाली केलिये बड़े से बड़े मनुष्य का भी सिर काट सकता है, वही

अपने छोटे बच्चे को गोद में लिये हुए प्रेम के कारण उसकी तुतली बोली में गालियाँ सुनतारहता है और कुछ भी रंज नहीं होता । निस्सन्देह प्रेम एक अद्भुत् शक्ति है । प्रेम मेरे जीवन के आनन्द का कारण है। पुस्तक के सब पृष्ठ जिस प्रकार गोंद से जुड़े रहते हैं उसी प्रकार प्रेम मनुष्यमात्र केलिये गोंदका काम करता है । यदि प्रेम न हो तो मनुष्य आपस में लड़कर कटजायँ ।

३. प्रेम सब केलिये सुख की जड़ है । जिन मनुष्यों में प्रेम होता है वे आपस की भलाई केलिये परिश्रम करते हैं, जिससे उन्हें अपूर्व सुख मिलता है, परन्तु फूट रखनेवाले मनुष्य शीघ्र नष्ट होजाते हैं। दरिद्र गृहस्थ के घर में यदि प्रेम हो तो वहाँ दुःख का वास नहीं होसकता, परन्तु जिस घर में प्रेम नहीं, वह धनवान् ही क्यों न हो वहाँ सुख कभी नहीं ठहर सकता। देखो, प्रेम की कमी के कारण कौरवों और पाण्डवों का नाश हुआ, पृथ्वीराज और जयचन्द ने भारतवर्ष की दुर्गति करदी । यह प्रेम ही है कि बृटिश जाति संसारभर पर राज कररही है । अतः हम लोगों को उचित है कि आपस में प्रेम रक्खें ।

४. हमलोगों का जीवन अमूल्य और दुर्लभ है । बहुतसे मनुष्य इसका अर्थ नहीं समझते और न इसके कर्तव्य को पूर्ण करते हैं । इसी प्रकार प्रेम जो हमलोगों की एक बड़ी कल्याणकारिणी शक्ति है, उसका भी कुछ लोग बहुत बुरा प्रयोग करते हैं। शुद्ध प्रेम वास्तव में सुखदायक है, परन्तु इसके अनुचित उपयोग से मनुष्य भाँति भाँति के दुःख उठाते हैं। कुछ लोग दाव लगाकर किसी धनी के मित्र बनजाते हैं और अपना बुरा उद्देश्य पूर्ण कर वहाँ से चलदेते हैं। इन बातों से संसार में

अशान्ति फैलती, लोगोँ का आपस मेँ विश्वास उठजाता और आनन्द का कहीँ नाम नहीँ रहता है।

प्रेम का उपयोग बुद्धि के साथसाथ होने से 'सोने में सुगन्धि' का फल देता है। जिस कार्य में प्रेम और बुद्धि दोनों लगपड़ते हैं, वह अवश्य सिद्ध होता है। प्रेम मेरे हृदयसरोवर मेँ आनन्दरूप कमल खिलाता है और बुद्धि उसपर भौंरे के समान पुष्पपराग का पान करती है। जहाँ देखो वहीँ प्रेम और बुद्धि का सम्मिलित विस्तार है।

५. स्थायी प्रेम की जड़ निष्प्रयोजनता और परोपकार है। हमलोगोँ को दूसरे की भलाई करनी चाहिये, क्योंकि जो मनुष्य सदा अपना ही प्रयोजन सिद्ध करने मेँ लगा रहता है वह सच्चा प्रेमी नहीँ होसकता। छली पुरुष दिखलाने केलिये दूसरोँ से प्रेम करते ह, परन्तु कार्य सफल होते ही झट दूर होजाते ह। इसको प्रेम नहीँ कहते यह तो धोखा है। अतः ऐसे धोखेबाजोँ से सदा सावधान रहना चाहिये। सच्चा प्रेम केवल भले और धर्मात्मा पुरुषोँ मेँ होता है।

६. प्यारे भाइयो, अपने मङ्गल केलिये, देश को चैतन्य करने केलिये तथा यहाँ की कलाओँ की उन्नति केलिये प्रेम की बड़ी आवश्यकता है। जब हम अपने भाइयोँ को प्रेम की दृष्टि से देखेँगे और अनैक्य को दूर करदेँगे तभी हमारा कल्याण होगा, क्योंकि प्रेम ही जाति, देश और समाज का सर्वस्व है।

क्रोध (Anger)।

१ क्रोध क्या है। २. क्रोध का फल। ३ क्रोध के कारण। ४ क्रोध रोकने के उपाय। ५. क्रोध की मात्रा। ६. उपसहार।

१. अपनी इच्छा के प्रतिकूल कोई कार्य होने पर मन में जो विकृतभाव उत्पन्न होता है उसी का नाम क्रोध है।

महात्माओं ने इसे पाप का मूल कहा है। मनुष्य की बुरी आदतों में यह भी एक है।

२ क्रोध से स्वास्थ्य में बड़ी हानि पहुँचती है। क्रोधी मनुष्य का शरीर दुर्बल, पतला और शुष्क होजाता है। जब मनुष्य क्रुद्ध होजाता है तब उसका मुँह तमतमा जाता है, आँखें लाललाल होजाती हैं, साँस शीघ्रता से चलनेलगती है और शरीर भी काँपने लगता है। जिसमें सहनशक्ति नहीं है वही मनुष्य क्रोध में आपे से बाहर होजाता है, परन्तु जो धीरगंभीर है, जिसके मस्तिष्क में शक्ति और शरीर में बल हैं. वह छोटीछोटी बातों पर कभी नहीं क्रोध करता। क्रोधी मनुष्य सबको अपना शत्रु बनालेता है और सर्वदा अपनी हानि करतारहता है। सचमुच. क्रोधी स्वभाव का होना बड़े भारी पाप का फल है।

क्रोध एक नशा है। जैसे मद पीकर मनुष्य पागल होजाता है उसी प्रकार क्रोध में भी मनुष्य पागल होजाता है। उसकी बुद्धि जातीरहती है, उसे अपनापराया कुछ भी नहीं सूझता और बात की बात में अनर्थ करडालता है। अनर्थ करने के पीछे जब क्रोध उतरजाता है तब अपने किये पर उसे पछतानापड़ता है।

३. जब कोई अपने को दूसरों से बड़ा और बुद्धिमान् समझता है तब उसे क्रोध होता है। ऐसा मनुष्य अपनी बातों को अच्छी और दूसरों की बातों को बुरी समझता है, इसलिये जब कोई उसके कथन के विरुद्ध कोई कार्य करता है तब वह क्रुद्ध होजाता है। इसी प्रकार जब किसी के द्वारा अपनी हानि होती है तब उसपर लोगों को क्रोध आता है, क्योंकि हानि करनेवाले को वे अपना शत्रु समझनेलगते हैं।

४. क्रोध की सब से अच्छी दवा विचार है। जिस समय क्रोध आवे उस समय थोड़ी देर केलिये चुप होजाओ। यदि होसके तो वहाँ से अलग होकर विचार करने लगजाओ और थोड़ासा ठंढा पानी पीलो। जहाँ तक बने क्रोध को पहले ही से रोकने का यत्न करो, कभी प्रकट न होने दो। यदि एकबार कोध प्रकट हुआ तो फिर उसे रोकना कठिन है। यदि तुम्हारा अभ्यास ही क्रोध का पड़गया हो तो रात को सोने के पहले थोड़ी देर केलिये उसपर विचार करलो और भगवान् से विनय करो कि यह अभ्यास छूटजाय। यदि किसी से कुछ अपराध होजाय तो क्रोध न करके गर्मी के साथ उसका दोष उसे समझादो। इस समझाने का प्रभाव उसपर अधिक होगा, यहाँ तक कि वह सुधर ही जायगा। खूब याद रक्खो कि बिना सोचे समझे कभी क्रोध न करना चाहिये।

५. मनुष्य को थोड़ा बहुत क्रोध होना स्वाभाविक है, परन्तु जहाँ तक क्रोध कम आवे वही अच्छा है। सबही उचित कारण से क्रुद्ध होजाते हैं, परन्तु सदा क्रोध से जलते रहना अच्छा नहीं। कोई कोई बिना कारण क्रुद्ध होकर अपना बल दूसरों पर दिखाना चाहते हैं, यह बात बहुत ही बुरी है। हाँ, मनुष्य को इतना सीधा भी नहीं होना चाहिये जिस से कोई कुछ न समझे, इसलिये जिसके हाथ में कुछ अधिकार है उसे विचारपूर्वक अपनी बुद्धि से काम लेने की बड़ी आवश्यकता है।

६. संसार में जो सदैव हँसीखुशी से रहते हैं, सुख का जीवन उसीका है और वेही संसार में सुख भोग सकते हैं और जो ईर्षा, द्वेष और क्रोध से जलाकरते हैं वे अपने दुस्स्वभाव का आपही दण्ड भोगाकरते हैं।

उद्यम (Industry).

१. उद्यम क्या है? २ आवश्यकता। ३. उद्यमी पुरुष। ४. निरुद्यमी पुरुष। ५. उद्यम से लाभ। ६. प्रकृति और उद्यम। ७ उपसंहार।

१. इन्द्रियों के द्वारा किसी पदार्थ की प्राप्ति के लिये जो प्रयत्न किया जाता है उसीको उद्यम कहते हैं।

२. ईश्वर ने प्राणियों के लिये इस संसार में सभी पदार्थ दे रक्खे हैं, परन्तु मनुष्य के लिये और ही प्रबन्ध है और अन्य जीवों के लिये और ही। जानवरों के लिये खाल ही वस्त्र है, चारा ही भोजन है और जंगल ही घर है, परन्तु मनुष्य को प्रत्येक वस्तु के लिये उद्यम करना पड़ता है। यदि वह घर न बनावे कहाँ रहे, खेती न करे, क्या खाय और वस्त्र न बुने तो क्या पहने? इससे स्पष्ट विदित होता है कि इस पृथ्वी पर मनुष्य के लिये उद्यम की बड़ी आवश्यकता है।

३. मैं उद्यम को बहुत प्यार करता हूँ, क्योंकि मुझे फिक्र है कि उद्यम नहीं करूँगा तो कहाँ से खाऊँगा। सबेरे उठ कर नित्य कर्म समाप्त किया और लगा उद्यम करने। इसी धुन में १२ बज गये। भोजन आया, आनन्द से खा रहा हूँ। वाह! खूब ही स्वादिष्ट है। ठीक है, भूख में जो मिलता है वही अमृत है। फिर कार्य करने लग गया। जो खाया था पच गया, उससे लहू बना और शरीर पुष्ट हुआ। सन्ध्या हुई। दिन भर काम करते करते थक गया हूँ। चारपाई पर जाते ही नींद आगई। करवट फेरते ही भोर हो गया। वाह! कैसा आनन्द है। दण्ड पेलता हूँ और मौज करता हूँ। न दवा की आवश्यकता, न बीमारी की चिन्ता।

४. अच्छा, अब भारत के धनी पुरुषों की अवस्था

देखिये। ये लोग बिना हाथ पाँव डुलाये दाल रोटी खा सकते हैं, इसलिये इन्होंने यही ठान लिया है कि हम कुछ नहीं करेंगे, मुँह पर यदि मक्खियाँ भी बैठ जायँ तो नहीं उड़ावेंगे। बस आठ नौ बजे पलंग पर से उतरे। इधर उधर डोल कर गप्पाष्टक किया। फिर अच्छे से अच्छा भोजन निगला और गद्दी पर जा डटे। हाय! साँझ होती ही नहीं, दिन नहीं हुआ, शैतान की आँत हो गई। किसी तरह पड़े पड़े साँझ हो चली, यदि यार दोस्त आ गये तो ताश ही शतरंज में जी बहला। फिर जा डटे बग्गी पर, बग्गी पर से उतर कर फिर आये गद्दी पर। रात हुई, भोजन किया और लगे नींद की बाट देखने। हाय, नींद आती ही नहीं। भला, नींद कैसे आवे? दिन सोना, रात सोना। किसी तरह पलकें भी लगीं तो सपना ही देखते हैं। तिस पर भी शिकायत यह कि भोजन पचता ही नहीं। लगे पाचक और दवाओं की सहायता लेने। भला, एक दो दिनों की बात रहे तब न दवा काम करे, बेचारी दवाएँ भी थक जाती है। भला, ऐसे रईसों को आनन्द कहाँ। रात दिन रोगी बने रहते हैं और चिन्ता माथे चढ़ जाती है। समझा आपने कि इसका क्या कारण है? केवल यही न कि उद्यम से भागना!

५. शरीर से, वचन से या मन से हम लोग कोई न कोई कार्य सदा करते ही रहते हैं। जो आलसी है वह भी मन में कुछ न कुछ विचारता ही रहता है। "खाली मन पिशाच का कारखाना।" यदि तुम्हारे पास करने के लिये कोई अच्छा कार्य न हो तो शैतान तुम्हें काम दे देगा। तुम बुरे कामों को करने लग जाओगे और तुम्हारे मन में बुरे बुरे भाव उत्पन्न हो जायँगे। इसलिये यदि तुम इन बुराइयों से बचना चाहते

हो तो सदा एक न एक अच्छा कार्य तुम अपने हाथ में लिये रहो। इससे सदा तुम सदाचारी और शीलवान् बने रहोगे, नहीं तो शतरंज तुम ही खेलोगे, ताश पर तुम्हारा ही मन जायगा। इतना ही नहीं, न मालूम तुम कौन कौन से बुरे कार्य कर डालोगे।

रोज काम में आने वाले ताले की ताली में जंग नहीं लगता, सदा चमकती रहती है। बस, यही हालत शरीर की है। यदि इससे काम न लोगे तो बेकार हो जायगा। भगवान् ने तुम्हें यह देह इसलिये नहीं दी है कि इसे कोतल घोड़े की तरह गद्दी पर डाले रक्खो। यदि ऐसा करोगे, इससे परिश्रम न लोगे तो अवश्य यह शरीर तुम से छीन लिया जायगा। काम न करने से शरीर गड़बड़ा जाता है और रोग गले पड़ जाते हैं जिससे अकाल मृत्यु भी हो जाती है। शारीरिक परिश्रम से शरीर का स्वास्थ्य ठीक रहता है और मानसिक श्रम से मन को शान्ति मिलती है। सारांश यह है कि नित्य उद्यम करते रहो एक मिनट भी व्यर्थ न जाने दो। इससे तुम्हारे जीवन में सफलता होगी और सारे दुःख कट जायँगे। उद्यम से एक छोटा मनुष्य भी बड़ा हो जाता है और सारे संसार की दृष्टि उस पर पड़ जाती है।

जितने नामी पुरुष इस संसार में हो गये हैं, वे समय को सदुपयोग में लाकर सदा उद्यम में रत रहते थे, इसीसे उनके जीवन बहुत बड़े जान पड़ते हैं। काहिलों ने संसार में कुछ भी नहीं किया, इसीलिये उनके जीवन का कुछ भी पता नहीं लगता। अब यह बात सिद्ध हो गई कि समय का अंदाज भी उद्यम ही से होता है। अतः, यदि तुम अपना जीवन बड़ा बनाना चाहते हो तो सदा उद्यम में लगे रहो।

५. उद्यम के लिये प्रकृति के प्रतिकूल मत चलो। नदी की धारा के प्रतिकूल तैरने में बड़ा दुःख है और डूब जाने का भय है। प्रकृति के एक छोटे से नियम को भी तोड़ने से उसका बदला बहुत दिनों तक वह लेती रहती है। बहुत से मनुष्य बिचारते हैं कि हम जल्दी जल्दी कार्य करके अथवा निरंतर काम में लगे रह कर अपना समय बचावेंगे, परन्तु यह एक भारी भूल है। ऐसा करने से कार्य और स्वास्थ्य दोनों बिगड़ जाते हैं। उचित विश्राम लेते हुए धीरे धीरे दृढ़ता और नियम-पूर्वक उद्यम करने ही से सफलता प्राप्त होती है।

७. चाहे तुम्हारा जन्म कैसे ही धनाढ्य और प्रतिष्ठित कुल में क्यों न हुआ हो, चाहे तुम बड़े ही बुद्धिमान् क्यों न हो, चाहे तुम्हारे कैसे ही हितकारी मित्र और कितने ही ऐश्वर्यवान्, शक्तिवान् सहायक क्यों न हों, परन्तु सदाचार और उद्यम के बिना तुम्हारी उन्नति प्रकृति की दृष्टि में कभी भी नहीं हो सकती।

"उद्यमेन हि सिध्यन्ति, कार्य्याणि न मनोरथैः।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः॥"

नम्रता (Modesty).

१. परिचय। २. लाभ। ३. नम्रता प्राप्त करना। ४. विनयी पुरुष। ५. नम्रता की मात्रा। ६. उपसंहार।

नानक नन्हें हो रहो, जैसी नन्ही दूब।
घासपात सब सूखिगो, दूब खूब की खूब॥

१. नम्रता वह गुण है जिसकी कृपा से मनुष्य में सरलता आती और वह संसार भर का प्यारा बनता है। नम्रता में हठ, अभिमान, दंभ और किसी प्रकार की दिखावट की कुछ

भी गंध नहीं। नम्रता हमारे मानस का एक उत्तम भूषण है। और अपनी योग्यता के यथार्थ ज्ञान की कसौटी है।

२. नम्रता के बिना हमारा चरित्र और कुछ नहीं, एक निःसार पदार्थ है। जिसमें नम्रता नहीं, जो अपनी प्रशंसा—अपनी शेख़ी–चारों ओर हाँकता फिरता है, उस पर संसार हँसता है, वह संसार की दृष्टि में तुच्छ गिना जाता है। जो नम्र है, वह वशीकरण मन्त्र जानता है। वह संसार को अपने वश में कर लेता है। उसके सभी अवगुण इसी नम्रता की कृपा से छिप जाते हैं। नम्रता मनुष्य को और ऊँचा बना देती है।

मान लो कि तुम्हारा अफ़सर किसी अपराध के कारण तुम पर अप्रसन्न है और वह सारी शक्ति से तुम्हारी हानि करने के प्रयत्न में लग गया है। ऐसी अवस्था में तुम्हारे पास वह कौनसा मन्त्र है जिससे वह फिर तुम पर प्रसन्न हो जाय? यदि तुम उससे लड़ाई करो, यदि अपनी सफ़ाई के लिये तुम दलीलों और सुबूतों के ढेर पेश करो तो क्या फल पाओगे? क्या इन कामों से उसका मन फिरेगा और वह तुम्हें क्षमा करेगा? हम समझते हैं कि तुम्हारी ऐसी सभी चेष्टाएँ निष्फल होंगी। अब यदि तुम नम्रता मन्त्र का प्रयोग करो तो उसकी अप्रसन्नता किरकिरी हो जायगी और फिर तुम उसके प्यारे बन जाओगे। भला ऐसा कौन निठुर होगा जो तुम्हारी झुकाई हुई गर्दन पर अपनी नंगी तलवार चलावे?

३. नम्रता मनुष्यों में अच्छी संगति और पूरी विद्या से आती है। अच्छी चाल-ढाल, उत्तम आचार-व्यवहार और ऊँचे उद्देश्य और विचार से इसकी पुष्टि होती है। देखो, जब वृक्ष फूलते फलते हैं तब उनकी शाखाएँ झुक जाती हैं। जब बादल जल से पूर्ण होकर बरसने लगता है तब वह नीचे उतर

आता है। समुद्र में मोती नीचे रहते हैं और तृण ऊपर उतराता है। इसी प्रकार जो सचमुच विद्वान्, गुणी और सज्जन हैं वे सदा नम्र बने रहते हैं, उनमें छिछोरपन कुछ भी नहीं झलकता। वे अपने गुण इधर उधर गाते नहीं फिरते, परन्तु ये आप से आप बिजली की रोशनी की तरह फूट फूट कर बाहर निकल पड़ते हैं। अतः, हम लोगों को उचित है कि सदा नम्र बन कर समाज के कल्याण में लग पड़ें और किसी प्रकार का द्वेषभाव मन में न रक्खें। जब हम नम्र बनेंगे तब दूसरे भी हमारे आत्मसम्मान में कमी न होने देंगे।

४. इस संसार में जितने बड़े बड़े पुरुष हो गये हैं उनमें नम्रता का गुण कूट कूट कर भरा हुआ था। क्या कारण था कि श्रीकृष्ण भगवान् ने युधिष्ठिर की यज्ञसभा में बड़े कार्यों को छोड़ केवल आगत ब्राह्मणों के पैर धोने का काम स्वीकार किया? आप द्वारका के राजा हो विदुर के घर रूखा-सूखा साग खाने गये थे, क्यों? आपने अर्जुन के रथ के सारथि का काम किया, क्यों? यही न कि नम्रता के कारण? तब हम लोग क्यों अकड़ कर चलते हैं? यह अभिमान नहीं तो और क्या? महात्मा न्यूटन को सभी जानते हैं, वे बड़े भारी गणितज्ञ हो गये हैं। इनका यह वाक्य—"हमारे सामने ज्ञान का यह बहुत ही बड़ा सीमारहित सागर फैला हुआ है और हम किनारे पर केवल छोटे छोटे पत्थर के टुकड़े चुन रहे हैं"—कितनी नम्रता से भरा हुआ है। इन महापुरुषों से हमें नम्रता की शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

५. उपर्युक्त कथन से यह तात्पर्य नहीं समझो कि व्यर्थ दूसरों की झूठी बातों पर भी हाँ में हाँ मिलाओ। अवश्य ही झूठी बातों का खण्डन और सच्ची बातों का प्रतिपादन युक्ति

के साथ करो, परन्तु पहले, कहनेवाले की बातों का यथार्थ तत्व समझ लो और उसकी पदवी पर विचार कर लो। वहीं तक विनयी बनो जिसमें प्रतिष्ठा भङ्ग न हो, परन्तु अपने मुँह से अपना महत्व स्थापित करना, मियाँमिट्ठू बनना और अधमता प्रकट करना है।

६. दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि अँगरेजी पढ़े-लिखे युवकों में नम्रता नाममात्र को पाई जाती है। वे घमण्ड, दम्भ और बाहरी दिखावट के वशीभूत दीख पड़ते हैं और अपने पूर्वजों को बहुत ही नीच समझते हैं। हम आशा करते हैं कि वे—"यदि हम अपने पिता को मूर्ख और अपने को बुद्धिमान् समझते हैं तो हमारे पुत्र भी हमको इसी प्रकार समझेंगे।" इस वाक्य के अभिप्राय पर ध्यान देकर अपने हठ को छोड़ देंगे। "यथा नवहिं बुध विद्या पाये।"

व्यापार (Trade)

१. आरम्भ। २. व्यापारी के गुण। ३. लाभ। ४ हमारे व्यापार की उन्नति कैसे हो सकती है? ५. उपसहार।

१. खरीदने और बेचने के धंधे को अर्थात् एक वस्तु किसीको देकर उससे दूसरी वस्तु लेने को व्यापार कहते हैं। व्यापार शब्द का अर्थ बहुत ही सरल और अत्यन्त तुच्छ जान पड़ता है, किन्तु वह बड़ा ही व्यापक, अत्यन्त गहन और महत्व से परिपूर्ण है। राजकीय विषयों में सार्वभौम-सत्ता का जो महत्व है वही महत्व काम-धंधों में व्यापार का है। सार्वभौम-सत्ता की भाँति व्यापार भी सर्वव्यापक और गहन है।

२. भार्वभौम-सत्ता के चलाने में जैसे राजकार्य की निपुणता, गणन कौशल (हिसाबी चतुराई), लोक व्यवहारज्ञता,

तीक्ष्ण-बुद्धि, दूरदर्शिता आदि गुणों की आवश्यकता है, वैसे ही व्यापार में भी है। व्यापार में तो इनका पद पद पर काम पड़ता है। ये सारे गुण एक व्यक्ति में न हों तो भी राजकार्य चल सकता है। न्यारे न्यारे काम के लिये उस उस काम के जाननेवाले मुख्य मुख्य पुरुष रख कर राजकार्य चलाया जा सकता है, परन्तु व्यापार में यह बात नहीं है। व्यापारी में इन सब गुणों का एकत्र संग्रह होना चाहिये। लोगों की रुचि कैसी है, देश में कैसे माल की अधिक खपत होती है, देश विदेश का किस प्रकार का माल किस जगह पर खप-जायगा, इत्यादि समस्त बातों की पूरी पूरी जानकारी व्यापारी को होनी चाहिये। कौनसी वस्तु कहाँ पर कितनी पैदा होती है, यह जानना व्यापारी का काम है। इस बात को परख लेने का काम भी व्यापारी का है कि किस किसके पास, कहाँ कहाँ पर कितनी कितनी सम्पत्ति है और कौन देश कितना धनवान् है। जैसे मदारी बीन बजा कर सर्प को अपनी ओर खींच लेता है और उसे मनमाने तौर पर नचाता है, वैसे ही व्यापारी को ऐसी बाँसुरी बजाना याद होना चाहिये कि संसार का प्राणों से भी बढ़ कर प्यारा धन खजानों से निकल निकल कर उसके पास आ जावे और वह उसे इधर उधर नचाते हुए काम में ला सके। सारांश यह है कि व्यापारी में जिन जिन मुख्य गुणों का पूर्ण समावेश होना चाहिये वे ये हैं—

उद्योग, उत्साह, पक्का विचार, कार्यतत्परता, धंधे का ज्ञान, मनुष्य की परख, पूरी जानकारी, बोलने की चतुराई और स्वावलम्बन।

२. 'लक्ष्मीर्वसति वाणिज्ये'—वाणिज्य में लक्ष्मी वास करती है। सचमुच यह उक्ति बड़े महत्व की है। जो व्यापारी

है उसीका घर सम्पत्ति से परिपूर्ण है। व्यापार के द्वारा ही अँगरेज जाति ने भारत के अधीश्वर बनने का सौभाग्य प्राप्त किया है। व्यापार के कारण ही कालीघाट जैसा एक क्षुद्र ग्राम एक बड़ा सम्पत्तिशाली नगर बन गया है और उसका कलकत्ता नाम पड़ा है। नगरों की पूर्ण उन्नति, परगनों का वैभव, देश की समृद्धि, प्रजा का आनन्द-विलास, निर्धनों की रोजी और सब प्रकार के उद्योग व्यापार से ही उत्पन्न होते हैं।

अपने पैरों पर खड़े होने का अर्थात् स्वावलम्बन का गुण व्यापार ही मनुष्य में कूट कूट कर भरता है। दूसरे के बन्धन में रहना और अपने विचार के प्रतिकूल उसीकी आज्ञा से सब कार्य सम्पादन करना, मनुष्य क्या पशुपक्षी भी नहीं चाहते। व्यापारियों को जो स्वतन्त्रता रहती है, वह दूसरों के मुँह ताकने वाले नौकरों और गुलामों को नहीं प्राप्त हो सकती।

कलकारखाने और कलाकौशल की वृद्धि करने वाला भी व्यापार ही है। जब कारीगर लोगों की बनाई हुई वस्तुएँ दूसरे देशों में जाकर प्रतिष्ठा के साथ भरपूर खपती हैं, तब उनका साहस बढ़ जाता है और नये नये ढंग सोच कर अच्छे से अच्छा माल प्रस्तुत करने में लग पड़ते हैं। कारीगरों को स्पर्द्धा करने का सुयोग भी व्यापार द्वारा प्राप्त होता है। जब भिन्न भिन्न स्थानों की बनी हुई एक ही प्रकार की वस्तुएँ दृष्टिगोचर होती हैं तब उन सबों के गुण और अवगुण ज्ञात हो जाते हैं और अच्छी से अच्छी वस्तुएँ तैयार करने का प्रयत्न होने लगता है।

व्यापार ने मनुष्य जीवन पर बड़ा प्रभाव डाला है। जो लोग कच्चा मांस खाकर और वल्कल पहन कर खोह में रहते हुए अपना जीवन व्यतीत करते थे, इस व्यापार के प्रताप ही

से वे सभ्यता धारण कर धनशाली एवं क्षमताशाली बन गये हैं। व्यापार में देशाटन करना होता है, जिससे भिन्न भिन्न देशों के रीति व्यवहार और धर्म कर्म का पता लगता है। मनुष्य की बुद्धि परिपक्व होकर सहनशीलता पैदा करती है और कूप मंडूकता जाती रहती है। वास्तव में सभ्यता फैलानेवाला व्यापार ही है।

व्यापारी कभी निठाला नहीं बैठ सकता, जिससे बुरी बुरी वासनाएँ उसके मन में नहीं आने पातीं। उसे परिश्रम करने का अभ्यास पड़ जाता है तथा भिन्न भिन्न देशों में चक्कर लगाना पड़ता है जिससे वह सदा नीरोग और आनन्दित रहा करता है।

व्यापार से देश की बड़ी भलाई होती है। जब अकाल पड़ता है तब व्यापारी लोग ही अन्य देशों से अन्न लाकर देशवालों के प्राण बचाते हैं। व्यापार ही से घर बैठे हम हज़ारों मील पर की वस्तुएँ प्राप्त कर लेते हैं। काश्मीरी दुशालें, काबुल के मेवे, ढाके की मलमल, धारीवार के कपड़े और दक्षिण के नारियल हमें व्यापार ही के कारण मिल रहे हैं। लोगों की आवश्यकता को पूर्ण करना और रसिकों के मनोरथ सिद्ध करने की व्यवस्था करना व्यापार ही का काम है।

अतुल सत्ता, असंख्य सैन्य और बड़ी भारी शक्ति के बल से भी जिस काम को सार्वभौम राजा नहीं कर सकता, उस काम को एक व्यापारी अपनी हिम्मत, कल्पना शक्ति और योजना की सहायता से बात की बात में कर डालता है।

४. प्रत्येक मनुष्य को अपने देश के वाणिज्य को उन्नत करने में सहायता करना एक बड़ा भारी कर्तव्य है। प्रत्येक छोटी से छोटी वस्तु खरीदने के समय यह सोचना चाहिये कि

इससे मेरे देश को क्या लाभ है और क्या हानि। अन्य उन्नत देशों में इसी नीति के द्वारा और और देशों के माल रोकने की बड़ी चेष्टा की गई है और अभी की जा रही है। कलाकौशल की उन्नति तभी होती है जब देशवासी अपने देश की वस्तुओं का मान करते हैं। देशी वस्तुओं के व्यवहार में न लाने के कारण ही इस देश की बची खुची कारीगरी भी नष्ट होती जा-रही है। प्रत्येक स्वदेशप्रेमी अँगरेज़ भारत में रह कर भी अपने देश की वस्तुएँ ही अधिकतर अपने व्यवहार में लाता है। जो यह समझते हैं कि देशी वस्तुएँ बर्तने से सरकार नाराज़ होती है, वे भूल करते हैं।

'देश का कच्चा माल परदेश जाकर देश के कारीगरों का उद्योग नष्ट न होने पावे—कच्चे माल से पक्के माल के बनाने का धंधा नष्ट न हो जावे' इसके लिये पूरी चेष्टा होनी चाहिये। हम ४) रुपये खेत में लगा कर १० सेर रुई पैदा करते हैं और अन्य देशवालों के हाथ यह कच्चा माल ५) रुपये को बेच डालते है। वे इसे अपने देश में ले जाकर इसकी मलमल बना कर लाते हैं और हमी लोगों के हाथ प्रायः ८०) रुपये को बेच जाते हैं जिससे हम लोग अपने देश के ७५) रु० उन लोगों को दे डालते हैं और उलटे अपनी कारीगरी भी भूलते जाते हैं। यही व्यापार-तत्व है, जिसे अन्य देशवाले सीख रहे हैं और अपने देश को लक्ष्मी का भण्डार बना रहे हैं।

५. हमारे देश के युवकों को चाहिये कि वे विद्या पढ़ कर व्यापार में लग पड़ें और अपने देश के कलाकौशल को नव-जीवन प्रदान करें। यह ध्यान देने योग्य है—

"उत्तम खेती, मध्यम बान (व्यापार)। निषिद्ध चाकरी, भीख निदान।"

मितव्ययिता (Thrift.)

१. प्रारम्भ। २ लाभ। ३. मितव्ययी बनने के उपाय। ४. फ़ुज़ूलख़र्च। ५. कंजूसी।

१. हम लोग 'किफ़ायत' शब्द से अधिक परिचित हैं। मितव्ययिता का अर्थ और कुछ नहीं, बस यही किफायत समझिये। अपनी आय से कम व्यय करना ही मितव्ययिता है।

२. मितव्ययिता ही धनाढ्यता है। मनुष्य अधिक आय से धनी नहीं हो सकता, परन्तु जो कुछ वह कमाता है उसे यदि मितव्ययिता से खर्च करे तो वह धनाढ्य बन सकता है। मितव्ययिता पारस पत्थर है, इसके छूने से धन खूब बढ़ता है। काम करना और चींटी की तरह परिश्रम में दत्तचित्त रहना निस्सन्देह उत्तम है, किन्तु इससे भी अधिक आवश्यक यह है कि मनुष्य सदा मितव्ययिता का ध्यान रक्खे। जो धन का कमाना तो जानता है, परन्तु उसकी रक्षा करना नहीं जानता वह जीवन के थकाने वाले श्रम में व्यस्त रहता है और चलते समय कुछ नहीं छोड़ जाता।

मितव्ययिता स्वतन्त्रता की माता है। जो मितव्ययी है वह किसीके अधीन नहीं रहता। जो फजूलखर्च है उसे क्षण क्षण पर ऋण लेना पड़ता है। ऋण लेकर मनुष्य दूसरे के अधीन हो जाता है। ऋण मुहब्बत की कैंची है। अँगरेज कर्ज लेने वालों को गुलामों की हैसियत से मिलाता है। जो अपनी रूखी-सूखी रोटी खाकर पानी पीता है उसके आनन्द को ऋणी पुरुष कभी नहीं पा सकता।

जितने बड़े बड़े विद्यालय, कारखाने, औषधालय, अनाथालय, धर्मशालाएँ, पोखरे, कूएँ इत्यादि हम लोग देखते हैं

वे सब मितव्ययी पुरुषों ही के बनवाये हुए हैं। बिना मित-व्ययी बने न कोई पुण्यदान कर सकता है और न उदारता तथा सहानुभूति का सच्चा परिचय दे सकता है। न अपने दुर्भिक्ष पीड़ित भाइयों की सहायता कर सकता है।

अकस्मात् खर्च का आ पड़ना, उद्यम का छूट जाना, बीमारी का आ जाना और मर जाना इत्यादि ऐसी घटनाएँ हैं जो मनुष्यों के सिर सदा मँड़राया करती हैं। विवाह शादी अटल हैं, मेहमानों का आना बन्द हो ही नहीं सकता। सम्भव है कि अकाल पड़ जाय और अन्न में दूना तिगुना खर्च पड़े। यदि वर्षा न हुई तो अनाज नही उपजेगा और गाँठ से राजकर देना पड़ेगा। यदि नौकरी करते हो तो सम्भव है कि कारणवश कुछ दिनों के लिये नोकरी छूट जाय। अब अगर तुम्हारे पास रुपया है तो भला, नहीं तो छठी की याद तुम ही करोगे। भूखों बालबच्चों सहित तुम ही मरोगे। बीमार पड़ते ही बिछावन पर पड़े तुम ही सड़ते रहोगे। अगर ऋण कर गये तो सात पीढ़ियों की आँसी तुम्हारी ही बिंध जायगी। अतः, हम लोगों को उचित है कि सदा कुछ न कुछ पल्ले डालते रहें कि समय पर पछताना न पड़े।

३. जब तुम लोग यह जान गये कि बिना मितव्ययी बने संसारयात्रा निर्विघ्न नहीं समाप्त कर सकते तब तुम्हें उसके लिये यत्नशील होना चाहिये। मितव्ययी बनने के कुछ उपाय नीचे लिखे जाते हैं—

'जितनी आय हो उससे कम व्यय करो।' एक एक पैसे का ध्यान रक्खो, ऐसा मत समझो कि पैसा तुच्छ वस्तु है। यदि तुम पैसों की रक्षा करोगे तो रुपये अपनी फ़िक्र कर लेंगे, इसलिये तुमको छोटे छोटे खर्चों पर भी ध्यान रखना चाहिये।

भरे घड़े से यदि एक एक बूँद पानी चूता रहे तो कुछ ही देर में खाली हो जायगा । इसी प्रकार यदि एक एक पैसा करके तुम्हारी सब आमदनी खर्च हो जाय तो अन्त में सिवाय पछताने के और कुछ नहीं हाथ लगेगा ।

'उधार कभी कोई वस्तु मत खरीदो ।' सदा नकद दाम देकर वस्तुएँ खरीदा करो । उधार में अधिक और अनावश्यक वस्तुएँ भी खरीद ली जाती हैं । ऋण और उधार में कोई भेद नहीं, दोनों के फल एक ही हैं ।

'जिस वस्तु की अधिक आवश्यकता न हो उसे कभी मोल मत लो ।' बहुत से लोग नीलाम में ऐसी सस्ती चीज़ें खरीद लेते हैं जिनकी उन्हें कभी आवश्यकता नहीं होती । यह बड़ी भूल है ।

'व्यर्थ दिखावट के लिये धन मत व्यय करो ।' इस देश के मातापिता अपने बच्चे के विवाह में बहुत सा धन व्यर्थ खर्च कर देते हैं, परन्तु यदि उनसे पढ़ाने के लिये कहो तो कहते हैं कि हमारे पास धन नहीं, हम गरीब हैं ।

'हिसाब रखना मितव्ययी बनने की अन्तरदीपिका है ।' अपनी आमदनी और खर्च का ठीक ठीक हिसाब रक्खो । हिसाब किताब रखना लोगों को फ़ुजूलखर्च बनने से बचाता है । मनुष्य यदि कई बातों में व्यर्थ खर्च करे तो हिसाब लिखने पर और सबका जोड़ लगाने पर उसको एक बड़ी रकम के खर्च हो जाने का ध्यान आ जायगा और आगे के लिये वह अवश्य सावधान हो जायगा । जो धनवान् होना चाहे उसके लिये हिसाब किताब रखना बहुत ही आवश्यक है । जो फ़ुजूलखर्च हैं उन्हें हिसाब रखते आलस्य मालूम होता है ।

४. जिन्हें उचित शिक्षा नहीं मिलती वे ही फुजूलखर्च होते हैं, वे ही बुरे शौकों में फँस कर व्यर्थ खर्च करते हुए अपने को नष्ट भ्रष्ट कर डालते हैं और कंगाल होकर भीख माँगते हैं। अतः अपने बालकों तथा स्त्रियों को इस विषय की उचित शिक्षा देनी चाहिये। छोटे बच्चे को अपने छोटे खजाने का मालिक बना कर तथा स्त्रियों को घरू प्रबन्ध सौंप कर उन्हें मितव्ययी बनने की शिक्षा देनी चाहिये। हमारे घरों का बहुत सा आनन्द इसलिये नष्ट हो गया है कि हमारी स्त्रियाँ रुपये-पैसे का खर्च करना नहीं जानतीं। माँ की गोद बच्चों की सच्ची पाठशाला है, इस समय बच्चे बहुत कुछ माँ से सीख लेते हैं। यदि माँ मितव्ययी हो तो बच्चे अवश्य मितव्ययी बनेंगे।

५. मितव्यय से यह अर्थ मत निकालो कि हम कंजूस मक्खीचूस बन जायँ। यदि तुम्हारे पास पुष्कल धन हो तो अच्छा पहनो, अच्छा खाओ। किसी उचित खर्च को मत रोको। व्यर्थ खर्च करना बुरा है, परन्तु आवश्यक कार्यों में मक्खीचूसी करना उचित नहीं। कहीं ऐसा न हो कि तुम धन प्राप्त करके मिट्टी में गाड़ते जाओ और तुम्हारे मा-बाप, बालबच्चे टुकड़ों के लिये तरसें।

अहंकार (Pride.)

१. आरम्भ। २ अहकारी पुरुष की धारणा। ३. अहकार से हानि। ४. उपदेश। ५. उपसंहार—आत्मगौरव।

'अकड़ कर मत चलो गिर पड़ोगे।'

१. जिससे मनुष्य अपने को बड़ा समझने लगता है, उसी का नाम अभिमान है। कोई मनुष्य गुणी है, कोई धनी है और

कोई सुन्दर है। बस, इन बातों में अपने को बड़ा और दूसरे को छोटा समझना अभिमान हुआ। कोई निर्गुण है या कम गुणी है, वह यदि अपने को सब से बड़ा गुणी समझने लगे तो यह समझना उसके लिये अहङ्कार हुआ। अपने को उचित से अधिक समझना अहङ्कार है।

२. अहंकारी पुरुष की सदा यही धारणा रहती है कि मैं सब से बढ़ कर हूँ। दुनिये में डेढ़ अक्ल मेरी और आधी और सब लोगों की। वह अपने को सब से बढ़कर विद्वान् समझता, अपने कार्यों को सब से उत्तम मानता और अपनी बातों को सब से बड़ी समझता है। उसको संसार की परवाह नहीं रहती। वह अपने से नीचों के साथ बात करने में अपनी मान-हानि समझता है। जब तक ऊँट पहाड़ तले होकर नहीं निकलता तब तक वह यही समझता है कि मुझसे बड़ा कोई नहीं। इसी प्रकार अहंकारी मनुष्य अपने को सब से बड़ा समझता है, क्योंकि वह संसार को विचार की दृष्टि से नहीं देखता।

३. अहंकारी पुरुष दूसरों को घृणा की दृष्टि से देखता है, इसलिये दूसरे भी उससे घृणा करने लगते हैं। कोई उसको अपना नहीं समझता, वह सबों की दृष्टि में गिर जाता है। सब कोई इसी घात में लगे रहते हैं कि किस तरह उसका मानमर्दन करें।

अहंकारी लोगों में बहुत सी झूठी और बनावटी आदतें पड़ जाती हैं। ये दूसरों को दिखलाने के लिये ऋण लेकर अच्छे अच्छे कपड़े पहनते और बनठन कर निकला करते हैं। इनकी सभी बातें बढ़ावे की होती हैं, परन्तु कुछ दिन पीछे जब क़लई खुल जाती है, इन्हें पछताना और समाज में लज्जित होना पड़ता है।

जब नाश समीप आता है तभी इस दुष्ट अहंकार का आगमन होता है। अहंकारी दूसरों के उपदेश को कुछ नहीं समझता, इसीलिये वह आपत्तियों में फँसा रहता है। अहंकारी रावण की जो गति हुई, वह किसीसे छिपी नहीं। क्या आप यह नहीं जानते कि भारतवर्ष को अधोगति में पहुँचानेवाला महाभारत क्यों हुआ? अहंकारी दुर्योधन ही के कारण न? उसका श्रीकृष्ण से यह कहना—"सूच्यग्रं नैव दास्यामि विना युद्धेन केशव अर्थात् हे केशव! बिना युद्ध किये मैं पाण्डवों को सूई की नोक बराबर भी भूमि नहीं लौटाऊँगा।" कितना गर्व भरा है! यही कारण है कि भारत के वीरों का नाश होते ही आर्य जाति मात्र एक प्रकार लुप्तप्राय हो गई।

४. काल बड़ा प्रबल है, वह कभी किसीको एकसा नहीं रहने देता। जो आज राजा है, वह कल भीख माँगता है और आज का भिखमंगा कल राजा हो जाता है। संसार के सभी पदार्थ क्षणकालीन हैं, कोई पदार्थ अनन्त काल तक नहीं रह सकता। अतः, चार दिनों की चाँदनी में भूल कर जो अहंकार से चूर रहते हैं उनके ऐसा मूर्ख कोई नहीं।

यदि तुमसे कोई बड़ा कार्य हो जाय तो उसके लिये भगवान् को धन्यवाद दो, जिसने तुम्हें उस कार्य के योग्य बनाया। दूसरे भाइयों को, जो तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकते, कभी नीच न समझो। सम्भव है, वह कल ईश्वर की कृपा से तुमसे भी बड़े हो जायँ। थोड़ीसी विद्या पाकर या थोड़ा सा नाम करके अपने कार्यों को इधर उधर मत कहते फिरो। बुद्धिमान् ऐसे लोगों को मूर्ख समझते हैं और मान भी नहीं करते। खूब याद रक्खो, परमेश्वर का एक नाम अभिमानभञ्जन भी है।

५. अहंकार तो सर्वथा त्याज्य है और अभिमान भी छोड़ने ही योग्य है, परन्तु अपने को एक दम नीचा गिरा देना भी उचित नहीं। अपनी मानमर्यादा के लिये आत्मगौरव को कभी नहीं भूलना चाहिये। जिसमें आत्मगौरव नहीं, उसका न तो आचारव्यवहार ठीक रह सकता है और न वह किसी उत्तम कार्य को कर सकता है। अपनी इज्जत आप ही करने से होती है। अतः, मनुष्य को उचित है कि वह 'अधजल गगरी छलकत जाय' की कहावत तो चरितार्थ न करे और सदा अपनी स्थिति के अनुसार कार्य करते हुए आत्मगौरव को न भूले।

समय (Time)

१ आरम्भ। २ वर्तमान समय (आज का दिन)। ३ समय का सदुपयोग, समय बिताने के नियम। ४ एक मिनट भी अमूल्य है। ६ घड़ी। ७. उपसंहार।

का हानिः ? समयच्युतिः।

(सबसे बड़ी हानि क्या है ? समय का चूक जाना।)

१. समय परिवर्तनशील है। इसके अदलने बदलने में कुछ देर नहीं लगती। दिन निकलने पर प्रभात होता है, फिर देखते ही देखते संध्या हो जाती है। यह अनन्त है। कहाँ से उत्पन्न होकर कहाँ लय होता है, इसका कुछ ठिकाना नहीं। न यह छोर रखता है न ओर। समय बहुत ही शीघ्र निकल जाने वाला है। इसके निकल जाने में कुछ भी विलम्ब नहीं लगता। यह रेलगाड़ी से भी अधिक दौड़ने वाला है। चलती हुई रेलगाड़ी तो स्पष्ट देख पड़ती है, परन्तु जाता हुआ समय नज़र नहीं आता। इसकी आहट तक नहीं सुनाई पड़ती और न परछाँही तक नज़र आती है। रेलगाड़ी रोकने

से रुक जाती है, परन्तु समय की प्रबल गति का रोकने वाला इस सृष्टि में कोई उत्पन्न ही नहीं हुआ। समय बड़ा अमूल्य है, इसकी द्रव्य से तुलना नहीं कर सकते। एक पल बढ़ाने के लिये यदि कोई संसार भर की सम्पत्ति लुटा दे तौ भी वह नहीं प्राप्त हो सकता। यह सदैव है, परन्तु इसके भूत और भविष्य असीम और वर्तमान अत्यन्त ही सूक्ष्म हैं।

सत्यवादी दशरथ और युधिष्ठिर, दाता कर्ण, परोपकारी शिवि, दधीचि, दिलीप, रघु और अज, बालब्रह्मचारी भीष्म पितामह, प्रजावत्सल राम, भ्रातृस्नेही भरत और लक्ष्मण तथा अच्युत महात्मा कृष्णचन्द्र—सबके सब भूतकाल के अक्षय भण्डार में ऐसे विलीन हो गये कि उनका कोई पता नहीं। केवल उनके गुण और कीर्ति पर काल की दाल न अभी तक गली और न भविष्य में गलेगी।

२. यदि तुम चाहते हो कि मेरी कीर्ति पर भी भविष्य की दाल न गले तो जो कुछ कार्य तुम्हें करने हैं, यदि कर सको तो उन्हें आज ही कर डालो, कल के लिये मत टालो। कौन जानता है कि कल क्या होवे! आज का दिन मनुष्य का एक छोटासा जीवन है। जग कर मनुष्य जन्म लेता है। वह प्रातःकाल, मध्याह्न और सायंकाल को बाल्यावस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था के समान व्यतीत करता है। रात को गाढ़ी निद्रा से सोना ही मनुष्य का इस छोटे जीवन (आज) का अन्त है। ऐसे ही छोटे छोटे जीवनों से तुम्हारा कुछ वर्ष का जीवन बना हुआ है। इससे आज का दिन वृथा खोना पाप है। आज का दिन तुम्हारे काम में तुम्हारी सारी शक्ति, सारी सजीवता और सारा अनुभव माँगता है। अतः, प्रति दिन प्रातःकाल उठो और अपनी सारी शक्ति से काम में लग

जाओ। आने वाले कल तथा जाने वाले कल की परवाह मत करो। यदि आज तुम सावधानी से रहोगे तो आने वाला कल मजे में कटेगा।

३. समय को अच्छी तरह व्यय करने ही पर मानवजीवन की सफलता निर्भर है। जिसने अपने जीवन का एक पल भी व्यर्थ नहीं खोया, वही भाग्यवान् है। जिसने बाल्यावस्था में विद्या नही पढ़ी वह जवानी में क्या करेगा। और जिसने युवावस्था में गृहकार्य को सँवारते हुए धर्म नही किया वह बुढ़ापे में सिर धुन धुन कर पछतावेगा।

हर काम के लिये एक समय और हर समय के लिये एक काम निश्चित कर लो। कोई काम बिना निश्चित समय के मत करो। समय न मिलने का कारण यह है कि हम लोग नियम से काम नहीं करते। जब चाहें, खा लेते हैं और जब चाहें, सो रहते हैं। इधर बातें की, उधर गपशप में लगे और समय चुपके से दबे पाँव निकल गया। हम जो दिन गप्पाष्टक में उड़ा देते हैं उसी दिन नियमानुसार काम करने वाली रेलगाड़ी सैकड़ों मील की राह तै कर लेती है। इसी लिये लोग कहा करते हैं कि समय रबर के समान है। यदि इसको सिकोड़ो तो छोटा हो जाय और फैलाओ तो बड़ा। जो नियमानुसार काम करते हैं वे कभी निठाला नहीं बैठ सकते। जब नियत समय आवेगा, उन्हें अपने कार्य सूझ जायँगे। 'खाली मन पिशाच का कारखाना।' यदि तुम नियमानुसार काम नहीं करते हो तो तुम काहिल हो जाओगे और बुरी बुरी बातें सोचा करोगे।

४. बहुत से मनुष्य सदा घंटे बचाने की चेष्टा में रहते हैं, परन्तु मिनटों की कुछ भी परवाह नहीं करते। वे यह नहीं

समझते कि मिनट का क्या मोल है। खूब समझ रक्खो, इसी एक मिनट पर तुम्हारे जीवन की सफलता निर्भर है। यदि तुम परीक्षाभवन में नियत समय से एक मिनट पीछे जाओ तो क्या, परीक्षा देने पाओगे? कारणवश तुम्हें आज कलकत्ते जाना है, स्टेशन पहुँचते पहुँचते यदि गाड़ी निकल जाय तो तुम्हारी क्या गति होगी? यदि तुम्हारा मित्र इस लोक से बिदा होने को है, यदि तुम एक मिनट देर करके जाओ, कहो, तुम्हें मित्र से भेंट होगी? तुम्हीं सोचो, हाय! इसी एक मिनट की देर से तुम्हारी कितनी बड़ी हानि हुई! "का बरखा जब कृषी सुखाने। समय चूकि पुनि का पछिताने॥"

५. हमारे भारतवासी घड़ी का महत्व कुछ भी नहीं समझते। आजकल के 'जेंटिलमैन' अपनी जाकिट की पाकिट में वाच लटकाने की बहादुरी दिखलाते हैं*। इन लोगों ने घड़ी को एक भूषण समझ रक्खा है। हमारे जानते घड़ी लटकाने का कोई भूषण नहीं, यह तो समयदर्शक यन्त्र है। यह समयानुसार काम करनेवाले पुरुषों को सुशोभित करती तथा दूसरों को मूर्ख बनाती और नक़लबाज सिद्ध करती है।

६. हम अभागे अपने आलस्य से सब कुछ खो चुके। यदि अब भी न चेतें तो समझ लो कि हमारी और दुर्दशा होना बाक़ी है। सभी सभ्य और उन्नतिशाली देशों में समय का बड़ा विचार रहता है। उनके सब काम समय पर होते हैं और इसीसे बड़े बड़े काम वे थोड़े समय में कर लेते हैं। समय और नियम का ध्यान रख कर जो कार्य करते हैं वे ही

---

* जेंटिलमैन—भद्रपुरुष। जाकिट—फतुही। पाकिट—जेब। वाच—जेबघड़ी। (ये चारों अँगरेजी शब्द हैं।)

पूर्ण उन्नति करते हैं और असाधारण सफलता प्राप्त कर आनन्द से अपनी जीवनयात्रा समाप्त करते हैं।

व्यायाम (Physical Exercise.)

१. प्रारम्भ। २ व्यायाम किसके लिये है। ३. व्यायाम करने से लाभ और न करने से हानि। ४. करने योग्य व्यायाम। ५. नियम और उपदेश। ६. उपसहार।

सब साधन कर मूल शरीरा।

१. साधारणतः अपने घरू कार्य करने के अतिरिक्त शरीर से नियमानुसार परिश्रम के साथ काम लेने को व्यायाम कहते हैं अथवा यों कहिये कि अङ्ग, प्रत्यङ्ग आदि के सम्यक भाव से चालन करने का नाम व्यायाम है।

२. यह विदित है कि बिना काम किये स्वास्थ्य नहीं रह सकता। यदि स्वास्थ्य है तो जीवन सफल है, यदि नहीं तो इस शरीर को एक बोझा ही समझिये। बहुत से मनुष्यों को अपनी रोटी के लिये सूर्योदय से सूर्यास्त या रात तक कठिन परिश्रम करना पड़ता है। वे फावड़ा चलाते हैं, हल जोतते हैं, पानी पटाते हैं, इसी प्रकार और और कठिन परिश्रम के कार्य करते हैं। इसलिये ऐसे लोगों का स्वास्थ्य ठीक रहता है, परन्तु बहुत से मनुष्य ऐसे हैं जिन्हें सदा कुर्सी या गद्दी पर बैठे बैठे काम करना पड़ता है। इस प्रकार सदा बैठे रहना उनके स्वास्थ्य को नष्ट कर देता है। अतः जो सदा बैठे बैठे उद्यम किया करते हैं उनके लिये व्यायाम की बड़ी आवश्यकता है।

३. व्यायाम करने से शरीर का भद्दापन दूर हो जाता है। मुख की छवि अधिक होती है और मस्तक चमकने लगता है। व्यायाम करने से फेफड़ों में शुद्ध वायु का अधिक प्रवेश

होता है जिससे रक्त निर्मल हो जाता है और पाचन शक्ति बढ़ जाती है। व्यायाम करने से पसीना अच्छी रीति से निकलता है जिससे रोमकूपों में मैल नहीं रहने पाता। इनके स्वच्छ रहने से शरीर पर शुद्ध वायु का प्रभाव पड़ता है, इसलिये खुजली, दिनाय इत्यादि चर्मरोग नहीं होने पाते। व्यायाम करने वालों का शरीर सब प्रकार से आधिव्याधि से रहित रहता है। शरीर की शिथिलता इत्यादि बुढ़ौती के लक्षण दूर हो जाते हैं।

व्यायाम करने वालों को कच्ची डकारों तथा अन्न न पचने की शिकायतें दूर हो जाती हैं। कच्चा पक्का सब प्रकार का खाया हुआ भोजन उन्हें पच जाता है। व्यायाम करने से बुद्धि तीव्र और विचारशक्ति बढ़ जाती है। चित्त प्रसन्न रहता है और सारी इन्द्रियाँ कार्य करने के लिये उद्यत रहती हैं। व्यायाम से वीरता का स्वभाव उत्पन्न होता है जिससे एकबएक शत्रु नहीं चढ़ सकते। यदि चढ़ाई करते भी हैं तो खुद झिप जाते हैं।

व्यायाम न करने से शरीर में आलस्य का वास हो जाता है, बल घट जाता है। शरीर बादी से फूल जाता है और चलने फिरने, उठने बैठने में कष्ट होता है। कार्य करना बोझ सा प्रतीत होता है और सदा मुख मलिन रहता है। व्यायाम से भागने वाले रूपवान् भी कुरूप हो जाते हैं। उन्हें कहीं से कूबड़ निकल आता है, कोई अङ्ग बढ़ जाता है और मांस हिलने लगता है।

४. द्रुतवेग से भ्रमण करना, दौड़ना, दण्ड बैठक करना, तैरना, घोड़े की सवारी और कुश्ती लड़ना उत्तम व्यायाम हैं, इनसे सब अङ्गों पर ओर पड़ता है। बग्घी पर चढ़ कर

हवा खाने में केवल बैठना पड़ता है और व्यायाम का लाभ नहीं हो सकता। जो लोग घोड़े पर नियमानुसार सवारी करते हैं उनका शरीर फुर्तीला हो जाता है और टाँगें भी बलिष्ठ हो जाती हैं। मुग्दर से हाथ के पुट्ठे भी मज़बूत होते हैं। मुग्दर हल्का होना चाहिये, जिससे झोंके अच्छी तरह लगें।

कबड्डी भी बहुत उत्तम है, इससे उपर्युक्त गुणों के सिवाय 'एक दूसरे का सहायक होना, मिल कर काम करना, समय आते ही अपने काम का निश्चय कर लेना' इत्यादि मानसिक और सामाजिक शक्तियाँ भी बढ़ती हैं।

क्रिकेट, फुटबाल, टेनिस, डम्बल इत्यादि विदेशी खेल भी यहाँ जोर पकड़ रहे हैं, परन्तु ये खेल खर्चीले हैं। इनमें भी उपर्युक्त गुण वर्तमान हैं। शरीर के मुख्य मुख्य अंगों की पुष्टि के लिये डम्बल बहुत उपयोगी हैं, पर इनको नियमानुसार जितना हो सके धीरे धीरे करना चाहिये।

५. स्वास्थ्य के लिये बुद्धिमान् पुरुषों को उचित है कि वे अपनी आयु और बल के अनुसार नियम से सदा व्यायाम किया करें। जब मस्तक, आँख, गर्दन और काँख आदि से पसीना आने लगे तब व्यायाम करना छोड़ दें। संध्या और प्रातःकाल में व्यायाम करना अत्यन्त उपयोगी है। व्यायाम खुले स्थान और स्वच्छ वायु में करने से स्वास्थ्य को अधिक लाभ होता है। बहुत से लोग घर के एक कोने में व्यायाम करते हैं, वहाँ शुद्ध वायु का प्रवेश न होने से उनका व्यायाम करना और न करना दोनों ही बराबर हो जाते हैं।

रक्त, पित्त, क्षय, खाँसी आदि रोगों से पीड़ित मनुष्यों को तथा भोजन के अनन्तर तुरत ही कदापि व्यायाम नहीं

करना चाहिये, क्योंकि व्यायाम शक्त्यनुसार करने से जैसा लाभकारी है, बढ़ जाने पर उतना ही हानिकारक भी है।

व्यायाम करने का अभ्यास बचपन ही से लगाना चाहिये। जो लोग यह समझते हैं कि हमारे बच्चे व्यायाम करने से बीमार हो जायँगे, वे भारी भूल करते हैं। जो आलसी हैं वे ही बीमार पड़ते हैं, नियमानुसार व्यायाम करने वाले कभी भी बीमार नही पड़ते। जो बचपन से वृद्धावस्था तक व्यायाम करते हुए अपना जीवन व्यतीत करते हैं, वास्तव में वे ही स्वास्थ्य का सुख उठाते हैं।

६. प्राचीन काल में व्यायाम करना भारतवर्ष के पुरुषों और स्त्रियों का प्रधान कर्तव्य समझा जाता था, लेकिन अब हाय! हमें शोक के साथ लिखना पड़ता है कि भारत के प्रायः बहुत से लोग अपना यह परम कर्त्तव्य दिनोंदिन भूलते जाते हैं। स्त्रियाँ तो यहाँ तक समझती है कि व्यायाम करना हमारा काम नहीं। यही कारण है कि अधिकतर पुरुष और १०० में ६६ स्त्रियाँ रोगी रहती हैं।

प्यारे भारतवासियो! चेतो। नहीं तो जो भी रही सही तुम्हारी शक्ति है वह भी लुप्त हो जायगी।

"दवा कोई वर्जिश से बिहतर नहीं।
यह नुसख़ा है कम खर्च बालानशीं॥"

स्वास्थ्य (Health)

१. आरम्भ। २. जीवन का सुख केवल नीरोग मनुष्यों के लिये है। ३. स्वास्थ्य से लाभ। ४. स्वास्थ्यरक्षा के उपाय। ५. उपसहार।

"एक तन्दुरुस्ती हजार न्यामत।"

१. शुद्ध शरीर में मन की शुद्ध स्थिति का नाम स्वास्थ्य

है। इस प्रकार विचार करते हुए हम उसी मनुष्य को स्वस्थ या नीरोग कह सकते हैं कि जिसके शरीर में कुछ कमी नहीं है—शरीर अभङ्ग है, दाँत ठीक हैं, आँख कान दुरुस्त हैं, नाक नहीं बहती, जिसकी त्वचा से प्रस्वेद निकलता है, किन्तु दुर्गन्ध नहीं करता, जिसके पैर गन्दे नहीं हैं, मुँह नहीं सड़ता, हाथ पैर साधारण तौर पर काम कर सकते हैं, जो विषया-सक्त नहीं है, न बहुत मोटा है न बहुत दुबला और जिसका मन तथा इन्द्रियाँ सदा अधीन बनी रहती हैं। अतएव ऐसे उत्तम स्वास्थ्य के पाने के लिये प्रयत्न करना प्रत्येक मनुष्य का सबसे प्रथम कर्तव्य है।

२. ईश्वर प्रदत्त आनन्द की सामग्रियों में स्वास्थ्य सबसे बढ़ कर है। जीवन का सुख केवल वही पा सकता है जिसका स्वास्थ्य ठीक है। क्या भोजन, क्या वस्त्र, क्या धन, क्या घर—सभी वस्तुएँ नीरोग मनुष्यों को आनन्द देती हैं और बीमार को काँटे के समान चुभती हैं। भला, ज्वर से पीड़ित मनुष्यों को महल क्या सुख पहुँचा सकता है? जो गठिये से पीड़ित है, उसको कपड़ों से क्या लाभ पहुँचेगा? क्या मीठे और स्वादिष्ट लड्डू से ज्वर की अवस्था में कड़वा प्रतीत होने के सिवाय, और कुछ आनन्द मिलेगा? जो ठंढी हवा नीरोग को सुखी करती है, वही रोगी के लिये विष का काम कर जाती है। जिसकी पाचनशक्ति जाती रही है, उसके लिये उत्तम से उत्तम भोजन भी फीका है। अतएव यह विचारने योग्य है कि यह संसार नीरोग के लिये स्वर्ग और रोगी के लिये नर्क है।

३ स्वास्थ्य से हमें क्या आनन्द होता है, ऊपर बता चुके। इससे और क्या क्या लाभ हैं नीचे दिये जाते हैं—जो

नीरोग है वह सांसारिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के कार्यों के सम्पादन करने में भलीभाँति समर्थ हो सकता है। उद्यम के बिना उन्नति के ऊँचे शिखर पर चढ़ना महा दुःसाध्य है, परन्तु उद्यम वही कर सकता है जिसे स्वास्थ्य प्राप्त है। अतएव नीरोग मनुष्य ही सम्पत्तिशाली हो सकते हैं, विद्योपार्जन कर सकते हैं और संसार में यशस्वी बन सकते हैं। स्वास्थ्य ही के सहारे हम परलोक सुधारने के लिये ईश्वरभक्ति कर सकते हैं और तीर्थव्रत एवं समाजसेवा करके ईश्वर के प्यारे बन सकते हैं। बिना स्वास्थ्य के मनुष्य कभी सुखी नहीं हो सकता। रोगी की सारी आशाएँ हृदय में उठ कर लुप्त हो जाती हैं। याद रक्खो, आज तक स्वास्थ्य के बिना कभी किसीने कोई उत्तम कार्य नहीं किया है।

४. "क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा। पंच रचित यह मनुज शरीरा।" यह साढ़े तीन हाथ का पुतला जिसको हम शरीर कहते हैं, मिट्टी, पानी, तेज (सूर्य), वायु और आकाश इन्हीं पाँचों तत्वों से मिल कर बना है। यदि हम इस बात को अच्छी तरह समझ जायँ तो ध्यान में आये बिना न रहेगा कि शरीर को रखने के लिये स्वच्छ मिट्टी (चावल, गेहूँ इत्यादि मिट्टी के भिन्न भिन्न रूप हैं।), स्वच्छ जल, स्वच्छ सूर्य (प्रकाश), स्वच्छ वायु और खुले आकाश की अत्यन्त आवश्यकता है। इनमें से हमें किसी तत्व के लिये अवहेलना न करनी चाहिये। वास्तव में देखा जाय तो इनमें से जिस तत्व की हममें जिस प्रमाण से कमी होगी उतने ही रोग हमें आ घेरेंगे। इसलिये—

(क) हमको ऐसे पदार्थ भोजन करने चाहिये। जिनसे भूख की तृप्ति, तुरत बल, देह की धारणा, स्मृति, आयु, ओज,—

शरीर का सौन्दर्य, वीर्य, स्वत्व और शोभा की वृद्धि हो तथा जो रुचिकर और सुपाच्य हो।

(ख) पीने के लिये जल शुद्ध और स्वच्छ होना चाहिये। उत्तेजना देनेवाले पेय पदार्थ बुरे हैं, इसीलिये शराब इत्यादि मद की लत कभी मत लगाओ। पानी हमारे प्यास ही को नहीं बुझाता, परन्तु हमारी पाचन क्रिया में भी सहायता देता है।

(ग) ऐसे स्थान में रहो जहाँ सूर्य का प्रकाश पूर्णरूप से आता हो। देखो, सूर्य के प्रकाश ही से पौधे हरे भरे देख पड़ते हैं। जहाँ सूर्य का प्रकाश नही जाता, वहाँ के पौधे पीले और सुकुमार हो जाते हैं। मनुष्य भी प्रकृति का एक पौधा ही है, इसलिये प्रकृति चाहती है कि मनुष्य भी हरा भरा रहे।

(घ) जैसे हम खराब पानी और खराब अन्न ग्रहण करते हुए हिचकिचाते हैं, वैसे ही हमें हवा के सम्बन्ध में भी ध्यान रखना चाहिये। फेफड़ों से निकली हुई हवा और कै दोनों बराबर हैं। इसलिये हमें सदा निर्मल वायु का सेवन करना चाहिये।

(ङ) हम लोगों को उचित है कि सदा खुले आकाश* में रहें। कभी अपने को बन्द कोठरी में न रक्खें। रहने के घरों में भरपूर खिड़कियाँ और द्वार रक्खें। यदि हो सके तो खुले बरांडे, चाँदनी और मैदान में बिना मुँह ढाँपे सोना चाहिये। खुले स्थान में सोने से या प्रातःकाल की हवा से सर्दी होगी ऐसा खयाल कभी नहीं करना चाहिये। जिन्होंने कुटेव से अपने फेफड़ों को बिगाड़ लिया है, उन्हें खुले स्थान में सर्दी हो जाना सम्भव है, परन्तु वैसे मनुष्य को भी ऐसी सर्दी से नहीं डरना चाहिये।

* 'आकाश' की केवल इतनी ही व्याख्या नहीं है। यह विषय बड़ा गम्भीर है। किसी तत्वज्ञानी से पूछ कर समझ लो।

इन पाँचों की पूर्ति के लिये निम्न लिखित बातें भी अति आवश्यक हैं-

खाली कभी मत बैठो, सदा उद्यम में लगे रहो। साँझ सबेरे उचित रीति से व्यायाम किया करो। रात को ठीक समय पर सो जाओ। ९ या १० बजे से ४ बजे भोर तक सोना स्वास्थ्य के लिये बड़ा उपयोगी है। उदास कभी मत रहो, सदा प्रसन्न मन रक्खो। क्रोध करने और बुरे बुरे अभ्यासों के ग्रहण करने से बहुत से रोग हो जाते हैं। तुमने क्रोधी मनुष्य को कभी मोटा ताजा नहीं देखा होगा। सदा औषधियों का सेवन करना भी उचित नहीं। जहाँ तक हो सके भोजन समय पर करो और बिना किसी विशेष रोग के औषधियों का सेवन मत करो। दैनिक जितने कर्म हैं सब नियत समय पर किया करो। ब्रह्मचर्य और स्वर्ग मे कुछ भी अन्तर मत समझो। जो ब्रह्मचर्य नहीं रखता वह कभी स्वास्थ्य नहीं पा सकता। उसके लिये धीरे धीरे संसार के सारे सुख लुप्त हो जाते हैं।

५. जिसके पास स्वास्थ्यरूपी अमूल्य रत्न नही है, वह जीता हुआ भी मुर्दा है। एक राजा जो अपने महल में बीमार पड़ा हुआ है, उस निर्धन से जो अपनी झोपड़ी में मौज उड़ा रहा है, किसी प्रकार अच्छा नहीं।

देशाटन (Travel)

१. प्रारम्भ। २ लाभ। ३ देशाटन करने की रीति। ४ आजकल भारतवासी किस प्रकार देशाटन करते हैं ? कारण। ५ आचार्यों से विनय। ६ उपसहार।

"अनुभव का विकाश देशाटन से होता है।"

१. देशाटन का अर्थ 'देशों में भ्रमण करना' है। जहाँ जन्म स्थान है, वहाँ की प्रायः कार्यानुसार सभी बातों का

अनुभव मनुष्य को बाल्यावस्था ही से प्राप्त होने लगता है। यह अनुभव तभी पूर्णरूप से विकसित हो सकता है, जब भिन्न भिन्न देशों के बहुत से मनुष्यों की संगति हो। हमारी जितनी अधिक जान पहचान होगी उतनी ही हम इस अनुभव की वृद्धि कर सकेंगे। जान पहचान पर शुद्ध व्यवहार और उत्तम परिपाटी का बहुत कुछ आधार है। यह तभी हो सकता है, जब हम लोग देश-भ्रमण करें।

२. देश-भ्रमण करने से बड़े बड़े लाभ होते हैं। "किस देश की कैसी रीति-नीति है, वहाँ के वासियों पर उस रीति-नीति का कैसा प्रभाव पड़ता है? किस देश के मनुष्य सुखी हैं और किस देश के दुःखी, उनके सुख दुःख के क्या कारण हैं? किस देश में कैसा वाणिज्य-व्यापार है? कहाँ कौन कौन वस्तुएँ अधिकता से उत्पन्न होती हैं और कहाँ उन वस्तुओं का अभाव है? किस देश में मनुष्यों की सुख-स्वच्छन्दता के लिये कौन कौन कार्य किये जाते हैं? किस देश में किस प्रकार की शिक्षा दी जाती है? अपने देश और दूसरे देशों की शिक्षा प्रणाली में क्या भेद है? किस प्रकार अपने देश की शिक्षा की अच्छी उन्नति हो सकती है? अपने देश में जो हानिकारक बातें हैं, वे किस प्रकार दूर हो सकती हैं और दूसरे देशों की लाभदायक रीति-नीति किस प्रकार अपने देश में फैल सकती है?" इत्यादि बातों का अनुभव देशाटन ही से होता है।

देशाटन करने से भूगोल-विद्या का ज्ञान भली भाँति हो जाता है। प्रकृति का पूरा पर्यवेक्षण होता है। अन्य देशों के पहाड़, नदियाँ, सड़कें इत्यादि अनेक प्रकार की अच्छी अच्छी वस्तुएँ देखने में आती हैं, जिनसे हृदय प्रफुल्लित हो जाता है।

देशाटन से स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है। जिस प्रकार

बन्द तालाब का जल सड़ जाता है, उसी प्रकार सदा एक ही स्थान में रहने से मनुष्य का स्वास्थ्य भी बिगड़ जा सकता है। देशाटन से जलवायु में परिवर्तन होता रहता है, जिसका प्रभाव शरीर पर बहुत ही अच्छा पड़ता है। इसीलिये रोगी मनुष्यों को बहुत से वैद्य और डाक्टर देशाटन की राय दिया करते हैं।

देशाटन करने से मनुष्य में सहनशक्ति आती है, जिससे वह बलवान् और धीर बन जाता है। यह देशाटन ही का प्रभाव है कि अँगरेज़ लोग इतने बलिष्ठ और फुर्तीले दीख पड़ते हैं।

देशाटन से पवित्र स्थानों और तीर्थों के दर्शन होते हैं, जिससे अपना जीवन सुधर जाता है और ईश्वर सेवा के तत्व समझ में आ जाते हैं।

३. देश-भ्रमण करने के लिये जब कोई जाय तो उसे उचित है कि अपने साथ ऐसे मनुष्यों को ले जाय जो उस देश की भाषा से अभिज्ञ हों और वहाँ इसके पूर्व में भी गये हों। "जिससे वे यह कहने के लिये समर्थ हों कि कौन कौन वस्तुएँ उस देश में देखने योग्य हैं। किन पुरुषों से वहाँ जान पहचान करना उचित है। किन किन विषयों पर वह देश विकाश और संयम का आदर्श प्रदान करता है।" क्योंकि बिना इसके भ्रमण करने जाना आँखों में पट्टी बाँध कर जाने के समान है।

देश-भ्रमण में दिनचर्या लिखना बहुत ही आवश्यक है। अधिकांश लोग दिनचर्या रखना भूल जाते हैं, जिस कारण पीछे पछताना पड़ता है। देश भ्रमण करने वालों को उचित है कि वह उस देश का मानचित्र अथवा और कोई ऐसी पुस्तक जो उस देश का वर्णन करती हो, अपने साथ लेता

यात्रियों का धर्म बिगड़े और उनका चित्त शान्ति के बदले अशान्ति के झूले पर झूलने लगे।

५. हे मेरे तीर्थों के आचार्यो और पूज्य पण्डितो, अब वाद विवाद का समय नहीं है, समाज की इस बिगड़ी दशा को देखिये और प्राचीन आचार्यों ने किस रीति से और किस को तीर्थयात्रा करने का विधान किया है, इसका उपदेश कीजिये। नहीं तो समझ रखिये, इस भेंड़ियाधसान से एक दिन तीर्थों का अवश्य ही लोप हो जायगा और तब आपका चिल्लाना कोई नहीं सुनेगा।

६. घर लौटने पर यात्री को भ्रमण किये हुए स्थानों को एकदम भूल नही जाना चाहिये, परन्तु योग्य जान पहचान वालों के साथ पत्र-व्यवहार करते रहना उचित है। यात्रियों को पहिरावे और हाव भाव में विदेशी चालों की नक़ल तनिक भी नहीं उतारनी चाहिये। यहीं तक उचित है कि परदेश के दो चार चुने हुए पुष्प अपने यहाँ की नीति रीति पर आरोपित हो जायँ।

मातृभूमि (जन्मभूमि या अपना देश)

१. आरम्भ। २. देशभक्ति क्यों करनी चाहिये। ३. देशभक्ति करने के नियम। ४. उपदेश। ५. उपसहार।

१. संसार में जितनी भाषाएँ हैं, उनके शब्दकोषों में सबसे मीठा शब्द कौन है? प्रत्येक भाषा का वही शब्द सबसे मीठा है जिसके लिये हमारी भाषा में 'माता' शब्द है। इसी शब्द से भारत के रोते हुए बच्चे धीरज बाँधते हैं। इसी शब्द के द्वारा युवा भक्ति और निःस्वार्थपरायणता सीखते हैं। यही एक शब्द है जिसके उच्चारण से दुःख और आपत्तियों में मन

को शान्ति मिलती है। माता शब्द में न जाने ईश्वर ने कैसा माधुर्य प्रदान किया है कि यह जिस शब्द में जा मिलता है उसीमें एक अपूर्व सरसता, विचित्र माधुर्य्य तथा हृदयग्राही प्रभाव उत्पन्न कर देता है। इसीलिये मातृभूमि शब्द इतना मीठा है कि उच्चारण करते ही हृदय आनन्द से गद्गद् हो जाता है। भारत! भारत!! भारत!!! संसार भर का सिरमौर हमारी मातृभूमि है, जन्मभूमि है, अपना देश है। हाय! यही भारत है, जहाँ विदेशी लोग पहुँचने ही को अपना अहोभाग्य समझते थे और कहते थे कि यदि संसार में स्वर्ग है तो भारत।

२. यदि मैं कुत्ते को कुछ भोजन देता हूँ तो वह प्रेम-वश अपनी पूँछ हिलाता है और मुझ से इतना प्यार दर्शाता है कि यदि मुझ पर कोई विपत्ति आ पड़े तो वह अपने प्राण जोखों में डाल कर मेरी रक्षा करने को लग पड़ता है। यही अवस्था हम लोगों की है। देखो, हमारी मातृभूमि ने माता ही के समान हमारे साथ कितना बड़ा उपकार किया है? यहीं हम उत्पन्न हुए, यहीं बढ़े। यहीं का अन्न खाते हैं और पानी पीते हैं। इसी मातृभूमि की वायु हम सूँघ रहे हैं। जिस प्रकार बच्चे माता की गोद में मलमूत्र त्याग देते हैं और माता आनन्द से सह लेती है, उसी प्रकार यह मातृभूमि हमारे सब कार्यों को आनन्द से सहती चली जा रही है। इसलिये यह उचित है कि जिस प्रकार हम लोग माता की सेवा करते हैं उसी प्रकार मातृभूमि—जन्मभूमि—भारत की भी सेवा करें।

३. मातृभूमि की भक्ति किस प्रकार करनी चाहिये, इसके लिये कुछ उपदेश आगे लिखे जाते हैं—

यदि किसी देश में उत्तम शासन करने वाला राजा न

हो तो वहाँ पापी मनुष्य बढ़ जाते हैं और प्रजा को बहुत कष्ट हो सकता है। जिस प्रकार जीवन का आधार वायु, अन्न और जल है उसी प्रकार मातृभूमि की उन्नति का आधार सुराज्य है। बहुत से मूर्ख राज्यविरोध को ही देशभक्ति कहते हैं, पर यह उनकी भूल है। उत्तम राजा से देश की रक्षा होती है। इस लिये जो मनुष्य राजभक्त हैं, वे ही मातृभूमि की उन्नति कर सकते हैं, देशभक्त कहला सकते हैं।

जो मातृभूमि का सच्चा भक्त है, उसका चरित्र भी अच्छा रहता है। उसके आचार व्यवहार सभी बातें अच्छी रहती हैं। ऐसा ही पुरुष दूसरों को—अपने देशभाइयों को–सुधार सकता है। जिस प्रकार एक सड़ा फल टोकड़ी भर के फलों को सड़ा डालता है, उसी प्रकार एक दुराचारी मनुष्य समस्त मातृभूमि को कलंकित कर देता है। बहुत से ऐसे चरित्रभ्रष्ट मनुष्य हैं जो छिप छिप कर अनुचित कर्म किया करते हैं, अपने भोले भाइयों को ठगा करते हैं, परन्तु जब बाहर आते हैं तब गाल बजा बजा कर अपने को देशभक्त बताया करते हैं। ऐसे लोगों को सिवाय कपटी के, हम और कुछ नहीं कह सकते।

यदि हम मातृभूमि के सच्चे भक्त बनना चाहते हैं तो हमें उचित है कि भारत भर में विद्या का और मातृभाषा का सुचारु रूप से प्रचार करें। स्वयं पढ़ें, दूसरों को पढ़ावें। यदि हमारे देशी भाई मूर्ख हैं और हम विद्वान् हैं तो यह भूल हमी लोगों की है, क्योंकि वे बेचारे विद्या के फल को नहीं जानते हैं और न उनके पास विद्याप्राप्ति के उचित साधन ही हैं।

हमें उचित है इस भारत में कलाकौशल और वाणिज्य का अच्छी रीति से प्रचार करें जिससे दीन मनुष्यों की

दीनता दूर हो और वे अच्छे कार्यों में लग कर अपनी रोटी कमा सकें। हमें सब देशनिवासियों को, चाहे वे किसी जाति और किसी धर्म के क्यों न हों, अपना भाई समझना चाहिये। किसीको घृणा की दृष्टि से देखना अनुचित है।

प्यारे भारतवासियो! अपने भाइयों की रक्षा और मातृ-भूमि की सेवा के लिये तन मन धन अर्पण करो। जिससे अशान्ति दूर हो, राजा और प्रजा में प्रेम भाव का पूर्ण विकाश हो, देश की दरिद्रता मिटे तथा विद्या का प्रकाश हो इसके लिये प्राणपण से चेष्टा करो। यही सच्ची मातृभूमि की भक्ति और तुम्हारा कर्तव्य है।

४. मातृभूमि की धूल से संसार भर के मणिमुक्ता तुच्छ हैं। यही धूल हमें मातृभूमि की भक्ति देगी, इसलिये इस पवित्र धूल को शिरोधार्य करो, इसे प्रेम की दृष्टि से देखो। अपनी माता को भूल जाने से क्या कोई सुख पा सकता है? यदि माता से जन्म पाने की बात भूलोगे, तो कृतघ्नता का दोष तुम्हारे सिर चढ़ेगा और तुम कृतघ्न कहलाओगे। यह भारत भूमि हमारी सच्ची माता है। हम चाहे कभी अयोग्य भी हो जाँय, परन्तु माता कुमाता कभी नहीं हो सकती। हमारी माता इस भारत-भूमि ने बड़े बड़े प्रतापवान् और तेजधारी पुत्र और पुत्रियाँ पैदा की हैं। यह हमारे पुरुषाओं की माता है—राम और कृष्ण इसीके बच्चे थे। महाराणा प्रताप और शिवाजी को इसीने पैदा किया था, जिन्होंने अपना सारा जीवन मातृभूमि की भक्ति में बिता दिया। धात्री पन्ना इसी भारत की बेटी थी, जिसने देशभक्ति के कारण अपने पुत्र को सदा के लिये निछावर कर दिया।

५. मातृभूमि का जो ऋण तुम्हारे ऊपर है, उसको भूलना

कदापि उचित नहीं है। दुःख में, सुख में, देश में, प्रदेश में मातृभूमि को कभी मत भूलो। स्मरण रक्खो कि माता के आशीर्वाद तथा शाप—दोनों में बड़ी शक्ति है।

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।"

राजभक्ति (Loyalty.)

१ प्रारम्भ (राजा और राजभक्ति की परिभाषा)। २ राजभक्ति क्यों करनी चाहिये ? (राजभक्ति से लाभ)। ३ राजभक्ति किस प्रकार करनी चाहिये ? ४ भारत-वासियों की राजभक्ति। ५ उपसंहार।

१. एक कार्यालय में बहुत से मनुष्य काम करते हैं, उन सबों के कार्यों का प्रबन्ध एक प्रधान पुरुष के हाथ में रहता है जिसको उस कार्यालय का अधिष्ठाता कहते हैं, उसी प्रकार प्रत्येक देश में भी एक अधिकर्ता होता है, जो देश भर का प्रबन्ध करता है, प्रजा का पालन करता है और अपने न्याययुक्त आचरणों से उसको प्रसन्न रखता है—इसी अधिष्ठाता का नाम राजा है' 'जो दिन रात प्रजा की भलाई के लिये उद्योग करता रहता है। जो प्रजा को अपने प्राणों से भी बढ़ कर समझता है' जो सदा न्याय का तुलादण्ड अपने हाथों में लिये रहता है और कभी किसीका पक्षपात नहीं करता' जो अपने पुत्र को भी अपराध करने पर उचित दण्ड देता है और जो सच्चे गुणों के कारण शत्रु का भी आदर करता है'—वास्तव में वही राजा राजा है। ऐसे राजा के प्रति प्रजा का जो कर्तव्य है, उसीका नाम राजभक्ति है।

२. कुछ समय के लिये हम लोग यह मान लें कि यदि प्रजा में राजभक्ति न हो तो उस देश की क्या अवस्था हो जाय। ऐसी अवस्था में राजा कोई प्रबन्ध नहीं कर सकेगा।

बलवान् लोग निर्बलों की धन-सम्पत्ति लूट कर अपना घर भर लेंगे। बेचारे निर्दोष निर्बलों की पुकार कोई नहीं सुनेगा। चोर, लुटेरे और डाकू दिन दुपहर लोगों को लूट लेंगे। भय के कारण न तो किसान खेती कर सकेंगे, न जुलाहे कपड़ा बुन सकेंगे और न व्यापारी व्यापार कर सकेंगे। सड़कें कौन बनावेगा? नहर कौन निकालेगा? ऐसी आपत्तियाँ झेलनी पड़ेंगी कि सबों की नाक में दम हो जायगा।

राजा ही के प्रबन्ध से देश भर में विद्यालय स्थापित होते हैं, जहाँ प्रजा विद्या पढ़ कर अपनी उन्नति करती है। यह राजा ही का प्रबन्ध है कि 'डाकघर' चिट्ठी पत्री का काम करता है और एक पैसे में सैकड़ों कोस का समाचार हमें पहुँचा देता है। रेल और तार भी राजा ही के उचित प्रबन्ध का फल है। हम लोग रात भर सुख की नींद सोते हैं और राजा के उचित प्रबन्ध से चौकीदार पहरा देकर हमारी रक्षा करते हैं।

अब कहिये, ऐसा कौन मूर्ख है जो राजा की भक्ति करना नहीं चाहता हो? जिस प्रकार वायु, जल और अन्न पर ही जीवन का आधार है उसी प्रकार प्रजा की उन्नति का आधार एक मात्र राजा का उचित प्रबन्ध है?

३. राजभक्ति के लिये प्रत्येक मनुष्य का प्रधान कर्तव्य यह है कि वह निष्कपट हृदय से राजा की तथा राजा के कर्मचारियों की आज्ञा माने। सारी प्रजा के परामर्श द्वारा उनके बनाये हुए नियमों पर चले। हाँ, यदि उनकी आज्ञा और नियमों में भ्रमवश कोई भूल आ गई हो तो उसे मीठे शब्दों में उनके सामने इस भाँति प्रकाश करे जिसमें वह भूल सदा के लिये निर्मूल हो जाय। इससे एक तो राजा प्रजा पर प्रसन्न

रहेगा, दूसरे उनके अच्छे नियमों पर चल कर जीवन भी सुधर जायगा।

इसके सिवाय प्रजा को उचित है कि वह अपने राजा को विपत्ति में पूरी सहायता करे और उनके राजकार्य में उचित राय दे। जो लोग राजा के विरोधी हैं और छल कपट करना चाहते हैं, उनका निरादर करे। जो मनुष्य राजविरुद्ध काम करते हैं वे दुःख के भागी होते हैं। चोरों को देखो, ये राजा को अप्रसन्न करके कैद तो होते ही हैं, परन्तु इसके अतिरिक्त उनकी आत्मा भी कलुषित हो जाती है।

जिस प्रकार भक्त को भगवान् की, पुत्र को पिता की, सेवक को स्वामी की और शिष्य को गुरु की—भक्ति करनी चाहिये उसी प्रकार प्रजा को भी अपने वास्तविक राजा की भक्ति श्रद्धापूर्वक करनी चाहिये।

४. भारतवासियों में राजभक्ति कूट कूट कर भरी है। और बातों में अन्य देश वाले भले ही बढ़ जायँ, परन्तु राजभक्ति में हमारी बराबरी वे कभी भी नहीं कर सकते। अन्य देशवाले राजा को अपना भाई समझते हैं, परन्तु हिन्दुओं की दृष्टि में राजा ईश्वर का अवतार है। हमारा धर्मशास्त्र भी कहता है कि 'अष्टानां लोकपालानां वपुर्धारयते नृपः'—'महती देवता राजा नररूपेण तिष्ठति'—इत्यादि। यही कारण है कि 'रामराज्य' का डंका अभी तक बज रहा है और हम लोग रामचन्द्रजी को साक्षात् ईश्वर का अवतार मानते हैं तथा सच्चे हृदय से भक्ति करते हैं। इस समय भी भारतवासी अपने सम्राट् को उसी दृष्टि से देखते हैं और उनकी सेवा के लिये मनसा, वाचा और कर्मणा से सदा तत्पर रहते हैं।

५. इस संसार में प्रजा ही के लिये राजा का और राजा

के लिये प्रजा का निर्माण हुआ है। जब तक दोनों का यह सम्बन्ध उचित रूप से स्थिर रहेगा तभी तक दोनों इस जगत् को स्वर्ग बना कर सुख प्राप्त करते रहेंगे, अन्यथा यह सुखमय संसार दुःख निधान होकर नरक हो जायगा और कोई भी यहाँ जन्म लेना पसन्द नहीं करेगा। अतएव राजा और प्रजा दोनों को उचित है कि वे अपने अपने कर्त्तव्य का सदा पालन करते रहें। राजा प्रकृतिरञ्जनात्—कालिदासः।

ईश्वरभक्ति (Devotion towards God).

१. ईश्वर और उसकी भक्ति का परिचय। २. ईश्वर की सत्ता। ३. ईश्वर की भक्ति क्यों करनी चाहिये? ४. ईश्वर की भक्ति किस प्रकार कर सकते हैं। ५. उपसंहार।

१. जिसने हमको और संसार की सभी वस्तुओं को बनाया है, जो सारे संसार पर शासन करता है, जिसकी आज्ञा बिना संसार का कोई कार्य भी नहीं हो सकता, जिस की इच्छामात्र से ही प्रकृति के सब कार्य नियमित रूप से सम्पादित हो रहे हैं और जो सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी तथा निराकार है—उसीका नाम ईश्वर है। मनसा, वाचा और कर्मणा से ईश्वर की सेवा करना और उसकी सृष्टि को सहायता पहुँचाना ही ईश्वरभक्ति है।

२. बहुत से मनुष्य यह शङ्का करते हैं कि यह संसार आप से आप बन गया है, इसका रचने वाला कोई नहीं है, परन्तु यह समझना उनकी भारी भूल है। हम लोग प्रतिदिन देखते हैं कि सूर्य पूर्व में उदय होता है और पश्चिम में डूबता है। जाड़ा, गर्मी और वर्षा इत्यादि ऋतुएँ समय समय पर होती हैं। इन बातों से साफ़ प्रकट होता है कि इन नियमों का बाँधने वाला कोई अवश्य है। यदि तुम किसी स्थान को

जाओ और राह में रुपये पड़े हुए देखो तो तुम्हें यह अनुमान होगा कि किसी पथिक के रुपये गिर पड़े होंगे, परन्तु जब यह देख पड़े कि प्रत्येक रुपया ठीक तीन तीन हाथों की दूरी पर रक्खा हुआ है तब तुम्हें यह अवश्य निश्चित हो जायगा कि किसी चतुर मनुष्य ने ऐसा प्रबन्ध किया है। इसी प्रकार प्रकृति के इन अटल नियमों के देखने से ईश्वर के होने में किसी प्रकार की शङ्का नहीं हो सकती।

३. ईश्वर बड़ा ही दयालु है। वह प्रति क्षण हमारी—हमारी ही क्या सारी प्रकृति की—चिन्ता रखता है। उसने हमारे लिये क्या ही अच्छी अच्छी वस्तुएँ दी हैं! यह वायु जिसके बिना हम एक मिनट भी नहीं जी सकते, यह पानी जिसको पीते हैं, यह भोजन जिसको खाते हैं और यह पृथ्वी जिस पर आनन्द करते है—इत्यादि इत्यादि सभी पदार्थ हमें ईश्वर से मिले है।

यदि वह सूर्य नहीं बनाता तो हम लोग मारे जाड़े के मर जाते। रात को आकाश में जो छोटे छोटे दीपक से नज़र आते है जिन्हें हम लोग तारे कहते हैं और एक अनुपम सौन्दर्य वाला गेंद सा दीख पड़ता है, जिसे हम लोग चन्द्रमा कहते हैं, ये भी ईश्वर ही ने हमें दिये हैं जो हमारे बड़े बड़े कार्य करते हैं।

यह आँख जिससे हम अपूर्व छटा देखते हैं, यह नाक जिससे हम सूँघते है, यह कान जिससे हम मधुर शब्द सुनते हैं, यह जीभ जिससे हम बोलते हैं—कहाँ तक कहें यह समूचा शरीर ही, जिसको हम अपना कहते हैं, जिसे देख देख कर हम फूले नहीं समाते, ईश्वर ने ही दिया है।

यह उसी प्रभु की महिमा है जिसने उत्पन्न होने से पहले

ही हमारी माता के स्तनों में दूध देकर हमारे जीवन का प्रबन्ध किया और माता पिता को प्रेम में डाल उनसे हमारी रक्षा कराई। उसीने अपनी दयालुता से हमको सृष्टि-शिरोमणि की उपाधि से भूषित किया है।

जब जब प्राणियों पर भारी विपत्ति पड़ती है और अत्याचार करने वाले बढ़ जाते हैं तब तब वह साकार रूप धारण कर संसार की रक्षा करता है। यही कारण है कि ईश्वर ने रामरूप से अत्याचारी रावण को, कृष्णरूप से आततायी कंश को और नृसिंहरूप से पापी हिरण्यकश्यप को नाश कर समय समय पर भक्तों का उद्धार किया है।

अतः, हम लोगों का यह पहला कर्तव्य है कि उस दयालु ईश्वर की भक्ति तन, मन और वचन से करें और सदा उसकी सेवा में तल्लीन रहें।

४. ईश्वर ने हम लोगों की इतनी भलाई की है कि हम उसका बदला नहीं चुका सकते। वह सदा हमें अच्छी अच्छी वस्तुएँ दिया करता है, परन्तु हमारे पास उसको देने के लिये कोई भी उत्तम पदार्थ नहीं है। एक तो वह हमसे कुछ माँगता नहीं, यदि माँगता भी तो हम देही क्या सकते? ऐसी अवस्था में यह उचित है कि हम उसके सदा कृतज्ञ बने रहें, उसके गुणों को याद किया करें और उसको हार्दिक धन्यवाद दें। देखो, कुत्ता एक टुकड़ी रोटी पाते ही अपनी पूँछ हिला कर कृतज्ञता प्रकाश करता है। फिर हम तो मनुष्य हैं, हमें तो कुत्ते से कहीं बढ़ कर अपनी कृतज्ञता प्रकाश करनी चाहिये।

हमें उचित है कि ईश्वर की आज्ञा सदा मानते रहें, सदा अच्छे कार्यों को करें और बुरे कार्यों के पास भी न फटकें। जिस प्रकार हम लोगों के पिता झूठ बोलने और चोरी करने

इत्यादि दुष्कर्मों के लिये हमें दण्ड देता है, उसी प्रकार सबों का पिता ईश्वर सत्य बोलने, विद्या पढ़ने इत्यादि सुकर्मों के लिये प्रसन्न होकर हमें सुख देता है और कुकर्म करने वालों पर अप्रसन्न होकर उन्हें दुःख देता है। इस लिये हमको सदा उनका भय रखना चाहिये और कभी मन में भी बुरे कार्यों को न विचारना चाहिये। वह सर्वान्तर्यामी है, उससे कोई छोटीसी बात भी हम नहीं छिपा सकते।

ईश्वर संसार का पिता है, इस लिये सभी जीव आपस में भाई भाई हुए। बस, हम लोगों को उचित है कि एक दूसरे में भाई भाई का प्रेम रक्खें, किसीको भी कष्ट न दें। जिस प्रकार यदि एक बालक अपने भाइयों को कष्ट दे तो उसका बाप उससे क्रुद्ध हो जायगा, क्योंकि बाप का प्रेम तो सब पर तुल्य होता है, उसी प्रकार ईश्वर का प्रेम भी हम सब पर बराबर है। यदि कोई एक दूसरे को सतावेगा तो ईश्वर उससे अवश्य क्रुद्ध हो जायगा।

५. जो मनुष्य ईश्वर का भक्त है, जो सच्चे हृदय से ईश्वर की भक्ति करता है, उसके सब मनोरथ भगवान् पूर्ण करता है। भक्तों ही के पास भगवान् का वास है। इस बात को श्रीकृष्ण भगवान् ने नारदजी से स्वयं कहा है—

नाहं वसामिवैकुण्ठे, योगिनां हृदये नच।
मद्भक्तायत्रगायन्ती, तत्र तिष्ठामि नारद॥

अतः, यदि हम चाहते हैं कि ईश्वर हमारे साथ रहे तो यह उचित है कि हम सदा उसके स्मरण में, भजन में, सेवा में और उपासना में लगे रहें। यदि हम उसके नियमों को पालते रहें, उस पर विश्वास रक्खें और सच्चे हृदय से उसके

दास बने रहें तो हमें कभी भी चिन्ता नहीं सतावेगी और न कोई विपत्ति ही झेलनी पड़ेगी।

दया (Kindness.)

१. प्रारम्भ। २. दया क्यों करनी चाहिये? ३ जीवों के साथ हम लोग कैसा व्यवहार करते हैं? ४ निर्दयता के फल। ५ दया कैसे दरशा सकते हैं। ६. उपसंहार।

"भगवान् निर्दयी मनुष्य को अपना शत्रु समझता है।"

१. यदि कोई जीव पीड़ा, क्लेश या दुःख से व्याकुल हो तो जिस सात्विक वृत्ति से उसकी पीड़ा, क्लेश या दुःख हम दूर कर सकते हैं, उसीका नाम दया है। किसी प्राणी को किसी प्रकार का दुःख न पहुँचाना भी दया ही है। दया एक ऐसा गुण है कि जिसके कारण मनुष्य अपने को मनुष्य कह सकता है, नहीं तो मनुष्य और पशु में कुछ भेद नहीं।

२. यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो यह बात समझ जायँगे कि सभी को हमारी सी जान है। हमारे समान सभी जीव खाते, पीते, सोते और डरते हैं। जब हमको कोई काँटा चुभ जाता है तब हम छटपटाने लगते हैं, इसी प्रकार कोई जीव क्यों न हो सभी को इस दुःख का अनुभव होता है। देखो, जब कोई निर्दयी लड़का किसी चिड़िये के पंख नोच लेता है तब वह छटपटाने लगती है।

संसार के जितने जीव है, सभी हमारी भलाई करते हैं। देखो, यह गाय की ही कृपा है कि जिससे हम बैठे मूछों पर ताव दे रहे हैं। कभी दूध पीते हैं, कभी दही खाते हैं। कभी मक्खन, कभी मलाई और कभी खीर ही बना लेते हैं। देखो, बैल गाय का बच्चा ही है जो हमें खेत जोत कर रोटी भात खिलाया करता है। घोड़े भी हमें कितना लाभ पहुँचा रहे हैं

जिनकी पीठ पर हम छैल चिकनिया बने फिरते हैं। टमटम और फिटिन में जोत कर अपने को बाबू बनाते हैं। यह घोड़ों ही की कृपा है कि लड़ाइयों में जीत होती है। यदि आपके पास कुत्ता है तो आप उसके लाभ अवश्य ही जानते होंगे। रात को आप पड़े सोते रहिये, कुत्ता आपकी रखवाली करेगा। चाहे स्वयं मर जाय, परन्तु आपकी एक वस्तु किसी को नहीं छूने देगा। इसी प्रकार संसार के सभी जीव हमें सदा दृश्य या अदृश्यरूप से लाभ पहुँचा रहे हैं।

यदि कोई बालक अपने भाइयों और बहिनों को कष्ट देता है तो उसका बाप उसे यथोचित दण्ड देता है, क्योंकि उसके लिये सभी बच्चे बराबर हैं। इस संसार का पिता ईश्वर है, इस लिये सभी जीव भाई भाई हुए। बस, हम लोगों को उचित है कि प्रत्येक को दया की दृष्टि से देखें, किसीको भी कष्ट न दें। यदि कोई एक दूसरे को सतावेगा तो ईश्वर उसे अवश्य दण्ड देगा।

३. गाय, घोड़े, बैल और कुत्ते इत्यादि जीवों से हम लोग इतना सुख पाते हैं, परन्तु हाय! उनके सुख का ध्यान तो दूर रहे बल्कि हम लोगों में से ऐसे भी महात्मा—महात्मा नही दुरात्मा—हैं जो इन्हें मार कर चट ही कर जाते हैं। गाय, बैल, भैंस, बकरी, भेड़, कबूतर इत्यादि सहस्रों जीव प्रति दिन मारे जाते हैं और हम लोग ऐसे निर्दयी हैं कि आह तक नहीं करते।

हम लोग तो शिकार करके आनन्दित होते हैं परन्तु बेचारे जीवों की जान जाती है। कहिये, जीवों ने क्या अपराध किया है कि ऐसे निर्दयी हो रहे हैं? जो जीव मरने से बचते भी हैं, उनके साथ बड़ा ही बुरा बर्ताव होता है। एक्के वालों

को देख कर आप अवश्य शङ्का में पड़ेंगे कि एक्के वाला पशु है या उसका घोड़ा पशु है। इसी प्रकार गाड़ीवानों को बैलों की पूछें ऐंठ ऐंठ कर हाँकना और हलवाहों को बैल पीटते हुए हल चलाना तो सभी जानते हैं।

इतना कठिन परिश्रम कराकर भी हम लोग इनके भोजन का कुछ भी प्रबन्ध नहीं करते। जब इच्छा हुई रूखा सूखा कुछ खाने को दे दिया, नही तो खबर भी न ली। इनके रहने का भी कोई ध्यान नहीं रखता। हम लोग तो आनन्द से घर में सोते हैं और ये बेचारे रात भर सर्दी में बाहर ठिठुरते रहते हैं। यदि इनके रहने के लिये घर भी है तो वहाँ शुद्ध हवा जाती ही नहीं। इन जीवों को पानी भी प्रायः खराब ही पिलाया जाता है। जब तक इन जीवों में बल रहता है तब तक इनसे काम लिया जाता है, पीछे हम लोग कसाई के हवाले कर देते हैं जो शीघ्र ही इन्हें इस संसार के दुःखों से छुटकारा दे देता है।

४. हाय! कैसे कैसे निर्दयता के कार्य हम लोग इस संसार में करते हैं? खूब याद रखिये, ईश्वर के सामने एक दिन अवश्य इन कार्यों के लिये उत्तर देना होगा। जो निर्दयी पुरुष है, वह ईश्वर का प्रेमपात्र कभी नहीं हो सकता। इस संसार में भी वह सबों की दृष्टि में नीचा दीखता है। सब उसके विमुख हो जाते हैं। परिवार के लोग भी उसे घृणा करने लगते हैं। सचमुच, निर्दयी पुरुष का हृदय कलुषित हो जाता है और उसकी सारी आत्मोन्नति रुक जाती है।

५. जीवमात्र को सब प्रकार से सुखी रखना, जिसको कोई नहीं पूछने वाला है उसको अवलम्ब देना, जिन्हें वस्त्र नहीं हैं उन्हें वस्त्र देना, जो भूखे हैं उन्हें भोजन देना, प्यासे

को जल देना, पीड़ित की पीड़ा दूर करना, दूसरे के दुःख में दुःखी होना और सुख में सुखी होना—इत्यादि कार्यों ही से हम दया दरशा सकते हैं। हमें उचित है कि अपने आश्रित जीवों से उचित कार्य लें, कभी उनसे शक्ति से अधिक कार्य न करावें। उनके खाने पीने और रहने सहने का उचित प्रबन्ध करें। 'अहिंसा परमोधर्मः' इस उपदेश के अनुसार चलना ही दयालु पुरुष का प्रथम उद्देश्य है। जो हिंसा करता है वह कभी दयालु नहीं हो सकता।

विद्वान् अपने उपदेशों से, बलवान् बल से, शक्तिवान् शक्ति से, धनी धन से और असमर्थ मीठी बातों ही से दूसरों पर दया दिखला सकता है।

६. परमेश्वर को दया बहुत पसन्द है इसीलिये उसका एक नाम दयालु है। जो मनुष्य दूसरों के दुःख दूर करने में तन, मन और धन से उद्योग करता है तथा अपने परायों के साथ बिना प्रयोजन सहायता करता है, वही ईश्वर को पहचान सकता है। अतएव यह उचित है कि यदि मनुष्य अपना मनुष्यत्व प्राप्त करना चाहे तो वह दयालु बनने की चेष्टा करे तथा अपनी सन्तानों को दया की शिक्षा दे और उनमें निर्दयता का प्रवेश कभी भी न होने दे।

पुण्यं तस्य न शक्यते गणयितुं यः पूर्णकारुण्यवान्।
प्राणानामभयं ददाति सुकृती येषा महिंसा व्रतम्॥

परोपकार।

१. प्रारम्भ। २. प्रकृति हमें परोपकार की शिक्षा देती है। ३. परोपकार से लाभ। ४. उपकार कैसे दरशा सकते हैं। ५. किसका उपकार करना चाहिये ? ६ उपसंहार।

परहित सरिस धर्म नहिं भाई।—रामायण।

१. बिना कुछ बदला लिये दूसरों की भलाई करने को

परोपकार कहते हैं। जिन जिन गुणों के होने से मनुष्य श्रेष्ठ समझा जाता है, उनमें सबसे पहला स्थान परोपकार का है। जिस मनुष्य में यह गुण नहीं है, उसे हम मनुष्य न कह कर मनुष्य के रूप में पशु कहना उचित समझते हैं।

२. हमें इस प्रकृति से उपकार करने की शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। देखो, यह पृथ्वी हमें क्या क्या नही देती—भोजन यही देती है, जल यही पिलाती है, और नाना प्रकार के कष्ट सह कर हमारे हृदय को यही प्रफुल्लित रखती है। सूर्य को देखो, भोरे निकल कर हमें गर्मी और प्रकाश देता है और सारे संसार को हरा भरा रखता है। यह चन्द्रमा जो अमृत बरसा रहा है, किसके लिये? हमारे ही लिये न? ये सभी हमारे उपकार कर रहे हैं, परन्तु इसका बदला वे हमसे कुछ भी नहीं चाहते। अतएव हम लोगों को भी उचित है कि जीवमात्र के उपकार में लग जायँ।

३. परोपकार से बढ़ कर दूसरा कोई पुण्य नही है। यह मनुष्य के हृदय को पवित्रता, सहनशीलता, दया, भक्ति और प्रेम की लीलाभूमि बना देता है। इसी एक गुण से हम मनुष्य कहला सकते हैं। नहीं तो कुत्ते बिल्ली भी हमारे समान खाते पीते, सोते जागते और डरते है। ईश्वर यही चाहता है कि हम सब एक दूसरे की भलाई में लग जायँ। जो परोपकारी नहीं है वह ईश्वर का शत्रु है, उसे कभी इस संसार में विपत्तियों से छुटकारा नहीं मिल सकता।

४. भूखे को भोजन देना, प्यासे को पानी पिलाना, वस्त्रहीन को वस्त्र देना, जिसके प्राण सङ्कट में हों उसके प्राण बचाना—कहाँ तक लिखें, जीवमात्र की उचित आवश्यकता को तन, मन, धन से पूर्ण करना ही उपकारियों का परम

कर्त्तव्य है । परन्तु 'विद्यादान' सबसे बढ़ कर उपकार है । भोजन, वस्त्र इत्यादि तो क्षण भर की आवश्यकता को पूर्ण करते हैं, लेकिन विद्या मनुष्य को जीवन भर काम आती है, सारे दुःखों से बचाती है और उसके वंश को भी सुधार देती है ।

५. यदि हम धनवान् को धन दें तो इससे उसकी कुछ भलाई नहीं हो सकती । जो मनुष्य अपने परिश्रम से रोटी प्राप्त कर सकता है उसे भोजन देने से हम उपकारी नहीं हो सकते, बल्कि इस कार्य से संसार में आलसी और पुरुषार्थ-हीन मनुष्यों की संख्या बढ़ती जायगी । जब हट्टे कट्टे पुरुषों को योंहीं भोजन मिलेगा तो वे अकर्मण्य हो जायँगे । अतएव जब किसी का उपकार करना हो तब यह विचार लेना चाहिये कि उसको किस पदार्थ की यथार्थ आवश्यकता है । यों ही आँखें मीच कर किसी को कुछ दे देना उपकार नहीं कहला सकता । जो अपात्र को कुछ देता है वह पातकी होता है ।

जो हट्टे कट्टे हैं और उनके पास जीवनयात्रा के लिये कुछ नहीं है, उन्हें ऐसे कार्यों में लगाना चाहिये जिससे वे अपनी रोटी आप अर्जन करके खायँ । इससे वे सदा उद्योगी बने रहेंगे तथा बैठे बैठे खटिया तोड़ने के अभ्यासी नहीं होंगे ।

६. भारत में शिबि, दिलीप और दधीचि इत्यादि बहुत से परोपकारी महात्मा हो गये हैं, जिन्होंने जीवों की भलाई के आगे अपने शरीर और सुख को तृणवत् समझा । धन्य हो दधीचि ! तुम तो ऐसे उपकारी हुए कि दूसरों के प्राण बचाने के लिये अपनी हड्डी तक दे डाली !! यही कारण है कि आज कितने ही युग बीत गये, तौ भी तुम्हारा नाम हम लोग

आदर, भक्ति और श्रद्धा के साथ जपते हैं और भविष्य में भी लोग जपते रहेंगे।

परोपकरणं येषां जागर्ति हृदये सताम्।
नश्यन्ति विपदस्तेषां, सम्पदस्तु पदे पदे॥

दूसरों का सत्कार।

१ प्रारम्भ। २ ससार में सत्कार के पात्र कौन हैं? ३. सत्कार किस प्रकार करना चाहिये? ४ सत्कार का फल। ५ उपसहार।

१. जिन गुणों से हम मनुष्य कहला सकते हैं, उनमें दूसरों का आदर-सत्कार करना भी एक मुख्य गुण है। यह नम्रता प्राप्त करने की प्रधान सीढ़ी है, जो वशीकरण मन्त्र का गुण रखती है।

२. जन्म देनेवाले माता पिता, शिक्षा देने वाले गुरु और किसी न किसी प्रकार की भलाई करने वाले सामाजिक प्राणी—सभी हमारे सत्कार के पात्र हैं। जिनकी आयु बड़ी है अथवा आयु कम होने पर भी जो बल, विद्या, बुद्धि और सामर्थ्य में बड़े हैं, उनका भी सत्कार करना हमारा कर्तव्य है। राजा जो हमारी रक्षा करता है, सबसे बड़ा सत्कार का पात्र है।

इससे यह नहीं समझना चाहिये कि जो हमसे सभी बातों में छोटा है, उसका सत्कार ही नहीं किया जाय। हाँ वह भी हमारे प्रेम का पात्र है और सदा हमारे उपकार के पवित्र भाजन हैं। अतएव हम लोगों को चाहिये कि उनको तुच्छ दृष्टि से न देखें।

३. हम लोगों को उचित है कि जब बड़ों से भेंट हो तब खड़े होकर नम्रतापूर्वक उन्हें प्रणाम या नमस्कार करें, उनको

अच्छे आसन पर बैठावें। यदि हम लोग बड़ों के यहाँ जायँ तो उनकी आज्ञा से उचित स्थान पर बैठें। छोटे या बड़े—किसी के साथ भी वार्तालाप में उजड्डपन न दिखावें, वरन् नम्रता और शीलस्वभाव से काम लें। बड़ों से बात करते समय उनसे आँखें न मिलावें, बल्कि गर्दन कुछ नीची कर लें। छोटों से भी जब बोलना हो तब इस भाँति बोलना चाहिये कि प्रेम टपकता रहे।

४. बड़ों का आदर करने से हमलोग नम्रता गुण प्राप्त करते हैं, जिससे अपनी अवस्था का ज्ञान हो जाता है तथा ऐसे कार्यों से बचते हैं जिनसे दोषी होने का डर है। गुणवानों का आदर करने से उनके गुण हम सीखते हैं। जो विद्यार्थी शिक्षक का आदर नहीं करता, उसे विद्या कभी नहीं आती तथा वह संसार यात्रा को भली भाँति कभी नहीं पूर्ण कर सकता। हम सदा यही चाहते हैं कि संसार हमारा आदर करे, परन्तु यह तभी होगा जब हम संसार का आदर करने लगेंगे। यदि हम दूसरों का आदर नहीं करेंगे तो सबों की दृष्टि से गिर जायँगे, सभी हमसे घृणा करेंगे, कोई हमारी सहायता नहीं करेगा।

माता, पिता और गुरुजनों का सम्मान हमें हृदय से करना चाहिये। जो ऐसा करते हैं उनकी सन्तान भी उनका सम्मान करने लगती है। जो अपने माबाप की आज्ञा नहीं मानता तथा उनका आदर नहीं करता उसकी सन्तान भी समझ जाती है कि हमें भी अपने माबाप के साथ ऐसा ही बर्ताव करना होगा।

५. क्या भोजन, क्या व्यवहार सभी बातों में आदर की आवश्यकता है। रहिमन कवि ने ठीक ही कहा है—

"रहिमन मुहि न सुहाय, अमिय पियावै मान बिन।
जौं विष देय बुलाय, प्रेम सहित मरिबो भलो॥"

जहाँ मान नहीं है वहाँ यदि अमृत भी मिले तो वह विष का काम करता है, परन्तु जहाँ आदर है वहाँ की साग भाजी भी अमृत से बढ़ जाती है।

धर्म (Righteousness.)

१. धर्म क्या है। २ धर्म के लक्षण और धर्मपालन के लिये उपदेश। ३. वर्तमान समय मे धर्म की दुर्दशा।

१. जिससे प्राणियों की लौकिक उन्नति और पारलौकिक मोक्ष की प्राप्ति हो, उसी को धर्म कहते हैं।* अथवा यों कहिये कि जिसके सहारे यह संसार सदा फूलता फलता है, जिसकी दिव्य जोत से ज्ञान का दीप जलता है और जिससे यह पृथ्वी टिकी है, उसी का नाम धर्म है।†

२. श्री मनु भगवान् ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ मनुस्मृति में धर्म के दस लक्षण बतलाये हैं—

धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, धी, विद्या, सत्य और अक्रोध। इन लक्षणों की संक्षिप्त व्याख्या नीचे की जाती है।

(१) धृति—किसी शुभ कर्म को आरम्भ करके बीच में कभी मत छोड़े, वरन् विपत्तियों का सामना करते हुए धीरतापूर्वक उसे पूर्ण करे।

(२) क्षमा—यदि कोई अयोग्य व्यवहार करे तो उससे

* यतो अभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः सधर्म्मः।—कणाद।

† जगतः स्थितिकारणं प्राणिनां साक्षादभ्युदये निश्रेयसहेतुर्यः सधर्मः।—शङ्कराचार्य।

बदला न ले, वरन् क्षमा कर दे। हाँ, उसको उपदेश द्वारा समझा दे जिससे वह उस अयोग्य व्यवहार से घृणा कर ले।

(३) दम—अपने मन में कोई बुरा भाव न जमने दे। मन को सदा अच्छे कार्यों में लगाये रहे।

(४) अस्तेय—किसी का कोई पदार्थ बिना उसकी आज्ञा के लेना चोरी है, इसलिये चोरी कभी न करे।

(५) शौच—शरीर, वाणी और मन को शुद्ध रखना ही शौच है। अतएव यह उचित है कि शरीर को जल से, वाणी को सत्य से और मन को विद्या और तप से पवित्र रक्खे।

(६) इन्द्रिय निग्रह—अपनी इन्द्रियों को सदा बुरे कार्यों से रोके रहे। मुँह से कभी बुरे वचन न बोले, हाथ से किसी को न सतावे, पैरों से बुरी राह पर न चले, किसी को बुरी दृष्टि से न देखे और न कान से कोई बुरी बात सुने।

(७) धी—ऐसे ऐसे कार्य करे जिससे बुद्धि प्रबल हो।

(८) विद्या—विद्या उपार्जन करने में सदा लगा रहे।

(९) सत्य—सदा सत्य व्यवहार करे, सत्य ही माने और सत्य ही बोले। कभी भी छल कपट से काम न ले।

(१०) अक्रोध—किसी पर क्रोध न करे।

अतएव प्रत्येक मनुष्य को उचित है कि वह धर्म के इन लक्षणों को धारण करे और अपने सम्प्रदाय की आज्ञानुसार सन्ध्या, पूजा, पाठ, जप, दान और होम प्रभृति में लगा रह कर अपने कर्तव्य को पूर्ण करे, अपने कुल की मर्यादा को नहीं त्यागे तथा कोई ऐसा कार्य न करे जिससे उसके कुल में बट्टा लगे। जो मनुष्य इन नियमों पर चलेगा वह अवश्य ही लौकिक उन्नति करता हुआ परलोक को भी साध लेगा।

३. हमारे धर्म के ऐसे पवित्र विधान मनुजी ने किये हैं जो

संसार में सबों के लिये एक ही समान मान्य हैं, परन्तु हमें शोक के साथ लिखना पड़ता है कि इनमें से किसी का भी पता हममें नहीं है। हम लोग अब केवल साम्प्रदायिक झगड़ों में लगे रहते हैं और साधारणतः संध्या, पूजा, पाठ, जप, होम और तिलक चन्दन ही को धर्म की चरम सीमा मानते हैं, परन्तु यह तो धर्म का केवल एक अङ्ग मात्र है। जब तक इस कार्य के साथ साथ धर्म के ऊपर लिखित दसों लक्षण हममें न आयँगे, हम कभी भी धार्मिक नहीं हो सकते।

आधुनिक काल में तो धर्म की ऐसी दुर्दशा हो चली है कि इसके साथ आडम्बर भी दीख पड़ता है। जिनको धन है वे ही धार्मिक कहलाते हैं। धर्मग्रन्थों में जो वाक्य अपने अनुकूल हैं वे ही सत्य हैं और शेष प्रपंच हैं। जितने मनुष्य हैं उतने ही पंथ हैं। अँगरेजी पढ़े लिखे हिन्दुओं की दृष्टि में ईसाइयों का 'रेलीजन' शब्द ही धर्म है और जो हिन्दू फ़ारसी और अरबी के पण्डित हैं वे मजहब और 'धर्म' का एक ही अर्थ करते हैं। इत्यादि।

इसी दुर्दशा के कारण सारे गुण हमसे दूर होते जा रहे हैं और हमारा जीवन कण्टकों से आच्छादित होता जा रहा है। अतएव हम लोगों को उचित है कि 'धर्म क्या है' इसको भली भाँति विचारें और धार्मिक बनने की चेष्टा करें।

जिसके लिये संसार अपना सर्वकाल ऋणी रहा,
उस धर्म की भी दुर्दशा हमने उठा रक्खी न हा!
जो धर्म सुख का हेतु है, भवसिन्धु का शुभ सेतु है।
देखो, उसे हमने बनाया अब कलह का केतु है!!

श्री मैथिलीशरण गुप्त।

स्त्रीशिक्षा (Female Education).

१. प्रारम्भ। २. स्त्रीशिक्षा की आवश्यकता। ३ विरुद्ध मत। ४ स्त्रीशिक्षा से लाभ—विरुद्ध मत का खण्डन। ५ स्त्रीशिक्षा किस प्रकार और किस ढग से होनी चाहिये। ६. उपसहार।

दीया तले अँधेरा—इसका क्या भाव है?

१. जिससे शारीरिक, मानसिक और नैतिक शक्तियों का विकाश हो उसे शिक्षा कहते हैं। मनुष्यों की ये शक्तियाँ शिक्षा द्वारा विकसित होती हैं जिससे वे अपने कर्त्तव्य कर्म पर आरूढ़ रहते हैं। अतः जिस शिक्षा से स्त्रियाँ अपने कर्तव्य, धर्म और आचरण का पूरा पूरा ज्ञान प्राप्त कर लें और उनके पालने की शक्ति पा जायँ उसीका नाम स्त्रीशिक्षा है।

२. "पुरुषों की सहायता से अपने कुटुम्ब का पालनपोषण करना, अपने बच्चों में गुण, साहस और उत्साह भरना तथा उन्हें धार्मिक और सुचरित्र बनाना, अपने मधुर बचनों से सांसारिक कार्यों से दुःखित पतिपुत्रों को आनन्दित करना एवं ईश्वरीय इच्छाओं तथा उनके उद्देश्य को भली भाँति समझ कर उन्हें पूरा करना"—इत्यादि जितने स्त्री के कर्त्तव्य हैं उन सबों को सफल होने के लिये स्त्रीशिक्षा की बड़ी की आवश्यकता है।

३. बहुत से लोग स्त्रीशिक्षा के कट्टर विरोधी हैं। वे कहते हैं कि स्त्रियों का काम भात रोटी बनाना, गृहकार्य देखना और बच्चों को संभालना है। पढ़ कर स्त्रियाँ बिगड़ जाती हैं। यदि पढ़ लेंगी तो पुरुषों से बराबरी करने को तत्पर हो जायँगी इत्यादि। इन विरुद्ध बातों का खण्डन नीचे के वाक्यों से अच्छी तरह हो जायगा।

४. भात रोटी बनाना जरा टेढ़ी खीर है। रसोई तभी अच्छी

बन सकती है जब स्त्रियाँ 'पाक शास्त्र' में प्रवीणा हों। यह एक विद्या है, इस पर बीसियों पुस्तकें लिखी गई हैं जिनमें रसोई सम्बन्धी पदार्थों के गुण और अवगुण भी लिखे हुए हैं। यदि स्त्रियाँ शिक्षिता हों तो इन पुस्तकों के सहारे अच्छी रसोई बना सकती हैं, अच्छी रीति से चौका संभाल सकती हैं, अन्यथा फुहड़पन को प्रसिद्ध ही है।

प्रायः धनी घरों की स्त्रियों को रसोई नहीं बनानी पड़ती। वे दिन भर गप शप और झगड़े में लगी रहती हैं। कभी कभी ऐसे बुरे कार्य कर डालती हैं, जिन्हें कहने की आवश्यकता नहीं। यदि ये शिक्षिता हो जायँ तो अच्छी अच्छी पुस्तकें पढ़ कर अपना जी बहलावें और अपने कर्त्तव्य को भी समझ जायँ।

स्त्रियाँ घर की अधिष्ठात्री हैं। संसार में मनुष्यों का जो कुछ अभ्युदय है, नाम, यश, प्रतिष्ठा इत्यादि हैं, उन सब का मूल घर ही है। घर ही के उचित और उत्तम प्रबंध होने से पुरुष संसार में निःशंक होकर अपना कर्त्तव्यसम्पादन करता है। अतः, यह आवश्यक है कि स्त्रियाँ पढ़ीलिखी हों, अन्यथा समस्त कुटुम्ब बात की बात में नष्टभ्रष्ट हो जा सकता है।

बच्चों के सुधारने में सब से अधिक शिक्षा की आवश्यकता है। बच्चा जैसी संगति में रहेगा वह वैसा ही होगा। छोटे बच्चे लड़कपन में माताओं ही के साथ रहते हैं और उन्हीं के शीलस्वभाव और रंगढंग में सन जाते हैं। अतः, यदि माताएँ पढ़ी लिखी हैं तो बच्चों पर विद्या और बुद्धि का प्रभाव पड़ता है और सयाने होने पर वे सत्पुरुष निकलते हैं, नहीं तो वैसे ही कोरे के कोरे रह जाने का भय है।

शिक्षा पाकर स्त्रियाँ बिगड़ती नहीं, सुधर जाती हैं। अपने कर्त्तव्याकर्त्तव्य को समझ जाती हैं। उन्हें भले बुरे और धर्मा-

धर्म का ज्ञान हो जाता है और वे धूर्तों के फंदों से बच सकती हैं। यह प्राचीन शिक्षा ही का संस्कार है कि हमारी स्त्रियाँ पतिव्रता हैं, अपने पति की तन, मन और वचन से सेवा करती हैं और पर पुरुष का मुँह देखना पाप समझती हैं। उनमें इतना प्रेम है कि अपने पति को अपना सर्वस्व समझती हैं, बराबरी का विचार भूल कर भी नहीं करती। इस समय शिक्षा की कमी ही के कारण इन बातों में कुछ विभिन्नता देख पड़ती है। यदि शिक्षा का उचित प्रबन्ध हो तो फिर सोने में सुगन्ध आ जाय।

जिस शिक्षा से स्त्रियाँ बिगड़ती हैं वह शिक्षा नहीं, कुशिक्षा है। वह प्राचीन आदर्श को सामने रख कर नहीं दी जाती। कुसंग और कुप्रबन्ध के कारण, सामाजिक दुर्विचार के कारण तथा पुरुषों की स्वार्थान्धता, असद्विचार, असत्कार्य और कुचरित्र होने के कारण स्त्रियाँ बिगड़ जाती हैं। अतरकट्टू डायन बनाना भी बिगाड़ना ही है। "नीम हकीम ख़तरे जान।"

५. "स्त्रियों को किस प्रकार की शिक्षा किस ढङ्ग से देनी चाहिये?" इस पर भी कुछ विचारिये। हमारी स्त्रियों को शिक्षा अच्छी देख रेख में भारतीय आदर्श को सामने रखकर मिलनी चाहिये, विदेशी आदर्श यहाँ के लिये उपयुक्त नहीं। पारिवारिक शिक्षा के साथ साथ चिकित्साशास्त्र और अपने इतिहास भूगोल का भी साधारण ज्ञान उन्हें होना चाहिये। स्त्रियों का क्या धर्म है—पति के साथ उनका क्या सम्बन्ध है—ससुर इत्यादि परिवार के लोगों के साथ उनका क्या लगाव है—पति के घर में उनका कौनसा स्थान है—इत्यादि बातों की शिक्षा उन्हें अच्छी तरह मिलनी चाहिये। हिन्दू-शास्त्रों की अच्छी अच्छी नीति सम्बन्धिनी कथाओं को

भी यदि हम लोग स्त्रियों तक पहुँचा सकें तो विशेष लाभ हो सकता है। हमारी स्त्रियों को कालेज की डिग्रियों की आवश्यकता नहीं, क्योंकि उन्हें आँगन भर के कार्य करने हैं। कहिये, आँगन में वकीली किस से करेंगी? वर्णमाला पढ़ा कर अक्षरकट्टू डायन बनाना भी ठीक नहीं, ऐसी ही स्त्रियाँ अपने कर्त्तव्य कर्म को भुला कर चौपट हो जाती है। प्यारे शिक्षित भारतवासियो! अपनी बहुओं, बहनों और बेटियों को अपने से पढ़ा कर शिक्षिता बनाओ।

६. जिस घर की स्त्रियाँ शिक्षिता नहीं है वह भूत का घर है। उस घर में सुमति रहती नहीं, सदा अशान्ति विराजती रहती है। वहाँ आलस्य, कलह और दरिद्रता का वास हो जाता है। बच्चे सब बिगड़ जाते हैं। सदा आपस में अनबन रहा करती है। खूब याद रक्खो, जाति, समाज और देश की उन्नति स्त्रीशिक्षा ही पर निर्भर है।

मित्रता (Friendship).

१ परिचय। २. आवश्यकना। ३ मित्रता के पात्र। ४ सच्चा मित्र—उपकार। ५. कपटी मित्र—हानि। ६ उपसंहार।

> अत्यागसहनो बन्धुः समप्राणः सखा मतः।
> एकक्रियं भवेन्मित्रं, सदैवानुमतः सुहृत्॥

१. जो वियोग नहीं सह सकें वे बन्धु, जो प्रेमी सदा सहमत रहें वे सुहृद्, जिनकी क्रिया एक होवे वे मित्र और जिनके प्राण एक हों वे सखा कहलाते हैं। जिसने कठिन समय की कसौटी पर कसे हुए मित्र की मित्रता पाई है, उसी पुरुष का जीवन संसार में धन्य है।

२. मनुष्य का स्वभाव है कि वह अकेला नहीं रहना

चाहता, वह सदा संग ढूँढ़ता है। विद्वानों ने कहा है कि जो मनुष्य अकेला रहना चाहता है वह या तो देवता है या पशु। अकेला रहना सचमुच कष्टदायक है, यही कारण है कि जब अपराधी को कठिन दण्ड मिलता है तब वह निर्जन स्थान में रक्खा जाता है। अतः यह स्वभावतः सिद्ध है कि प्रत्येक मनुष्य को किसी न किसी से मित्रता हो ही जाती है।

३. प्रायः एक अवस्था वाले मनुष्यों में प्रकृतमित्रता की अधिक सम्भावना रहती है। यदि दोनों में समता न होवे तो मित्रता नहीं हो सकती। बालक और वृद्ध में, धनी और निर्धन में, गृहस्थ और संन्यासी में, पण्डित और मूर्ख में तथा आस्तिक और नास्तिक में मित्रता असम्भव है। जिनकी प्रवृत्ति एक ही विषय में होती है और जो एक ही कार्य के अनुरागी होते हैं उन्हीं में प्रकृतमित्रता अङ्कुरित होती है। मन और मत की एकता मैत्री को स्थायी और दृढ़ बनाती है। असम अवस्था और विभिन्न प्रकृति वाले मनुष्यों की मित्रता क्षणिक और स्वार्थ के लिये होती है।

४. सच्चा मित्र तो संसार में दुर्लभ है, परन्तु जिसने इसे पाया है वह सचमुच भाग्यवान् है। पण्डितों ने कहा है कि जो उत्सव, व्यसन, दुर्भिक्ष, राष्ट्रविप्लव, राजद्वार और श्मशान में साथ दे वही यथार्थ मित्र है। सच्चा मित्र अपने मित्र की मंगलकामना में सदा लगा रहता है। वह अपने मित्र से बदला नहीं चाहता और न अपना कोई कार्य साधता है। वह अपने मित्र को कुमार्ग से रोक कर सुमार्ग पर लाता है, उसके अवगुणों को छिपा कर गुणों को प्रकट करता है, लेन-देन में कोई हीला बहाना नहीं करता और जीजान से उसकी भलाई में लग पड़ता है। वह शोक में सान्त्वना देता है, अच्छे

कार्यों में उत्साह दिलाता है। वह अपने मित्र के ऊपर अपने प्राणों को भी निछावर करने के लिये सदा तत्पर रहता है।

कुपथ निवारि सुपन्थ चलावा।
गुण प्रकटहिं अवगुणहिं दुरावा॥
देत लेत मन शङ्क न धरहीं।
बल अनुमान सदा हित करही॥
विपति काल कर शतगुण नेहा।
श्रुति कह सत्य मित्र गुण येहा॥

५. कपटी मित्र द्वारा नाना प्रकार के अनिष्ट होते हैं। उसे अपने मित्र के दोषों का संशोधन करना तो दूर रहा, बल्कि उन्हें संसार में प्रकाशित कर देता है। वह अपने मित्र के आगे मीठी मीठी बातें बनाता और पीछे उसकी निन्दा करता है। सुख में साथ देता है और दुःख में छोड़ देता है। जब तक उसको अपना स्वार्थ रहता है, वह अपने प्रेम को खूब दरशाता है, परन्तु ज्यों ही स्वार्थ सधा कि वहाँ से अलग हो जाता है। वह यदि मौका लगे तो अपने स्वार्थ के लिये मित्र के प्राण तक ले लेता है। अतः, हम लोगों को उचित है कि ऐसे छली से सदा सावधान रहें।

आगे कह मृदुवचन बनाई। पाछे अनहित मन कुटिलाई॥
जाकर चित अहिगति सम भाई। अस कुमित्र परिहरे भलाई॥
सेवक शठ नृप कृपण कुनारी। कपटी मित्र शूल सम चारी॥

६. प्यारे विद्यार्थियो, जब यह बात ठीक है कि तुम कितने ही प्रसंगों पर माता, पिता, भ्राता इत्यादि से राय लेने में संकोच करते हो और मित्र से संकोच नहीं करते, जब प्यारी माता के अटूट प्रीतिरूपी प्रवाह में बारंबार स्नान करने पर भी पवित्र पिता का स्नेह पूर्णतया प्राप्त होते भी–उनके समक्ष हृदय-

पट खोलने का साहस न करके मित्र को दरशा सकते हो, तब तुम्हें उचित है कि इस संसारयात्रा को सुखपूर्वक पार करने के लिये सन्मित्ररूपी अमूल्य हीरे की कनी को खोज कर अपनी जीवनरूपी अँगूठी में जड़ा लो। फिर देखो कि तुम्हें क्या आनन्द मिलता है!

स्वच्छता (Cleanliness).

१. स्वच्छता क्या है। २ प्राप्ति के उपाय। ३ स्वच्छता और धर्म में सम्बन्ध। ४. आवश्यकता। ५. उपसंहार।

१. मलिनता से दूर रहना स्वच्छता है। कौन मलिनता? शारीरिक मलिनता, मानसिक मलिनता, व्यावहारिक मलिनता और सामाजिक मलिनता—ये ही चार मलिनता के मुख्य भेद हैं। जो इन गंदगियों से दूर रहता है, वही स्वच्छ है।

२. स्वच्छता के विचार से हमारा पहला कर्त्तव्य अपने शरीर को शुद्ध रखना है। हमारे चमड़े में असंख्य लोमकूप हैं, जिनसे सदा शरीर के दूषित पदार्थ बाहर निकलते रहते हैं। यदि चमड़े को स्वच्छ न रक्खें तो ये दूषित पदार्थ रुक जायँगे और यह शरीर रोग का घर हो जायगा। अतः, यह उचित है कि हम नित्य समय पर मलमूत्र त्याग कर स्नान किया करें, बालों को साफ़ रक्खें और मुँह धोवें तथा समय पर बालों और नखों को कटवा लिया करें।

हमारा दूसरा कर्त्तव्य वस्त्रों को स्वच्छ रखना है। यदि हमारे वस्त्र निर्मल नहीं रहें और हमारे बिछावन मैले रहें तो शरीर कभी स्वच्छ नहीं रह सकता। अतः, हमें चाहिये कि उन्हें ठीक समय पर धोबी से धुलवा लिया करें या अपने से धो लें। प्रति दिन वस्त्रों और बिछावन को धूप दिखाना भी

उचित है, इससे वे शुद्ध हो जाते हैं तथा उनमें रोगों के बीज भी नहीं रहने पाते ।

घर हमलोगों की वासभूमि है । इसकी मलिनता से हमारा स्वास्थ्य कभी भी ठीक नही रह सकता । अतः, यह उचित है कि घर, आँगन और पास की भूमि को सदा स्वच्छ रक्खें । स्वास्थ्य के नियमों के अनुसार घर बनावें और उसकी सफ़ाई में तनिक भी ढिलाई न करें ।

भोजन और जल की स्वच्छता पर पूर्ण ध्यान देना चाहिये। यदि ये दोनों पदार्थ स्वच्छ न रहें तो हम रोगों के पंजे में पड़ जायँगे और शीघ्र ही काल के गाल में पहुँच जायँगे। अतः, हम लोगों को चाहिये कि सदा शुद्ध भोजन खायँ और शुद्ध जल पीवें । बाज़ार की पूड़ी, मिठाई और सड़ी गली चीज़ों से सदा बचे रहें ।

३. देह की स्वच्छता से केवल शारीरिक ही उन्नति नही होती, इससे मानसिक उन्नति भी सम्पादित होती है । यही कारण है कि स्वच्छता और धर्म में अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध है । यदि शरीर शुद्ध न रहे तो अन्तःशुद्धि कभी भी नहीं हो सकती । इसी आधार पर हमारे ऋषियों ने स्नानादि बाह्य-शुद्धियों के पश्चात् पूजा अर्चा इत्यादि के लिये उपदेश दिया है ! प्रायः सभी जातियों के धर्मग्रन्थों ने बाह्यशुद्धि के पीछे ईश्वराराधन की व्याख्या की है ।

४. क्या धर्मचर्चा, क्या जी[illegible]—सभी स्वास्थ्य पर निर्भर हैं । शरीर यदि अस्वस्थ है, स्वास्थ्य भग्न है तो धर्मसाधन किस प्रकार होगा ? शरीर को निरामय रखने के लिये स्वास्थ्य के नियमों पर दृष्टि रखना उचित है। स्वास्थ्य अमूल्य धन है । रुपयापैसा रोगी को सुख नहीं पहुँचा सकता,

परन्तु जिसको स्वास्थ्य-धन है, वह सचमुच सुखी है। अब सोचो कि यह स्वास्थ्य किस पर निर्भर है? स्वच्छता ही पर न? क्या मैला आदमी स्वास्थ्य का सुख कभी पा सकता है? अतः, हम लोगों को उचित है कि स्वास्थ्य देने वाली स्वच्छता के लिये सदा ध्यान रक्खें।

'स्वच्छता' भद्रता और सभ्यता की पहली बानगी है। मलिन पुरुष सभ्य समाज में घृणित समझा जाता है। यदि हम सभ्य समाज में मिलना चाहते हैं तो सबसे पहले स्वच्छता के पाठ सीखें। मलिनता शरीर में नाना प्रकार के रोग लाती है। इसी मलिनता के कारण कभी कभी हम लोग संक्रामक रोगों के चपेटे में पड़ अकाल ही में कालकवलित हो जाते हैं। अतएव हम लोगों को चाहिये कि व्यावहारिक और सामाजिक स्वच्छता के लिये सदा उद्योग करते रहें और यह तभी हो सकता है जब हम अपने शरीर की शुद्धि के साथ साथ ईर्षा, द्रोह, पाखण्ड, असत्य और छल इत्यादि बुरे ख्यालों को छोड़ अपने मानस को भी स्वच्छ रक्खें।

५. बहुत से लोग स्वच्छता को विलासिता नाम देते हैं। जिनको ऐसी धारणा है उन्होंने स्वच्छता का मर्म वास्तव में नहीं समझा है। हाँ, जिन्होंने वेशभूषा का आडम्बर रच रक्खा है, उनकी बात ही न्यारी है। स्वास्थ्यरक्षा के विचार से स्वच्छता के लिये जो उचित कर्त्तव्य है हम लोगों को वही करना चाहिये।

शुद्ध रहना परमेश्वर की भक्ति करने से दूसरे दर्जे पर है।

चित्तसंयम (Control of Mind).

१. परिचय। २. चित्त संयमी और चित्तसंयम से लाभ। ३. चित्तसंयम की आवश्यकता कब होती है और इसकी मात्रा। ४. उपसंहार—यत्न।

१. "तुम घोड़े पर चढ़े कहीं जा रहे हो और उसकी

लगाम तुम्हारे हाथ में है। अब यदि तुम लगाम ढीली ही करते चले जाओ और उसे उचित राह पर नहीं चलाओ तो क्या यह सम्भव है कि तुम निश्चित स्थान पर पहुँचो? तुम अवश्य तंग गलियों में ठोकरें खाओगे, झाड़ीदार जंगलों के काँटों में फँसोगे, खड़ी चढ़ाई से गिर कर मरोगे, रेगिस्तान में पहुँच कर बालू फाँकोगे, अँधेरी गुफाओं में जाकर सिर तोड़ोगे या लम्बे चौड़े मैदान में भटकते फिरोगे।" इस कथन से तुम अवश्य समझते होगे कि चित्तसंयम क्या है। मन की रोक अर्थात् उसे अपने अधीन करना ही चित्तसंयम है।

२. जो चित्तसंयमी है वह मन रूपी घोड़े को अपने अधीन रखता है और उस पर सवार होकर अवश्य ही निश्चित स्थान में पहुँच जाता है। वह काम की तंग गलियों में ठोकरें नहीं खाता, क्रोध के झाड़ीदार जंगलों में नहीं फँसता, अहंकार की खड़ी चढ़ाई से गिर कर नहो मरता, ईर्ष्या के रेगिस्तान में बालू नहीं फाँकता, मोह की अँधेरी गुफाओं में जाकर सिर नही तोड़ता और लोभ के लम्बे चौड़े मैदान में भटकता नहीं फिरता। चित्तसंयमी का मन एकाग्र रहता है जिससे वह उत्साह पूर्वक अपने कर्त्तव्य का पालन करता है। जो विद्यार्थी एकाग्र होकर पढ़ता है वह अपने पाठ शीघ्र ही याद कर लेता है, परन्तु जिसमें एकाग्रता नहीं, वह महीनों में भी कुछ नहीं सीखता। यही एकाग्रता है जिसने अर्जुन से लक्ष्यवेध करा बड़े बड़े वीरों का मानमर्दन किया और इसी की कृपा से एकलव्य ने बाणविद्या सीखी। यही एकाग्रता है जिसने मनुष्य-समाज में ईश्वर तक पहुँच [illegible] अनेकों भक्त बना दिये।

३. जब हम काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि में पड़ कर मनुष्यत्व की सीमाओं का उल्लंघन करने लगते हैं तब मन के

रोकने की आवश्यकता पड़ती है। यदि इस परीक्षा में पास हुए तो समझो कि मनुष्यत्व पद सार्थक हुआ और नहीं तो तुम समाज की दृष्टि में चूभने वाले काँटे हो गये। मान लो कि तुमने क्रोधमें पड़ कर अपने किसी प्रेमी को बुरी बात कह दी। पीछे तुम्हें कितना पछतावा होगा! संभव है कि वह प्रेमी तुम्हें क्षमा कर दे, परन्तु हृदय में जो गाँठ पड़ गई है वह कभी खुलेगी? हम यह नहीं कहते कि तुम अपनी आत्मरक्षा न करो। भले ही करो। इसलिये क्रोध की मात्रा उतनी ही रक्खो जिससे तुम्हारे वास्तविक शत्रुओं का नाश हो, लोभ उतना ही करो कि सात्विक वृत्ति से जीविकोपार्जन हो सके, मोह उतना ही होवे जिसमें तुम्हारी सन्तान तुम से सुधर सके और समाज तुम्हारे जन्म से धन्य धन्य हो जाय। कहीं यह न हो कि आत्मरक्षा की आड़ में तुम्हारा मनरूपी घोड़ा कुमार्ग में पाँव डाले।

५. हम लोगों को उचित है कि चित्तसंयम के लिये सदा यत्न करते रहें। ईर्ष्या और अहंकार को सदा के लिये नाश कर दें। क्रोध, मोह इत्यादि को सीमा से बाहर न होने दें। सदा शान्ति से काम लें। ऐसा कोई गुण ही नहीं, जो अभ्यास से हम में नहीं आ सके। अभ्यास करते करते हम अपने मन को अपने वश में कर ले सकते हैं और जब मन वश में हो गया तब समझ लो कि हमने सुख का मार्ग पहचान लिया।

एकता (Unity.)

१. संज्ञा। २. एकता की क्षमता। ३. उपकार। ४. उदाहरण। ५. उपसंहार।

१. किसी एक उद्देश्य के साधन के लिये बहुत से लोगों

का एकमत होकर कार्य में लग पड़ना एकता का लक्षण है और इस प्रकार का मिलन एकता है।

२. एकता की क्षमता असीम है। सामान्य तृण से हम किसी छोटे जीव को भी नहीं बाँध सकते, परन्तु बहुत से तृण एकत्र कर जब हम रस्सी बना लेते हैं तब इससे उन्मत्त गजराज को भी बाँध डालते हैं। जल का एक छोटा बिन्दु हमारी दृष्टि में किसी मोल का पदार्थ नहीं, परन्तु बिन्दुसमूहों से बनी हुई नदनदियाँ जब प्रबल वेग से बहती हैं तब अपने दोनों किनारों को चूर्ण विचूर्ण कर डालती हैं और बड़े बड़े जहाजों और नावों को नाश कर डालती हैं, जिसे देख कर हम लोगों को अवाक् हो जाना पड़ता है।

यही गति प्राणियों की भी है। जब कोई जीव दल बाँध कर कार्य में लग जाता है तब वह अनायास पूर्ण हो जाता है। चींटी अत्यन्त ही दुर्बल प्राणी है, वह एक तृण के छोटे टुकड़े को भी नहीं ढो सकती, परन्तु जब सहस्रों चींटियाँ मिल जाती है तब बड़े बड़े मनियारे साँपों को भी मार कर खा जाती हैं। अतः, यह स्वभावतः सिद्ध है कि एक मनुष्य जिस कार्य को नही कर सकता, वह दसपाँच मनुष्यों के मिल जाने से बात की बात में समाप्त हो जाता है।

३. किसी कार्य में सफलता प्राप्त करने का एकमात्र उपाय 'एकता' ही है। यदि हम लोगों में एकता है तो क्या सांसारिक—क्या मानसिक सभी विषयों में हमें किसी प्रकार की असुविधा नहीं जान पड़ेगी। यदि दरिद्र के घर में भी परस्पर ऐक्य है—पितापुत्र में, भाई भाई में असद्भाव नहीं है तो वहाँ अवश्य ही शान्ति विराजती है। परन्तु यदि एकता का अभाव है, कोई किसी से सहानुभूति नहीं रखता, भाई भाई

के लिये स्वार्थ नहीं त्यागता तो राजप्रासाद में भी सुख नहीं, वह मरुभूमि के समान कष्टकर है और श्मशान के समान भयङ्कर है।

जिस समाज में ऐक्य नहीं, वह दुर्बल है—उसका पतन अवश्य ही होगा--वह कभी उन्नति और सम्पत्ति का मुँह नहीं देखेगा। एकता के अभाव से समाज की क्या गति होती है—देश की क्या दुर्दशा होती है—इसका स्पष्ट उदाहरण हमारा देश है। गाँवों और नगरों में जाकर देखिये इसके सैकड़ों दृष्टान्त मिलेंगे।

४. इतिहासों के देखने से पता लगता है कि जिस घर में, जिस समाज में, जिस जाति में और जिस देश में एकता है वही घर, वही समाज, वही जाति और वही देश उन्नत और समृद्धिशाली है। हम लोगों को सच्ची राह बताने वाली अँगरेज-जाति इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। इसने एकता ही के बल से धन और मान के साथ पृथ्वी में सबसे ऊँचा स्थान पाया है और राज्य विस्तार करके अपनी क्षमता का परिचय दिया है। यह जिस देश में है और जिस कार्य में हाथ डालती है, सभी में अपने देश की गौरवरक्षा के लिये प्रस्तुत रहती है और इसके निमित्त अपने प्राण तक दे देने में आगा पीछा नहीं करती।

५. शोक है कि हम भारतवासी सामने उदाहरण पाकर भी एकता गुण को नहीं सीखते। यदि हम अपनी उन्नति चाहते हैं तो हमें उचित है कि आपस का भेद भाव हटावें, किसी को ऊँचनीच नहीं समझें, मानापमान के विचार को जाने दें और एक होकर कार्यक्षेत्र में पदार्पण करें।

्वावलम्बन या आत्मनिर्भरता (Self-help).

१. परिचय। २ स्वावलम्बन की शिक्षा—प्रकृति हमें स्वावलम्बन की शिक्षा देती है। ३. स्वावलम्बन से लाभ और आवश्यकता। ४. परावलम्बन से हानि। ५. हम लोगों को क्या करना चाहिये ? ६. उपसहार।

१. कार्यसिद्धि के सर्वप्रधान उपायों में जिन जिन सद्गुणों की आवश्यकता है उनमें स्वावलम्बन अर्थात् किसी कार्य में परमुखापेक्षी न होकर अपनी ही शक्ति से उसे सम्पादन करना मुख्य है। यह एक ऐसा गुण है, जिसके न होने से मनुष्य में मनुष्यत्व का अभाव कहना अनुचित नहीं प्रतीत होता।

२. संसार में जो उन्नतिशील जातियाँ हैं उनके इतिहास देखने से जान पड़ता है कि उन जातियों में प्रत्येक मनुष्य ने आरम्भ ही से स्वावलम्बन की शिक्षा पाई थी, यदि ऐसी बात न हो, तो उनकी प्रसिद्धि में हमें सन्देह है। वे भोजन, वस्त्र, भूषण सभी कार्यों में अन्य जाति का गलग्रह होना घृणा समझती हैं। संसार के सभी कार्य हमें यह शिक्षा देते हैं कि अपना अभाव अपने ही से पूर्ण करो। यह सदा देखते हैं कि सभी निकृष्ट प्राणी आपही आप उठने की चेष्टा करते हैं। पहले वे दो एक बार अकृतकार्य तो होते हैं, परन्तु थोड़े ही समय में वे सफल हो जाते हैं, घूमने फिरने लगते हैं और अपने आहार को संग्रह कर लेते हैं, कभी परमुखापेक्षी नहीं होते। पालतू जीव अपने स्वामी के दिये भोजन पर जीवन निर्वाह करते हैं और अपने से कुछ भी चेष्टा नहीं करते। यदि कारणवश उनके स्वामी मर गये तो उनकी दुर्गति हो जाती है—उनके प्राण बचते हैं या नहीं, सन्देह है।

हमारे यहाँ धनीमानी के बच्चे सदा माता, परिवार या

दासदासियों की गोद के खिलौने बने रहते हैं, उन्हें एक मिनट की भी छुट्टी नहीं मिलती कि वे अपने बलबूते पर अपने को सँभालें। दरिद्र के बच्चे को देखिये, वह मिट्टी या चटाई पर पड़ा रहता है और माता सांसारिक कार्यों में व्यस्त रहती है। वह बच्चा पड़ा पड़ा अपने हाथपाँव झारता रहता है, कभी रोता है और कभी चितपट हो जाता है। इस प्रकार थोड़े ही दिनों में वह चलना सीख लेता है, परन्तु धनी के बच्चे को इस कार्य में बहुत दिन लग जाते हैं।

उपर्युक्त प्राकृतिक बातों से जान पड़ता है कि भगवान् ने सभी जीवों को स्वावलम्बन की शक्ति दी है और उसकी यह इच्छा है कि सभी इस शक्ति का उचित उपयोग करें, किसीके गलग्रह न बनें।

३. स्वावलम्बन शारीरिक और मानसिक उन्नतियों का एकमात्र सर्वोत्तम पथ है। इसके बिना किसी शक्ति की उन्नति नहीं हो सकती। विश्वविद्यालय की सबसे बड़ी उपाधि पाकर जितने स्वनामधन्य पुरुष निकले हैं और निकल रहे हैं, उनमें से प्रायः अधिकतर दरिद्रों के पुत्र हैं। उन्हें घर पर किसी दूसरे शिक्षक ने पाठ में सहायता नहीं दी। वे पुस्तकों के अभाव में इधर उधर भटकते फिरे। उन्हें भोजन वस्त्र के लिये भी आपत्तियाँ झेलनी पड़ीं। कहिये, वे इतने बड़े कैसे हुए? स्वावलम्बन के कारण। अब धनी मानी के बच्चों को देखिये। उन्हें घर पर शिक्षक पढ़ाते हैं। समय पर उनकी सभी आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं। उनको विद्या प्राप्त करने में किसी प्रकार की अड़चन नहीं डाली जाती। इतने पर भी वे प्रायः अधिकतर भोंदू ही रहते हैं। कहिये, क्यों? उनमें आत्मनिर्भरता नहीं है। यूरोप के देशों

की जो इतनी उन्नति है तथा अमेरिका, जापान आदि जो इस समय मनुष्यजाति के सिरताज हो रहे हैं इसका यही कारण है कि उन उन देशों में लोग अपने भरोसे पर रहना अच्छी तरह जानते हैं। हिन्दुस्तान का जो सत्यानाश है इसका यही कारण है कि यहाँ के लोग अपने भरोसे पर रहना भूल गये। ईश्वर भी सानुकूल सहायक उन्हींका होता है जो अपनी सहायता अपने आप कर सकते हैं। अपने आप अपनी सहायता करने की वासना आदमी में सच्ची तरक्की की बुनियाद है। अपने सुप्रसिद्ध सत्पुरुषों की जीवनी इसका उदाहरण तो हुई है, वरन् प्रत्येक देश या जाति के लोगों में बल और ओज तथा गौरव और महत्व के आने का आत्मनिर्भरता सच्चा द्वार है।

४. यदि हममें स्वावलम्बन नहीं है तो हममें मनुष्यत्व नहीं, हम कौड़ी के तीन हैं। हम हाथ पैर रहते लूले और लँगड़े हैं, आँख रहते अन्धे हैं और कान रहते बहरे हैं। संसार में किसी जाति ने परावलम्बन की बेड़ी पहन कर उन्नति नहीं की। इस समय हम लोग दूसरे के भरोसे जीते हैं। यदि जापान दीयासलाई न दे तो रसोई नहीं बना सकते। यदि विदेशी सूई तागे नहीं भेजे तो कपड़े नहीं पहन सकते। ये ही क्यों, हमारे सभी कार्य दूसरों के भरोसे होते हैं। इसी कारण से हममें ऐसा संस्कार घुस गया है कि हम अपने हाथों कोई कार्य करना 'लज्जा की बात' समझते हैं। हम सबों ने अपने व्यक्तिगत स्वावलम्बन को खोकर अपने समाज को—समाज ही को नहीं—बल्कि सारे भारत को परमुखापेक्षी बना डाला है। यही कारण है कि हममें बालविवाह, कन्याविक्रय, दहेज लेना, घूस खाना इत्यादि कई कुरीतियाँ घुस गई हैं।

यदि स्वावलम्बन को अपनाते तो—गत यूरोपीय महायुद्ध से हमारी जो हानि हुई, कई विदेशी वस्तुएँ जो इस समय नहीं मिलती हैं या बहुत ही अधिक मोल पर मिल रही हैं—इत्यादि अभावों की पूर्ति बात की बात में कर डालते और हमारी ऐसी दुर्गति भी नहीं होती।

५. जब यह बात स्वतः सिद्ध है कि हमारी उन्नति अपने ही करने से होगी, स्वावलम्बन ही से होगी, तब हमें उचित है कि इसके लिये भरपूर यत्न करें और अपनी आत्मा पर विश्वास करके कार्यक्षेत्र में पहुँच जायँ। जब ताता, विद्यासागर, बोनापार्ट इत्यादि महात्माओं ने यह प्रमाणित कर दिया है कि स्वावलम्बन ही उन्नति की जड़ है और सच्चे हृदय से कार्य आरम्भ करने से वह अवश्य पूर्ण हो जायगा तब हमें उचित है कि स्वावलम्बन का आश्रय ग्रहण करके अपने देश को साहित्य, और कला कौशलादि से भर दें। जब तक हम अपने से कार्य करने के लिये तैयार न होंगे तब तक कोई हमारी सहायता कभी भी नहीं करेगा। 'अपनी करनी पार उतरनी' इस कहावत के अभिप्राय को भली भाँति समझ लो और यह भी मन में बैठा लो कि संसार में ऐसा कोई कार्य ही नहीं है जिसको हम 'स्वावलम्बन, दृढ़प्रतिज्ञा, सदभिप्राय और श्रमशीलता' के बल से नहीं कर सकें।

६. स्वावलम्बन का यह अर्थ नहीं समझो कि हम सभी कार्य सब अवस्थाओं में अपने ही कर लें। जिन कार्यों को हम स्वयं नहीं कर सकते हैं या अपने कार्यों को दूसरों से करा कर उनके बदले अच्छे अच्छे कार्य कर सकते हैं, उन्हें अवश्य दूसरों की सहायता से करवा लो। कहीं यह न हो कि तुम आलसी बन जाओ और अपने कार्य दूसरों पर टाल दो।

बच्चों को मातापिता की, विद्यार्थियों को शिक्षक की, बड़े कार्य में बड़े लोगों की और कठिन कार्य में समाज की सहायता आवश्यक है, परन्तु कर सकने योग्य कार्यों में सहायता ढूँढ़ते फिरना अपने को परावलम्बन की बेड़ी पहनाना है। हे भगवन्!

"यह पापपूर्ण परावलम्बन चूर्ण होकर दूर हो।
फिर स्वावलम्बन का हमें प्रिय पुण्य पाठ पढ़ाइये॥"

—श्रीमैथिलीशरण गुप्त।

शिक्षा (Education.)

१. परिचय। २. प्रचलित अर्थ—सच्चा अर्थ। ३. शिक्षित मनुष्य।
४. अशिक्षित मनुष्य।

१. जिससे शारीरिक, मानसिक और नैतिक शक्तियों का विकाश हो उसे शिक्षा कहते हैं। शिक्षा मनुष्य की प्रकृति को सुधारती है, शारीरिक शक्ति को भरती है, बुद्धि को खोल देती है और सजीवता प्रदान करती है। अतः किसी मनुष्य की पूरी शिक्षा तभी कही जा सकती है जब उसमें ऊपर लिखी सभी बातें आ जायँ।

२. आज कल अँगरेजी भाषा का ज्ञान प्राप्त करना ही शिक्षा का अर्थ समझा जाता है और वही मनुष्य शिक्षित कहलाता है जिसने अँगरेजी भाषा सीखी है। परन्तु हमारे जानते शिक्षा का यह ठीक अर्थ नहीं। "हमारी समझ में वही मनुष्य शिक्षित है जिसने किसी भाषा द्वारा अपनी शक्तियों का विकाश पाया है, अपनी प्रकृति सुधारी है, शारीरिक शक्ति पाई है और सजीव है। शिक्षाका प्रधान उद्देश्य चरित्र सुधार के साथ पूर्ण मनुष्यत्व प्राप्त करना है। जिसने अपने मन को अपने वश में नहीं रक्खा, वह शिक्षित नहीं।" अँग-

रेजी भाषा ने उस मनुष्य की कुछ भी भलाई नहीं की जिसने उपर्युक्त गुण नहीं प्राप्त किये, जिसने अपने कर्त्तव्य को नहीं पहचाना, जिसने ईश्वर की आज्ञा को नहीं समझा और जिसने कार्यक्षेत्र के कार्य को नहीं कर दिखाया।

३. जो वास्तव में शिक्षित मनुष्य है वह संसार की सभी वस्तुओं में अपनी बुद्धि की प्रखरता दिखला देता है। उसे प्रकृति की सभी वस्तुओं में एक न एक सच्चा तत्व झलकता है। शिक्षा शिक्षित मनुष्य का जितना समय लेती है उतने से अपना अधिक फल उसे दे देती है। शिक्षा शिक्षित की शक्ति को समाज और देश पर फैला देती है, जिससे वह जीवन-संग्राम में अपूर्व सजीवता और उत्साह के साथ घुस पड़ता है और विजय प्राप्त कर स्वर्ग की सीढ़ी को चूम लेता है।

४. शोक है उसके लिये, जिसने उचित शिक्षा नहीं प्राप्त की। उसे आँख है, परन्तु वह प्रकृति में खूबी नहीं देखता। उसे बुद्धि है, परन्तु वह उसका उपयोग नहीं जानता। वह बिना पूँछ और सींग का पशु है। उसके जीवन का कोई मोल नहीं, क्योंकि उसने मनुष्यत्व पद को नहीं समझा है। वह पहाड़ का एक रुखड़ा पत्थर है, जो एक जंगली बल रखता है। मूर्खता ईश्वर का श्राप है और 'शिक्षा' स्वर्ग को पहुँचाने वाली चिड़िये का सुनहला डैना है।

अध्यवसाय (Perseverance).

१. अध्यवसाय किसको कहते है ? २. लाभ। ३. अध्यवसायी के लक्षण और नीतिवाक्य। ४. उदाहरण।

१. एक ही बार चेष्टा करने से संसार के सभी कार्य प्रायः सिद्ध नहीं हो सकते। अधिकांश ऐसे कार्य हैं जिनके सिद्ध

होने में नाना प्रकार की विघ्नबाधाएँ उपस्थित हो जाती हैं। किसी कार्य को सिद्ध करने के लिये दृढ़ चेष्टा के साथ, बार बार विघ्नबाधाओं के उपस्थित होने और असफलता प्राप्त करने पर भी, एकाग्र मन से उसमें तत्पर रहना 'अध्यवसाय' कहलाता है।

२. अध्यवसाय और परिश्रम इत्यादि के द्वारा ही मनुष्य इस संसार में उन्नति के पथ पर अग्रसर होता है। कार्य चाहे कठिन से कठिन क्यों न हो, अध्यवसायी उसे उत्साहपूर्वक कर ही डालता है। ज्यों ज्यों बाधाएँ उपस्थित होती हैं, त्यों त्यों अध्यवसायी में परिश्रमशीलता और सहिष्णुता इत्यादि गुणों की वृद्धि होती जाती है, तथा कार्य करने वाली शक्तियों का विकाश होता जाता है। नदी, जब आगे पर्वत इत्यादि बाधाओं को पाती है तब वह और अधिक वेग से बहने लगती है, इसी प्रकार कार्यक्षेत्र में जब नाना प्रकार की आपत्तियाँ सामने आती हैं तब अध्यवसायी की शक्तियाँ पहले से और अधिक कार्य कर दिखाती हैं। यह अध्यवसाय का ही प्रभाव है कि कितने साधारण अवस्थावाले मनुष्यों ने अपनी उन्नति दिखा कर संसार के मुख को उज्ज्वल कर दिया है।

३. जो अध्यवसायी है वह ऐसे कार्य अपने हाथ में लेता है जिसको वह कर सके। वह कठिन कार्यों से नहीं डरता, परन्तु अपनी पहुँच से बाहर के कार्यों को कभी नहीं छूता। वह जब किसी कार्य को पूर्ण करने के लिये बीड़ा उठाता है तब उसको बिना किये नहीं छोड़ता, चाहे उसमें लाख बाधाएँ क्यों न पहुँच जायँ। नीतिकारों ने कहा है कि जो मनुष्य अध्यवसाय का अवलम्बन नहीं करके व्यर्थ इधर उधर भटकता फिरता है वह कभी भी अपनी या समाज की उन्नति नहीं कर सकता।

४. स्काटलैंड का राजा 'राबर्ट ब्रूस' ने राज्य प्राप्ति के लिये लगातार ६ बार सेनाओं को इकट्ठा करके शत्रुओं से लड़ाई की, परन्तु हर बार हारता ही गया। निराश हो एक जंगल में विश्राम के लिये चला गया। वहाँ उसने एक मकड़े को देखा कि वह अपने धागे के सहारे एक वृक्ष पर चढ़ने के लिये बार बार चेष्टा कर रहा है। उस मकड़े ने क्रमशः ६ बार चेष्टा की, परन्तु प्रत्येक बार गिरता ही गया। अन्त में उसने सातवीं बार चेष्टा की और वृक्ष पर चढ़ ही गया। यह देख कर राजा ब्रूस को भी साहस बढ़ा। वह जंगल से लौट आया और सेना इकट्ठी करके शत्रुओं पर हमला कर दिया और उन्हें खदेड़ कर राज्य प्राप्त कर लिया। अतः, हम लोगों को उचित है कि इस कहानी से शिक्षा लाभ करें और अध्यवसायी बन कर देश के मुख को उज्ज्वल कर दें।

शिक्षक के प्रति विद्यार्थी का कर्त्तव्य।

१. शिक्षक से विद्यार्थी का सम्बन्ध और उपकार। २ छात्रकर्तव्य-पढ़ने के समय—पढ़ चुकने के पीछे—उदाहरण। ३. उपसंहार।

१. शिक्षक हमें विद्या पढ़ाते हैं जिससे हम सुखपूर्वक संसारयात्रा तै करते हैं तथा हिताहित और धर्माधर्म को पहचानते हैं। मातापिता हमें पोसपाल कर बड़ा बनाते हैं, परन्तु कैसा मनुष्य? पहाड़ के एक रुखड़े पत्थर के समान। यह सच्चे शिक्षक ही की कृपा है कि उनके ज्ञानोपदेश से हममें मानसिक बल आता है, हमारा अन्तःकरण सच्चे गुणों से विभूषित हो जाता है और हम उन्नति के सच्चे नियमों को सीखते हैं, अर्थात् हमारा रुखड़ापन सदा के लिये दूर हो जाता है। जिस प्रकार सन्तान की उन्नति देख कर मातापिता

को अनुपम आनन्द होता है, उसी प्रकार विद्यार्थी की उन्नति और विद्वत्ता से शिक्षक को भी आनन्द होता है। स्मृति के वचनानुसार विद्यादाता शिक्षक भी हमारे पाँच पिताओं में से एक पिता हैं। अतः, विद्यार्थी को उचित है कि वह शिक्षक को पिता के समान माने।

२. विद्यार्थी को चाहिये कि पढ़ाने के समय शिक्षक की बातों को मनोयोग पूर्वक सुने। जो ऐसा नहीं करता उसे विद्या नही आती है और परिणाम में कष्ट भोगना पड़ता है। किसी समय शिक्षक से अशिष्ट व्यवहार न करे। जब शिक्षक से भेंट हो, सम्मान के साथ उनको प्रणाम करे और सदा नम्र बना रहे। यदि शिक्षक किसी कार्य के लिये आज्ञा दें तो उसे उसी क्षण कर डाले। शिक्षक जिस कार्य के लिये निषेध करें, उसे कभी न करे।

शिक्षक के आदेश का प्रतिवाद करना या उनकी अवज्ञा करना विद्यार्थी को उचित नहीं। कारण, सच्चे शिक्षक कभी भी अनुचित कार्य करने के लिये आज्ञा नहीं दे सकते। यदि विद्यार्थी से कोई अनुचित कार्य हो जाय तो उसे उचित है कि शिक्षक के सामने स्वीकार कर ले। उनके दण्ड से डर कर 'नहीं' कहना अपने में बुरे गुणों का भरना है। खूब समझ रक्खो, शिक्षक तुम्हारे शत्रु नहीं, वह तुम्हारी मङ्गलकामना ही से तुम्हें दण्ड देंगे।

जो शिष्ट विद्यार्थी है वह सर्वदा शिक्षक का प्रीतिभाजन बना रहता है। जब वह शिक्षा प्राप्त कर कार्यक्षेत्र में पैर रखता है तब भी अपने शिक्षक की खोजखबर लिया करता है। शिक्षक के अभाव या विपत्ति को देख कर अपनी शक्ति-भर उनका उपकार करता है। सच्चा विद्यार्थी धन और नाम

प्राप्त करने पर भी शिक्षक के प्रति सम्मानप्रदर्शन करने में कभी भी नहीं चुकता। पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने इस बात को सच्चा करके दिखा दिया है। आपने विद्या, यश और धन प्राप्त करके देश के अगुए का स्थान पाया, परन्तु जब वे कलकत्ते से घर जाते थे, अपने प्रथम शिक्षक (पाठशाला के गुरु) की सेवा में अवश्य उपस्थित होते थे और उनके अभाव को सदा दूर किया करते थे।

३. गुण के अनुसार सभी वस्तुओं का मोल ठीक कर सकते हैं, परन्तु ज्ञान अमूल्य वस्तु है। नाना प्रकार के कष्ट सह कर जिन शिक्षक ने शिक्षा और उपदेश द्वारा हमें ज्ञानरत्न दिया है उनके हम कैसे ऋणी हैं, इसका वर्णन नहीं हो सकता। इस ऋण से मुक्त होने के लिये हमारे पास कोई भी सम्पत्ति नहीं है। अतः, यह उचित है कि हम सदा उनके कृतज्ञ बने रहें तथा मन क्रम वचन से उनकी भक्ति किया करें। यदि हम ऐसा करेंगे तो सम्भव है कि उक्त ऋण का आंशिक परिशोध हो जाय। आरुणि की गुरुभक्ति और एकलव्य की गुरुदक्षिणा इसके सच्चे उदाहरण हैं।

एकहि अक्षर शिष्य के, जो गुरु देत बताय।
धरती पर सो द्रव्य नहिं, देकर ऋण उतराय॥

मातापिता के प्रति कर्तव्य।

(Duty towards Parents.)

१. परिचय। २. सन्तान के लिये मातापिता क्या करते हैं और सन्तान को क्या करना चाहिये? ३. उदाहरण। ४. आधुनिक धारणा। ५ उपसंहार।

१. हम संसार में जिन पूज्य मातापिता से उत्पन्न हुए हैं—देह का प्रत्येक अंश, मन की प्रत्येक प्रवृत्ति, मस्तिष्क की

प्रत्येक शक्ति पाकर हम जिनकी दूसरी मूर्ति हैं—जिनके कठिन यत्न, अमानुषिक परिश्रम और अटल सहिष्णुता से हमजन्म-काल से युवावस्था तक नाना प्रकार की विपत्तियों से बचे हैं, पले हैं और बढ़े हैं—जिनके निःस्वार्थ प्रेम को देख कर मनुष्य-गण उन्हें प्रत्यक्ष देवता समझते हैं—उनके प्रति हम पुत्रपुत्रियों का क्या कर्तव्य है, इसका वर्णन हमसे नहीं हो सकता !

२. मातापिता वास्तव में साक्षात् देवता हैं। देवता की दया, दान, आशीर्वाद जीवमात्र के लिये सापेक्ष तो हुई है, परन्तु मातापिता की सन्तान के लिये मङ्गलमयी कार्यावली क्षण क्षण प्रेम टपकाती है। उनकी क्षणमात्र की असावधानता और उपेक्षा से बच्चा नाना प्रकार की विपत्तियों में फँस जा सकता है और अन्त में अपने प्राणों से भी हाथ धो सकता है। सन्तान की सुखस्वच्छन्दता के लिये वे प्राणपण से कैसी चेष्टा करते हैं, इसका अनुभव अज्ञान और उन्मत्त को भी होता है। आवश्यकता पड़ने पर मातापिता अपनी सन्तान की सुखशान्ति और शिक्षा के लिये द्वार द्वार पर भीख माँगते हैं और स्वयं भूखे रह कर सन्तान को भोजन कराते हैं। यदि सन्तान कभी बीमार पड़ती है तो उनकी चिन्ता की सीमा नहीं रहती। स्वयं रोगी के समान बिना भोजन और बिना नींद के उसकी मङ्गलकामना के लिये व्याकुल हो जाते हैं और अपने प्राण तक दे देने के लिये उद्यत रहते हैं।

जब दुधमुहाँ बच्चा अस्वस्थ हो जाता है तब उसकी माता स्वयं उपवास करती और औषधि खाती है, यह सभी जानते हैं। अपने बच्चों को विद्वान्, धार्मिक और यशस्वी देख माता-पिता को जो आनन्द होता है वह कदाचित् ही और किसी-को होता होगा। सन्तान जब परदेश में रहती है तब माता-

पिता के प्राण भी वहीं रहते हैं, इसमें कुछ भी अत्युक्ति नहीं है। अतः यह बात भलीभाँति सिद्ध है कि मातापिता के समान हितैषी इस संसार में हमारा कोई भी नहीं। अब सोचना चाहिये कि इन उपकारों का बदला चुकाने के लिये हम योग्य हैं? कदापि नहीं। अतएव यह उचित है कि मन, वचन और कर्म से आज्ञानुवर्ती रह कर उनकी सेवाशुश्रूषा में सदा लगे रहें, देवता समझ उनकी भक्ति करें और जब वे वृद्ध हो जायँ तब उनकी सारी असुविधाओं को दूर कर तथा अपने को उनके बुढ़ापे की छड़ी बना दें।

३. पुराणादि ग्रन्थों के देखने से जान पड़ता है कि भारत-वासी पुराकाल ही से अपने मातापिता को देवता समझ कर उन्हें पूजते चले आ रहे हैं, यहाँ तक कि बहुत से महापुरुषों ने अपने मातापिता की आज्ञा को मान असाध्य को भी साध लिया है। अयोध्यापति महाराज दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र राम-चन्द्रजी ने अपने पिता के वचन को सत्य करने के लिये राज पाट छोड़ बनगमन करके पितृभक्ति की पराकाष्ठा दिखा दी। महात्मा भीम माता की आज्ञा पाकर राक्षस के मुख में जाने से भी विचलित न हुए। शान्तनुतनय देवव्रत ने पिता की तृप्ति के लिये पैतृक साम्राज्य को त्याग दिया और जीवन भर अविवाहित रह कर कठोर ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया, जिससे वे अभी तक भीष्मपितामह के नाम प्रातःस्मरणीय हो रहे हैं। ऐसे ऐसे सैकड़ों उदाहरण मातृभक्ति और पितृभक्ति के हमारे यहाँ मिलते हैं और आगे भी मिलेंगे।

४. पहले मातापिता की आज्ञा पालने में पापपुण्य का विचार नहीं था। उनकी आज्ञा का प्रतिपालन ही महाधर्म समझा जाता था, किन्तु आजकल, शोक है कि यह धारणा ही

बदल गई है। अनेक आधुनिक शिक्षित जेंटिलमैनों की तनिक भी श्रद्धा मातापिता के प्रति नहीं देखी जाती। वे उन बूढ़े मातापिता को पालन करना व्यर्थ भार समझते हैं। कितने इन्हें असभ्य, अशिक्षित और भोंदू समझते हैं और सभ्य समाज में उन्हें अपने 'मातापिता' बताना लज्जा की बात समझते हैं। धिक! हमारी शिक्षा और हमारी सभ्यता! कृतज्ञता लेशमात्र भी नहीं! क्या हममें अब मनुष्यत्व नहीं है! क्या हम सचमुच पशु हैं?

५. पशुपक्षी में भी मातापिता के प्रति श्रद्धा देखी जाती है। हम तो सृष्टि में प्रधान जीव हैं और हमींमें उनके प्रति श्रद्धा न हो—यह दुर्भाग्यता की बात है! प्यारे पाठको! सचेत हो जाओ और प्राणपण से उनकी आज्ञा पालो और भक्ति में लगे रहो। उनके अभावों और असुविधाओं को दूर करो। यदि तुमसे उनकी आत्मा को सन्तोष मिला तो समझो कि तुम्हारा जीवन सार्थक हुआ। खूब समझ रक्खो कि उनके आशीर्वाद और शाप ही में तुम्हारा उदय और प्रलय है।

स्मृतिशक्ति (The Power of Memory.)

हम देखते हैं कि पाठशालाओं में बहुत से विद्यार्थी साथ ही पढ़ते हैं। गुरुजी बराबर सभीको समान शिक्षा देते हैं, परन्तु फल में बहुत भेद देख पड़ता है। एक विद्यार्थी जी तोड़ कर परिश्रम करता है और एक सामान्य परिश्रम करता है, परन्तु अधिक परिश्रम करने वाला विद्यार्थी उस सामान्य परिश्रम करने वाले विद्यार्थी की बराबरी नहीं कर सकता है। इसका क्या कारण है? बहुत से लोग इस भेद को देख कर कहते हैं कि पूर्व जन्मों के कर्मों से विद्या प्राप्त होती है।

निस्सन्देह सन्तोष करने के लिये यह बात उपयुक्त हो सकती है, परन्तु असली बात यह नहीं है।

अध्ययन का फलाफल विशेष कर मन और मस्तिष्क की शक्तियों पर अवलम्बित है। उनमें प्रत्युत्पन्नमतित्व, प्रज्ञा, स्मृतिशक्ति आदि प्रधान हैं। इन्हीं शक्तियों के न्यूनाधिक होने के कारण फल में भी भेद होता है। इस समय लोगों की यह धारणा, कि पूर्वजन्म के उत्तम कर्मों के फल से विद्या आती है—बड़ा अनर्थ कर रही है, क्योंकि यह सिद्धान्त लोगों को उपाय करने से रोकता है। पूर्वजन्म के कर्मों को उत्तम बनाना तो हमारी शक्ति के बाहर की बात है। अतएव विद्यार्थी, जिनमें प्रज्ञा या स्मृतिशक्ति कम है, निराश होकर बैठ जाते हैं और सदा के लिये पढ़ना छोड़ बैठते हैं तथा पूर्वजन्म के कर्मों के लिये झीखते हैं।

भारतीय बच्चों का यह विश्वास है कि स्मृतिशक्ति परमात्मा की देन है, मैं बड़ा अभागी हूँ कि मुझमें वह शक्ति नहीं है—इस प्रकार उनका दुःख करना बड़े दुःख की बात है। जिस प्रकार शरीर की अन्य शक्तियाँ बढ़ाई जाती हैं, जिस प्रकार निर्बल मनुष्य दवा खाकर बलवान् हो जाता है, उसी प्रकार स्मृतिशक्ति भी बढ़ाई जा सकती है। स्मृतिशक्ति भी शरीर सम्बन्धी एक गुण है। जिस प्रकार कोई दुर्बल मनुष्य दवा खाता है जिससे उसका दुर्बल शरीर मोटा हो जाता है और साथ ही साथ वह मनुष्य बलवान् भी हो जाता है, उसी प्रकार औषधप्रयोग के द्वारा मस्तिष्क के आकार में भी परिवर्तन किया जा सकता है, जिससे स्मृतिशक्ति बढ़ सकती है। जिस प्रकार मातापिता की दुर्बलता और सबलता का प्रभाव बालकों पर पड़ता है उसी प्रकार उनकी स्मृतिशक्ति

का भी। इसी कारण किसी लड़के की स्मृतिशक्ति अच्छी और किसीकी अच्छी नहीं होती, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि जिसकी स्मरणशक्ति अच्छी नहीं है उसकी स्मरण-शक्ति अच्छी हो ही नही सकती। यह ठीक है कि स्मृतिशक्ति के बढ़ाने के लिये बाल्यावस्था से ही प्रयत्न करना चाहिये, और जो लोग बाल्यावस्था में इस शक्ति को उपेक्षा करते हैं, उनकी स्मृतिशक्ति धीरे धीरे घट जाती है।

शरीर के स्नायुओं में यथावत् संचालन होते रहने से उनकी शक्ति बढ़ जाती है। यही आधुनिक शरीरशास्त्रवेत्ताओं का कहना है। स्नायुओं का ठीक ठीक परिचालन न होने से मस्तिष्क का कितना ही भाग निर्बल अतएव अकर्मण्य हो जाता है। वह निर्बल भाग किसी भी काम के लिये उपयुक्त नहीं हो सकता। इसका परिणाम बड़ा बुरा होता है। वे स्नायु भी धीरे धीरे निर्बल होकर नष्ट हो जाते हैं, मानसिक दुर्बलता आ जाती है, शरीर अवसन्न हो जाता है, अकाल ही में भयंकर बुढ़ापे का दर्शन हो जाता है। इसलिये यह बहुत आवश्यक है कि शरीर के स्नायु यथावत् परिचालित होते रहें। उनके परिचालित होने ही से शारीरिक स्वस्थता बनी रह सकती है तथा वह सबल और सवेग मन सभी कामों को ठीक ठीक कर सकता है।

सर डबल्यु० एच० बेली एक बड़े भारी पण्डित हैं। उन्होंने स्मृतिशक्ति के बढ़ाने के उपाय बताये हैं जो नीचे लिखे जाते हैं। आशा है, विद्यार्थी अवश्य ही इससे लाभ उठावेंगे।

मान लो कि तुमको एक श्लोक याद करना है। तुम उस श्लोक को बार बार कहते जाओ, जब तक वह याद न हो जाय तब तक कहते जाओ। देखोगे कि वह श्लोक थोड़ी देर

में याद हो जायगा। इसके बाद जब तुमको और श्लोक याद करने की आवश्यकता होगी उस समय पहले श्लोक के याद करने में जितनी कठिनता हुई होगी, उससे कम कठिनता इस बार होगी। इसी प्रकार स्मरणशक्ति बढ़ कर काम करने के उपयुक्त हो जायगी। पहले याद की हुई बात को जब तुम याद करना चाहो, उस समय और कोई नई बात याद करो, उसीके साथ तुम्हें पुरानी बात भी याद हो जायगी। इसी प्रकार अपनी स्मरणशक्ति बढ़ाई जा सकती है। धीरे धीरे इसको काम में लाने से यह थोड़े ही दिनों के बाद खूब काम करने लायक हो जायगी। उस समय मालूम पड़ेगा कि मानसिक वृत्तियों के परिचालन करने से कितने लाभ होते हैं और कितना आनन्द आता है। बेली साहब का यह उपदेश अमूल्य है। संक्षेप में उन्होंने वैज्ञानिक सिद्धान्त कह डाला है।

स्मृतिशक्ति के बढ़ाने के लिये गद्य की अपेक्षा पद्य अधिक उपयोगी है। वे पद्य ऐसे होने चाहियें जो सादे हों, कहने में सरल हों, उनके शब्द कठिन न हों। भाव सरल हो, परन्तु मनोहर हो, जिसको बालक आवृत्ति करते जायँ और समझते जायँ। इस प्रकार भावों को समझने से उनके हृदय में एक प्रकार का आनन्द उत्पन्न होगा; बिना किसीके बतलाये नई बात स्वयं जान लेने से उनका उत्साह बढ़ेगा और वे बड़ी उमंग के साथ आगे बढ़ेंगे और श्लोकों—पद्यों को याद करने के लिये प्रयत्न करेंगे। (विद्यार्थी से उद्धृत)

शारदा सम्पादक, पण्डित चन्द्रशेखर ओझा।

क्षमा (Forgiveness.)

एक गुण—क्षमारहित पुरुष—क्षमाशील पुरुष—गाली देना—वशिष्ठ और विश्वामित्र—उपसंहार।

क्षमा कुछ साधारण गुण नहीं है। जिस पुरुष में क्षमा नहीं वह अति क्षुद्र समझा जाता है। जो ऐसे होते हैं कि किसीसे कुछ अपकार की शङ्का हुई कि उसका अपकार करने को तैयार, किसीके मुँह से भ्रम से भी कुछ करा शब्द निकला कि आप गालियों की वर्षा करने लगे, किसीने अल्प अपराध भी किया तो उस पर झट टूट पड़े, वे अति तुच्छ समझे जाते हैं। जिनको क्षमा नहीं, उनके लड़के बाले बड़े दुर्बल होते हैं, क्योंकि वे बात बात में घूसे और घुरके जाते हैं और बात बात में मार खाते हैं। उनसे जी खोलकर कोई बात नहीं करता, क्योंकि यह आशङ्का सब को रहती है कि बातों में कोई अनुचित न हो जाय। जिसको क्षमा नहीं है उससे कितने ही काम चटपट में ऐसे अनुचित बन जाते हैं कि पीछे जन्म भर पछतावा रह जाता है। क्षमा रहित पुरुष राजसभाओं में तो कभी टिक ही नहीं सकते। जैसे, किसी कटोरे में जल हो तो उसमें जहाँ कुछ और पदार्थ डाला कि जल उबला—यह स्वभाव अक्षम पुरुषों का है। समुद्र में पहाड़ आ पड़े तो भी उसका बढ़ना घटना फैलना कुछ नहीं विदित होता—यह स्वभाव क्षमावान् पुरुषों का है। जैसे, गजराज के पीछे कुत्ता भूकता हुआ चले और गजराज उस पर ध्यान न दे तो उसका कुछ नहीं बिगड़ता, वैसे ही क्षमाशील पुरुष यदि तुच्छों की बकबक पर ध्यान न दें तो उनकी क्या हानि है। यदि कोई गाली दे तो भी यों समझ लेना कि—

> "जाके ढिग बहु गारी ह्वैहै सोई गारी दैहै।
> गारीवारो आप कहैहै हमरो का घटि जैहै।"

कोई समझते हैं कि जो हमको गाली दे उसे यदि हम गाली न दें तो हमारी बड़ी अप्रतिष्ठा होगी, पर यह उलटी ही

बात है। तुच्छों की गाली पर गाली ही देने से टंटा बढ़ता है और चुप रहने से कोई जानता भी नहीं कि किसको किसने गाली दी।

एक समय वशिष्ठ और विश्वामित्र में बड़ा झगड़ा चला। झगड़ा तो इस बात का था कि विश्वामित्र क्षत्रिय थे, पर बहुत तप करने के कारण कहते थे कि हमें सब कोई ब्राह्मण कहा करें। यह बात उस समय के ब्राह्मणों को अच्छी नहीं लगी। वशिष्ठ जी ने कहा कि आप क्षत्रिय हैं, पर तपस्वी हैं, इसलिये राजर्षि कहला सकते हैं, परन्तु ब्रह्मर्षि नही। इस बात पर विश्वामित्र ने वशिष्ठ जी से शत्रुता बाँधी। विश्वामित्र बार बार अधिक तप करके आते और वशिष्ठ जी से झगड़ा करते, पर वशिष्ठ जी उन पर क्षमा ही रखते थे। पुराणों में ऐसा लिखा है कि एक बार विश्वामित्र बहुत तप करके आये और वशिष्ठ जी को ललकार कर बोले कि हमें ब्राह्मण कहो, नहीं तो युद्ध करो। वशिष्ठ जी एक दण्ड लेकर कुटी के बाहर खड़े हो गये। विश्वामित्र उन पर बहुत अस्त्र शस्त्र चलाने लगे, परन्तु वशिष्ठ जी ने अपने तपोबल से सब को उसी दण्ड पर रोका। जब विश्वामित्र कोटि कला कर हारे तब वशिष्ठ जी ने कहा कि भाई और कोई अस्त्र-शस्त्र बाकी हो तो चला लो, फिर हम भी आरम्भ करेंगे। तब विश्वामित्र ने हाथ जोड़े और वशिष्ठ जी ने क्षमा की। कालान्तर में वशिष्ठ जी अपनी कुटी में बैठे आँख बन्द किये ध्यान कर रहे थे और अँधेरी रात थी। उस समय विश्वामित्र के चित्त में यह बात आई कि जितने ब्राह्मण हैं वे वशिष्ठ ही पर ढलते हैं और कहते हैं कि वशिष्ठ यदि ब्राह्मण कहें तो हम लोग भी ब्राह्मण कहें और वशिष्ठ ऐसा दुष्ट है कि चाहे कुछ

हो वह हमें ब्राह्मण न कहेगा। तो इस अँधेरे में वशिष्ठ का सिर काट डालना चाहिये। यह विचार कर चोर की भाँति वे तलवार ले वशिष्ठ की कुटी में घुसे। दैवात् वशिष्ठ की समाधि खुली। वशिष्ठ ने पूँछा कौन है? तब विश्वामित्र ने कहा तुम मुझे ब्राह्मण नही कहते, इसलिये मैं तुम्हारा सिर काटने आया हूँ। वशिष्ठ ने कहा कि आप ही सोच लीजिये। क्या, जो पाप करने आप आये हैं—ऐसे ही ब्राह्मणों के कर्म होते हैं? क्या ऐसे ही स्वभाव के भरोसे आप ब्राह्मण बनना चाहते हैं? यह सुनते ही विश्वामित्र लज्जित हो गये और तलवार दूर फेंक प्रणाम कर बैठ गये और अपराध क्षमा कराने लगे। वशिष्ठ जी ने कहा—हमें कुछ बदला नहीं लेना है कि आप क्षमा माँगें, पर देखिये कि जिस समय आप अहंकार से ऊँचे बनने का डंका दे युद्ध का डौल बाँधते थे, उस समय सब की दृष्टि में आप छोटे जँचते थे और अब आप हाथ जोड़े अपने को तुच्छ समझे बैठे हैं तो हमारी दृष्टि में आप ऊँचे जान पड़ते हैं। इस समय आपके हृदय में अहंकार नहीं, छल नहीं, ईर्ष्या नहीं, मद नहीं, मत्सर नहीं। बस, ऐसा हृदय रखिये तो आप सब से बड़े हैं।" विश्वामित्र जी को यह सुन बहुत बोध हुआ और वशिष्ठ जी का इतना भारी क्षमा गुण देख सब को आश्चर्य हुआ।

इसलिये यही चित्त में स्थिर करके रखना चाहिये कि—

"छमा सकल गुन सों बड़ो, छमा पुन्य को मूल।
छमा जासु हिरदै रहै, तासु दैव अनुकूल॥
अपराधी निज दोष तें, दुख पावत बसु जाम।
छमासील निज गुनन तें, सुखी रहत सब ठाम॥"

पं० अम्बिकादत्त व्यास।

अमिताचार (Intemperance.)

१ परिचय २. परिणाम। ३. मान मर्यादा, सम्पत्ति और स्वास्थ्य की हानि। ४ अमिताचारी की शोचनीय अवस्था। ५. उपसंहार।

१. मनुष्य क्षणिक सुख के लिये ऐसा लालायित रहता है कि वह जिस कार्य में सुख का कुछ भी आभास पाता है, भावी परिणाम को बिना बिचारे उसकी ओर दौड़ पड़ता है। संसार में एसे अनेक कार्य हैं जिनके आरम्भ में बड़ा आनन्द मिलता है, परन्तु उनका परिणाम बड़ा ही भयंकर है। उन कार्यों में अमिताचार प्रधान है। अमिताचार के बन्धन में पड़ कर मनुष्य नाना प्रकार की व्याधियों को सहता है और अकाल ही में काल की चक्की में पिस जाता है।

२. मनुष्य को सब प्रकार से हानि पहुँचाने वाले दोष-समूहों का राजा अमिताचार ही है। यह ऊपर से ऐसा आनन्ददायक जान पड़ता है कि मनुष्य को भावी हानि लाभ का कुछ भी विचार नहीं रहता। वह शास्त्र की आज्ञा को नहीं मानता, इसे तो वह सुख और विलास का प्रतिबन्धक समझ तुच्छ दृष्टि से देखता है। वह व्यग्रता के साथ कुकार्यों के पीछे लग पड़ता है और जब शीघ्र ही उनके कुफल पा जाता है तब पश्चात्ताप करता हुआ शास्त्र की उपयोगिता समझने लगता है परन्तु इस पछताने ही से क्या उसका शेष जीवन भार हो जाता है। अतः, हमें उचित है कि मिताचारी बनें, मन को रोकें और अमिताचार से सदैव सतर्क रहें।

३. अमिताचारी मनुष्य आदरमान, बलपौरुष और धन-सम्पत्ति सभी से हाथ धो बैठता है। उसकी संसार में निन्दा फैल जाती है, जब समाज में बोलने बैठने योग्य नहीं रहता है,

सब कोई उसे देख कर घृणा करते हैं और वह किसीके विश्वास योग्य पात्र भी नहीं रह जाता। जिस अमिताचार के पीछे लट्टू हो निखट्टू की नाईं यत्रतत्र दौड़ने लगता है, वही उसको दुर्गति भोगा कर अंत में कौड़ी के तीन बना देता है। बपौती या अपना कमाया धन उड़ा देने पर उसे एक टुकड़ी रोटी के लिये द्वार द्वार हाथ पसारना पड़ता है। यदि भिक्षा मिल गई तो ठीक और यदि गाली सुननी पड़ी तो उसी ग्लानि में प्राण त्यागने की इच्छा हो जाती है।

मनुष्य को स्वास्थ्यरक्षा के निमित्त शरीर सम्बन्धी कितने नियमों का पालन करना पड़ता है, परन्तु स्वेच्छाचारी से यह एकदम असम्भव है। वह भक्ष्याभक्ष्य, पानापान इत्यादि का विचार न करके इच्छानुसार आहार विहार करता है जिससे वह रोगी हो अकाल ही में इस संसार से चल बसत्

४. अमिताचारी की दशा अत्यन्त ही शोचनीय रहती है। वह सदा इन्द्रियों को सुख पहुँचाने की मृगतृष्णा में पड़ा रहता है, परन्तु उसकी इन्द्रियाँ कभी तृप्त नहीं होतीं। लालसा सदा बढ़ती ही जाती है और जब पूर्ण नहीं होती तब उसे कठिन अशान्ति का सामना करना पड़ता है। बस, इसी प्रकार भँवरजाल में पड़ा रह कर वह मनुष्यत्व को छोड़ देता है और चिन्तासागर में ऊबडूब करता रहता है।

[illegible]अमिताचारी मनुष्य के कुकार्यों से केवल उसीको नहीं—वरन् समस्त देश को कष्ट उठाना पड़ता है। वह अभागा, वंश और समाज को संकट में डाल देता है, सबके मस्तक को झुका देता है और विपत्तिसागर में देश को बहाकर उसे परावलम्बन की बेड़ी पहना देता है। अतः हम लोगों को

उचित है इस दुर्गुण से सदा बचे रहें और निर्मल हृदय से कार्यक्षेत्र में प्रवेश करें।

बा० भूषणसिंह।

आत्मगौरव (Self-respect.)

१. परिचय। २ इसके लिये क्या करना चाहिये? ३. लाभ। ४. आदर्श—उदाहरण। ५ उपसहार।

१. आत्मगौरव का होना मनुष्य के लिये बहुत ही आवश्यक है। हम लोग अपने मान, अपनी प्रतिष्ठा के लिये गला फाड़ फाड़ कर चिल्लाया करते हैं, परन्तु यह गौरव कुछ चिल्लाने और भटकने से नहीं मिलेगा। जब तक हम स्वयम् यत्नवान न होंगे, हमें प्रतिष्ठा मिलही नहीं सकती और न हम गौरवान्वित हो सकते हैं।

२. जो अपनी सहायता आप करते हैं उन्हें ईश्वर भी सहायता करते हैं। बस, हम अपनी प्रतिष्ठा, अपना गौरव आप करेंगे तब अवश्य ही ईश्वर हमारी सहायता करेंगे और संसार हमारी प्रतिष्ठा करने लगेगा।

आत्मगौरव के लिये हमें अपने कई सुखों को निछावर कर देना पड़ेगा। हमें ठकुरसुहाती नहीं कहनी होगी। हम लोग व्यर्थ बात की बात में दूसरों के सामने गिड़गिड़ाते हैं, अपनी वंशमर्य्यादा छोड़ते हैं और लल्लोपत्तो की बातें सुनाया करते हैं—इससे हमारी प्रतिष्ठा नहीं बढ़ती, इससे तो हम और हीन और अप्रतिष्ठित समझे जाते हैं। हमें इस खुशामद की बदौलत भले ही कोई पदवी मिल जाय, परन्तु समाज में हम कभी भी बड़े नहीं समझे जा सकते और यह उचित है भी। भला, आत्मगौरव छोड़कर हमने जिस समाज या देश

को कलंक लगाया और खुशामदी टट्टू बने उसकी दृष्टि में हम कैसे बड़े हो सकते हैं? हमारे इस कथन का यह अभिप्राय नहीं कि हम शिष्टाचार को तिलांजलि दे दें और दूसरों के सिर पर चढ़ जायँ। हम यह कहते हैं कि आत्मगौरव के साथ सबों से नम्रता का व्यवहार करें। हाँ, यदि कोई हमें अवज्ञा की दृष्टि से देखे तो गौरवरक्षा के लिये कायरता दिखलाना उचित नहीं। हमें तो वहाँ प्राणों पर खेलना चाहिये। यही आत्मगौरव था जिसने हिन्दूधर्मरक्षक महाराणा प्रताप का मान मुग़ल बादशाह अकबर से कराया। ठीक है, वीर ही वीर की प्रतिष्ठा करता है और जो रण से भागता है वह सबों की दृष्टि में पतित हो जाता है।

३. जिसको आत्मगौरव का ज्ञान है, वह कभी कोई ऐसा कार्य नहीं कर सकता जिससे वंश, समाज और देश का अपमान हो। उसमें आत्मबल रहता है, जिसके सहारे वह सदा फूला फला रहता है। जिस समाज में आत्मगौरव नही उसकी उन्नति नही हो सकती, जिस जाति ने आत्मगौरव त्याग दिया है वह मरी जाति है और जिस देश ने अपनी प्रतिष्ठा छोड़ दी है उसकी सुख सम्पति बिदा हो गई। इस समय हमारे भारत की गति इसी ओर होना चाहती है। भाइयो, चेतो, अपने आत्मगौरव को संभालो, नहीं तो पीछे सिवाय पछताने के और कुछ हाथ नहीं आवेगा।

४. आत्मगौरव, आत्मोत्सर्ग और आत्मसाहाय्य के लिये गौण उदाहरण तो छोड़ दीजिये। हमें अपने शासनकर्त्ता अँगरेजों ही से ये गुण सीखने चाहिये। बचपन ही से अँगरेजों में आत्मप्रतिष्ठा और जातीय मानमर्य्यादा का प्रवेश हो जाता

है और वे अपने देश की उन्नति के लिये तन मन और बचन से कटिबद्ध रहते हैं। एक बार फ्रांस की राजधानी पेरिस के एक स्कूल में खेल हो रहा था। एक लकड़ी के फाँदने का खेल था। २० फरासीसी और एक अँगरेज़ विद्यार्थी इस खेल में लगे थे। पहले एकाएकी बीसो फरासीसी बालक उसे फाँद गये। शिक्षकों ने अँगरेज विद्यार्थी को रुग्ण देख कर फाँदने से मना किया, परन्तु उसने एक नहीं मानी और यह उत्तर दिया कि जब सब फाँदते हैं तब मैं क्यों रुकूँ? वह १० वर्ष का बालक रोगी होकर भी आत्मगौरव के जोश में चटपट फाँद तो गया, परन्तु कुछ ही देर में उसके प्राण निकल गये। मरते समय वह खुश था और यह कहता हुआ मरा—"कोई ऐसा न समझे कि अँगरेज फरासिसियों की भाँति नही कूद सकता है!

रामजी ने जटायू से स्वर्गगमन के समय कहा था—

"सीताहरण तात जनि, कहहु पिता सन जाइ।
जो मैं राम तो कुल सहित, कहहि दशानन आइ॥"

सोचो इसमें आत्मगौरव का कैसा भाव है!

५. कितने लोग आत्मगौरव और अभिमान को एक ही वस्तु समझते हैं, परन्तु यह उनकी भूल है। गुणों के कारण घमण्ड करना अभिमान है, परन्तु आत्मगौरव घमण्ड नहीं। वह तो आत्मा की पवित्र प्रतिष्ठा है, उसका आदरमान है, ज्ञान का सार है, जीवन का तत्व है, विद्या का फल है और मनुष्य का मनुष्यत्व है। हम लोगों को उचित है कि अभिमान से बचें, परन्तु आत्मगौरव को हाथ से न जाने दें।

चरित्रपालन।

१. संज्ञा—आवश्यकता। २ चरित्ररक्षा क्या है? ३. दुश्चरित्र मनुष्य की गति—चरित्रपालन के मुख्य अंग। ४. धनी कौन है?—चरित्रवान् की प्रतिष्ठा। ५ चरित्र और शील। ६. चरित्रपालन का समाज पर असर। ७. उपसंहार।

१. चरित्र में कहीं पर किसी तरह का दाग न लगने पावे इस बात की चौकसी का नाम चरित्रपालन है। हमारे लिये चरित्रपालन की आवश्यकता इसलिये मालूम होती है कि चरित्र को यदि हम सुधारने की फिकिर न रक्खें तो उसे बिगड़ते देर नहीं लगती। उर्वरा धरती में लम्बी लम्बी घास और कटीले पेड़ आपसे आप उग आते हैं, परन्तु अन्न आदि के उपकारी पौधे बड़े यत्न और परिश्रम के उपरान्त उगते हैं। सच तो यों है कि त्रिगुणात्मक प्रकृति ने चरित्र में विकार पैदा कर देनेवाले इतने प्रकार के प्रलोभन संसार में उपजा दिये हैं, जिनसे आकर्षित हो मनुष्य बात की बात में ऐसा बिगड़ जा सकता है कि फिर यावज्जीवन किसी काम का नहीं रहता। महल के बनाने में कितना यत्न और परिश्रम करना पड़ता है, पर जब वह बन कर तैयार हो जाता है तब उसे ढहाते देर नहीं लगती।

२. चरित्ररक्षा एक प्रकार की सन्दली जमीन है जिस पर यशःसौरभ इत्र के समान बनाये जा सकते हैं अर्थात् जैसा गन्धी सन्दल का पुट दे हर किस का इत्र उससे तैयार करता है वैसा ही चरित्र जब आदमी का शुद्ध है तब वह हर तरह की योग्यता प्राप्त कर सकता है। शुद्ध चरित्र वाला मनुष्य सब जगह प्रतिष्ठा पाता है और वह जिस काम में सन्नद्ध होता है उसीमें पूर्ण योग्यता को पहुँच हर तरह पर सरसब्ज होता है।

३. जैसे मैला कपड़ा पहिना हुआ मनुष्य जहाँ चाहता है वहाँ बैठ जाता है, कपड़ों में दाग लग जाने का खयाल उस आदमी को बिलकुल नहीं रहता, उसी तरह चलित वृत्त अर्थात् जिसके चालचलन में दाग लग गया है वह फिर बाकी अपने और चरित्रों को भी नहीं बचा सकता, वरन् वह नित्य बिगड़ता जाता है। मन, जिह्वा और हाथ का निग्रह चरित्र-पालन के मुख्य अंग हैं। जिन्होंने मन को कुपथ पर जाने से रोका है, जीभ को दूसरे की चुगली चबाई से या गाली देने से रोका है और हाथ को दूसरे की वस्तु चुराने से या बेई-मानी से ले लेने में रोक रक्खा है वही चरित्र पालन में उदाहरण दूसरों के लिये ही हो सकता है। ऐसा मनुष्य कसौटी में कसे जाने पर खरे से खरा निकलेगा।

४. कुलीन समझदार साक्षर के लिये चरित्र में दाग लगना ऐसी कर्री बात है कि उसे अपना जीवन भी बोझ मालूम होने लगता है। जैसे किसी कवि ने कहा है कि "विन्ध्य पहाड़ के बन में भूखा प्यासा हो मर जाना अच्छा, तिनकों से ढके सर्पों से भरे हुए कूएँ में गिर कर प्राण दे देना श्रेष्ठ, पानी के भँवर में डूब जर बिला जाना उत्तम है, पर शिष्ट पढ़े लिखे मनुष्य का चरित्र से च्युत हो जाना अच्छा नहीं।" रुपया पैसा हाथ का मैल है आता जाता रहता है, किन्तु बिगड़ी बात फिर नहीं बनती, इसीलिये धन का दरिद्र दरिद्र नहीं कहा ज़ा सकता यदि वह सुचरित्र में आढ्य हो तो। जिनकी आँख का पानी ढरक गया है उनके लिये चरित्रपालन कोई बड़ी बात नही है और न इसकी कुछ कदर उन्हें है, किन्तु जो चरित्र को सबसे बड़ा धन माने हुए हैं वे अत्यन्त संयम के साथ बड़ी सावधानी से संसार में निबहते हैं। यावत् धर्म,

कर्म और परमार्थ साधन सबका निचोड़ वे इसीको मानते हैं। ऐसे लोग जनसमाज में बहुत कम पाये जाते हैं। हजारों में कही एक ऐसे होते हैं और ऐसे ही लोग समाज के अगुआ, राह दिखानेवाले आचार्य, गुरु, रसूल या पैगम्बर हुए हैं और आप्त तथा शिष्ट माने गये हैं। उनके एक एक शब्द जो मुख से निकलते हैं तथा उनका उठना बैठना, चलना फिरना अलग अलग चरित्रपालन में उदाहरण होता है। जो प्रतिष्ठा बड़े से बड़े राजाधिराज सम्राट् बादशाह शाहनशाह को दुर्लभ है वह चरित्रपालन को सुलभ है और यह प्रतिष्ठा चरित्रपालन वाले को सहज ही मिल गई हो सो नहीं, वरन् सच कहिये तो यह असिधाराव्रत है, संसार के अनेक सुखों को लात मार बड़े बड़े क्लेश उठाने के उपरान्त मनुष्य इसमें पक्का हो सकता है।

५. चरित्र से बहुत मिलती हुई बात शील है। शील का चरित्र ही में अन्तर्भाव हो सकता है। चरित्रपालन में चतुर शीलसंरक्षण में भी प्रवीण हो सकेगा, किन्तु शीलसंरक्षण में विलक्षण मनुष्य चरित्रपालन में प्रवीण नहीं हो सकता। अँगरेजी में शील के लिये "कान्डक्ट्" (Conduct) और चरित्र के लिये "क्यारेक्टर" (Character) शब्द है। आदमी बाहरी चालचलन का सुधार शील या "कान्डक्ट्" अथवा बिहेवियर कहा जायगा, किन्तु मनुष्य का आभ्यन्तर शुद्ध जब तक न होगा तब तक बाहरी सभ्यता "चरित्र" नहीं कहलावेगी।

६. श्रीरामचन्द्र, युधिष्ठिर, बुद्धदेव तथा महात्मा ईसा के चरित्रपालन का समाज पर वैसा ही असर होता है जैसा रक्तसंचालन का शरीर पर। सुस्निग्ध पुष्ट भोजन से जो रुधिर पैदा होता है वह शरीर को पुष्ट और नीरोग रखता है। वैसे ही जिस समाज में चरित्रपालन की कदर है और लोगों को

इसका खयाल है कि हमारा चरित्र दगीला न होने पावे वह समाज पुष्ट पड़ती जाती है और उत्तरोत्तर उसकी उन्नति होती जाती है। जिस समाज में चरित्रपालन पर किसीकी दृष्टि नहीं है और न किसीको "चरित्र किस तरह बनता बिगड़ता है" इसका कुछ खयाल है उस बिगड़ी समाज का भला क्या कहना! कुपथ्य भोजन से विकृत रुधिर पैदा होकर जैसे शरीर को व्याधि का आलय बना नित्य उसे क्षीण और जर्जर करता जाता है वैसे ही लोगों के कुचरित्र होने से समाज नित्य क्षीण, निःसत्व और जर्जर होती जाती है। जिस समाज में चरित्र की बहुतायत होगी वह समाज सर्वोपरि दीप्यमान होकर देश और जाति की उन्नति का द्वार होगी।

हमारी प्राचीन आर्यजाति चरित्र की खान थी, जिसके नाम से इस समय हिन्दूमात्र पृथ्वी भर में विख्यात हैं। अफ-सोस! जो कौम किसी समय दुनिये के सब लोगों के लिये चरित्रशिक्षा में नमूना थी वह आज दिन यहाँ तक गई बीती हो गई कि दूसरे से सभ्यता और चरित्रपालन की शिक्षा लेने में अपना अहोभाग्य समझती है! समय खेलाड़ी ने हमें अपना खिलौना बना कर जैसा चाहा वैसा खेल खेला, देखें आगे अब वह कौन खेल खेलता है।

पं० बालकृष्ण भट्ट।

चारुचरित्र।

१. मनुष्य के जीवन का महत्व चारुचरित्र से सम्पादित होता है। २. व्यक्तिगत चरित्र का फल समाज पर पड़ता है—चरित्रवान् समाज का अगुआ होता है। ३ चारुचरित्र का पवित्र विशाल मन्दिर सिद्धान्तो की दृढता पर खड़ा रहता है। ४. आत्मगौरव चरित्र का प्रधान अंग है—चरित्रहीन पुरुष गरीब है। ५. पवित्र चरित्र के मुख्य मुख्य अंग।

१. मनुष्य के जीवन का महत्व जैसा चारुचरित्र से सम्पा-

दित होता है वैसा धन, ऊँचा पद, ऊँचे दरजे की तालीम इत्यादि के द्वारा नहीं हो सकता। समाज में जैसा गौरव, जैसी प्रतिष्ठा वा इज्ज़त, जैसा जोर, लोगों के बीच में शुद्ध चरित्र वाले का होता है वैसा ही बड़े से बड़े धनी और ऊँचे से ऊँचे ओहदे वाले का कहाँ ? धनवान् या विद्वान् को जो प्रतिष्ठा दी जाती है या सर्वसाधारण में जो यश या नामवरी उसकी होती है उसकी स्पर्द्धा सबको होती है। कौन ऐसा होगा जो अपने वैभव, अपनी विद्या या योग्यता से औरों को अपने नीचे रखने की इच्छा न करता हो ? शान्ति का एकमात्र आधार केवल चारुचरित्र वाले में अलबत्ता यह नहीं देखा जाता। वह यह कभी नहीं चाहता कि चरित्र के पैमाने में अर्थात् चरित्र क्या है इसकी नापजोख में दूसरा हमारे आगे न बढ़ने पावे।

२. कार्य कारण का बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है। इस सूत्र के अनुसार देश या जाति का एक एक व्यक्ति सम्पूर्ण देश या जाति की सभ्यतारूप कार्य का कारण है, अर्थात् जिस देश या जाति में एक एक मनुष्य अलग अलग अपने चरित्र के सुधार में लगे रहते हैं वह समग्र देश का देश उन्नति की अन्तिम सीमा तक पहुँच सभ्यता का एक बहुत अच्छा नमूना बन जाता है। नीच से नीच कुल में पैदा हुआ हो, बहुत पढ़ा लिखा भी न हो, बड़ा सुबीते वाला भी न हो, न किसी तरह की कोई असाधारण बात उसमें हो, किन्तु चरित्र की कसौटी में यदि वह अच्छी तरह कस लिया गया है तो उस आदरणीय मनुष्य का संभ्रम और आदर समाज में कौन ऐसा कम्बख़्त होगा जो न करेगा और ईर्षावश उसके महत्व को मुक्तकण्ठ हो स्वीकार न करेगा। नीचे दरजे से ऊँचे को पहुँचने के लिये चरित्र की कसौटी से बढ़ कर और कोई दूसरा ज़रिया नहीं है।

चरित्रवान् यद्यपि धीरे धीरे बहुत देर में ऊपर को उठता है, तथापि यह निश्चित है कि वह एक न एक दिन अवश्य समाज का अगुआ मान लिया जायगा। हमारे यहाँ के गोत्रप्रवर्तक ऋषि, भिन्न भिन्न मत या सम्प्रदायों के चलाने वाले आचार्य, नबी, अम्बिया, औलिया आदि सब इसी क्रम पर आरूढ़ रह लाखों करोड़ों मनुष्यों के गुरुर्गुरु देववत् माननीय पूजनीय हुए, वरन् कितने उनमें से ईश्वर के अंश और अवतार माने गये।

३. यों तो दिनायतदारी, सत्य पर अटल विश्वास, शान्ति, कपट और कुटिलाई का अभाव आदि चरित्रपालन के अनेक अंग हैं, किन्तु बुनियाद इन सब उत्तम गुणों की, जिस पर मनुष्य में चारुचरित्र का पवित्र विशाल मन्दिर खड़ा हो सकता है, अपने सिद्धान्तों का दृढ़ और उसूलों का पक्का होना है। जो जितना ही अपने सिद्धान्तों का दृढ़ और पक्का है वह उतना ही चरित्र की पवित्रता में पकता होगा। चरित्र की सम्पत्ति के लिये सिधाई तथा चित्त का अकुटिल भाव भी एक ऐसा बड़ा स्रोत है जहाँ से विश्वास, अनुराग, दया, मृदुता और सनुहाभूति के सरस प्रवाह की अनेक धाराएँ बहती हैं। इनमें से किसी एक धारा में नियमपूर्वक स्नान करनेवाला मनुष्य भलमनसाहत, सभ्यता, आभिजात्य या कुलीनता तथा शिष्टता का नमूना बन जाता है। क्योंकि चतुराई बिना चित्त की सिधाई के, ज्ञान या विद्या बिना विवेक या अनुष्ठान के, मनुष्य में एक प्रकार की शक्ति अथवा योग्यता अवश्य है, पर यह योग्यता उसकी वैसीही है जैसी गिरह काटने वालों में जेब या गाँठ काट रुपये निकाल लेने की योग्यता या चालाकी रहती है।

४. आत्मादर भी चरित्र का प्रधान अंग है। सुचरित्र सम्पन्न नीच काम करने में सदा संकुचित रहता है। प्रतिदाब

उसे इसके लिये बड़ी चौकसी रखनी पड़ती है कि कहीं ऐसा काम न बन पड़े कि प्रतिष्ठा में हानि हो। उसका एक एक काम और एक एक शब्द सभ्य समाज में नेकचलनी के सूत्र के समान प्रमाण में लिया जाता है। जिसके लिये उसने "हाँ" कहा फिर उसी के लिये उससे 'नहीं' कहलाना मनुष्य मात्र की शक्ति के बाहर है। उत्कोच या किसी तरह का लालच दिखला कर उसके उसूल को बदलवा देना या दृढ़ सिद्धान्तों से उसे अलग करना वैसा ही है जैसा प्रकृति के नियमों का बदल देना है। यह कुछ अत्यन्त आवश्यक नहीं है कि जो बड़े धनी हैं या किसी ऊँचे ओहदे पर हैं वे ही सच्ची शिराफत या चोखी से चोखी सज्जनता अथवा नेकचलनी के सूत्र (Stand-ard) हों। अपिच गरीब तथा छोटा आदमी भी सज्जनता की कसौटी में अधिकतर चोखा और खरा निकल सकता है। किसी ने अच्छा कहा है—

अक्षीणोवित्ततः क्षीणः वृत्ततस्तु हतोहतः।

अर्थात् धन पास न होने से गरीब गरीब नहीं है वरन् जो सद्वृत्त नेकचलनी से रहित है वही गरीब है। धनी सब कुछ अपने पास रख कर भी सब भाँति हीन है, पर निर्धनी पास कुछ न रख कर भी यदि सद्वृत्त है तो सब भाँति भरा पूरा है। उसे भय और नैराश्य कहीं से नहीं है। दैववश जिसका सब कुछ नष्ट हो गया, पर धैर्य, चित्त की प्रसन्नता, आशा, धर्म पर दृढ़ता, आत्मगौरव और सत्य पर अटल विश्वास बना है उसका मानो सब बना है। कहीं पर किसी अंश में वह दरिद्र नहीं कहा जा सकता।

५. एक बुद्धिमान् ने इन बातों को पवित्र चरित्र के मुख्य मुख्य अङ्ग निश्चय किया है। लम्पटता का न होना, रुपये पैसे

के लेनदेन में सफाई, बात का धनी और अपने वादे का सच्चा होना, आश्रितों पर दया, मेहनत से न हटना, अपने निज परिश्रम और पौरुष पर भरोसा रखना, अविकत्थन अर्थात् अपने को बढ़ा के न कहना—इनमें से एक एक गुण ऐसे हैं जिन पर किताब की किताब लिखी जा सकती है। चारुचरित्र का एक संक्षिप्त विवरण हमने कह सुनाया। जिस भाग्यवान् में चरित्र के पूर्ण अङ्ग है उसका क्या कहना! वह तो मनुष्य के तन में साक्षात् देवता या जीवन्मुक्त कोई योगी है। जिन बातों से हमारे में चरित्र आता है उसकी दो एक बातें भी जिसमें हैं वह धन्य है और प्रशंसा के योग्य है। ऊँचे दरजे की शिक्षा बिना चरित्र के सर्वथा निरर्थक है। चरित्रसम्पन्न साधारण शिक्षा रख कर जितना उपकार देश या जाति का कर सकता है उतना सुशिक्षित, पर चरित्र का छूछा नहीं करेगा।

पं० बालकृष्ण भट्ट।

ब्रह्मचर्य।

. परिचय। २. पढने के मुख्य विषय मे हमारी समझ। ३. वर्तमान आदर्श। ४. विद्यार्थी का सच्चा तप। ५. ब्रह्मचर्यहीन विद्यार्थी की गति। ६. विद्यार्थी कैसे बिगड़ते है। ७. सच्चरित्रता का मुख्य साधन। ८ उपसंहार।

१. ब्रह्मचारी के उपास्य धर्म को ब्रह्मचर्य कहते हैं, या यों कहिये कि जो ब्रह्मचर्य से रहता है वह ब्रह्मचारी है। ब्रह्मचर्य का मुख्य सम्बन्ध है वीर्यरक्षा से—वीर्यरक्षापूर्वक जो विद्यार्थी विद्याध्ययन करता है यथार्थ में वही ब्रह्मचारी है। ब्रह्मचर्य के अनेक नियमों में जितेन्द्रियता का माहात्म्य बहुत बड़ा है। पहले ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के बालक यज्ञोपवीत के अनन्तर गुरुकुल में वास कर ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्याध्ययन करते थे,

परन्तु अब यह व्यवस्था विशृङ्खल हो गई है। अब अध्ययन का नियम बिल्कुल बदल सा गया है। ब्रह्मचर्य की ओर किसी का ध्यान नहीं रहा। एक ही दिन में चूड़ाकरण, उपनयन, वेदारम्भ और समावर्तन कर्म समाप्त हो जाते हैं। दूसरे ही दिन गार्हस्थ्य धर्म में प्रवेश करके द्विजकुमार विवाहसूत्र में बद्ध हो ब्रह्मचारी से गृहस्थ बन जाते हैं। यद्यपि ब्रह्मचर्य का पालन मनुष्यमात्र के लिये विधेय है तथापि कोई भारतवासी इस ओर विशेष लक्ष्य नहीं देता। इसी का यह परिणाम है कि आज सारा भारत दीनहीन अवस्था में पड़ कर दूसरे का मुँह ताक रहा है। बिना ब्रह्मचर्य के कोई, उच्च उद्देश्य का साधन नहीं कर सकता। जो लोग ब्रह्मचर्य से च्युत हैं वे आप तो ब्रह्मचर्य से वञ्चित होते ही हैं, उनकी सन्तान भी निस्तेज होती है। उत्तरोत्तर ब्रह्मचर्य का लोप होने ही से यह देश अधोगति को प्राप्त हो गया है। जहाँ देखिये वहीं रोग, शोक, सन्ताप, आलस्य, निरुत्साह, साहसहीनता, ईर्ष्या, द्वेष, मिथ्याडम्बर, प्रेमशून्यता, अभक्ति आदि अनेक दोषों का साम्राज्य फैल रहा है।

३. पढ़ने का मुख्य फल लोगों ने द्रव्योपार्जन समझ लिया है और उपार्जन की पहली सीढ़ी नौकरी मान ली गई है। 'पढ़ने से कोई न कोई नौकरी अवश्य मिलेगी' यह धारणा प्रायः सभी छात्रों के मन में रहती है। यहाँ तक कि कितने ही राजे महाराजे वैतनिक सेवा को प्रतिष्ठामूलक समझ उसे चरितार्थ करते हैं। फिर जो छात्र केवल नौकरी ही के लिये विद्याध्ययन करते हैं, वे नौकरी मिल जाने पर विद्या पढ़ना सफल समझें तो आश्चर्य ही क्या है? परन्तु जिस ब्रह्मचर्य के प्रभाव से मनुष्य कठिन से कठिन साधन को अनायास सिद्ध

कर सकते हैं उसकी वे कभी स्वप्न में भी भावना नहीं करते। 'विद्या पढ़ो चाहे न पढ़ो, किन्तु ब्रह्मचर्य का पालन अवश्य करो'। ऐसा कहने वालों या इस सिद्धान्त पर चलने वालों की संख्या बहुत कम है। आजकल जो लोग दूसरे की वैज्ञानिक विद्या, शारीरिक बल, सुन्दर सन्तान, यथेष्ठ धन और नाना प्रकार के सुख देख कर तरसते हैं, उन्हे ब्रह्मचर्य की महिमा गाकर सन्तोष करना चाहिये। अन्य युग में इस ब्रह्मचर्य के प्रभाव से ही बड़े बड़े ब्रह्मनिष्ठ ऋषिगण, बड़े बड़े योगी, बड़े बड़े युद्धवीर, धीर, ऐश्वर्यवान् और धर्मनिष्ठ हो गये हैं। उनके चरित इतिहासों में उल्लिखित हैं, जिनके पवित्र नाम अब भी प्रातःस्मरणीय हो रहे हैं।

३. पहले की बात जाने दीजिये, वर्तमान युग में भी कितने ही आदर्श पुरुष विद्यमान हैं, जो अपने ब्रह्मचर्य का माहात्म्य प्रत्यक्ष दिखा कर लोगों को शुभमार्ग की ओर खींच रहे हैं। हम तो नवयुवक छात्रों से यही बार बार विनयपूर्वक कहेंगे कि यदि आप विद्यासागर पं० ईश्वरचन्द्र के सदृश दयालु, महर्षि दयानन्द सरस्वती के सदृश उदारचेता, राजा राममोहनराय के सदृश देशोपकारी, रजौर के राजा श्री बुद्धिनाथ चौधरी के सदृश सुसन्ततिमान्, महामहोपाध्याय श्रीशिवकुमार मिश्र के सदृश विद्वान्, श्रीमान् रासबिहारी घोष के समान् दानशील और श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर के सदृश साहित्यवेत्ता तथा कलियुगी भीम श्रीराममूर्ति के समान बलिष्ठ होना चाहते हैं तो ब्रह्मचर्य का पालन करें।

४. ब्रह्मचर्य क्या है मानो एक प्रकार का तप है। छात्रावस्था में तपोनिष्ठ होना नितान्त आवश्यक है। विद्यार्थियों के लिये ब्रह्मचर्यपूर्वक विद्याध्ययन करना ही तप है, लिखा भी

है—'छात्राणामध्ययनं तपः।' पढ़ने के सिवाय कभी अपने मन को विषयवासना की ओर न जाने देना ही तप है। जिस विद्या के पढ़ने से ज्ञान की प्राप्ति हो, ईश्वर की पहचान हो, अज्ञान का नाश और सुजनता का विकाश हो वह तप नहीं तो और क्या है? परन्तु आजकल बहुधा विद्या पढ़ने का फल उलटा ही देखने में आता है। कितने ही विद्यार्थियों में विलासप्रियता, अधीरता, अजितेन्द्रियता आदि अनेक दोष देखे जाते हैं। देख कर देखनेवालों के मन में मर्मान्तिक पीड़ा होती है। यदि विद्या पढ़ कर सच्चरित्र न हुए, कुछ देशोपकार न किया तो विद्या पढ़ने का फल क्या हुआ?

५. कितने ही विद्यार्थी तो ब्रह्मचर्य के अभाव से बराबर रोगी रहा करते हैं, जिससे उनके पढ़ने में बड़ी हानि पहुँचती है। वे भली भाँति अपने पाठ को याद नहीं कर सकते। पाठ भली भाँति याद न होने के कारण वे परीक्षा में फेल होकर खूब पछताते हैं। तीक्ष्ण बुद्धि होने पर भी वे मन्दबुद्धि की उपाधि से विभूषित होते हैं। जब कोई मोटी बुद्धिवाला सच्चरित्र छात्र पढ़ने में उनके आगे बढ़ जाता, अथवा परीक्षा में अधिक नम्बर लाता है, तब उनके मन में ग्लानि की सीमा नहीं रहती। जब वे जितेन्द्रिय पुरुषों की तेजःपूर्ण मुख की दिव्य कान्ति देखते हैं तब उन्हें अपने मुरझाये चेहरे पर अत्यन्त खेद उत्पन्न होता है और अत्यन्त दुःख तो उन्हें तब होता है जब वे अपनी इस कान्तिहीनता का कारण तपोभ्रष्ट होना समझते हैं। जब वे मैट्रिक्युलेशन परीक्षा पास होते न होते बच्चों के बाप बन बैठते हैं तब अपने अविवाहित हृष्टपुष्ट युवा साथी का अदम्य उत्साह और जितेन्द्रियता देख उन्हें बड़ी लज्जा होती है। पढ़ने लिखने से जी उनका उचट जाता

है। अपनी प्रणयिनी के कृत्रिम प्रेम पर मुग्ध हो वे पढ़ना लिखना भूल जाते हैं। विद्याध्ययन उन्हें भार सा प्रतीत होता है। वे अपनी हृदयहारिणी के हृदय का हार बनने ही में अपने मानवजन्म को सार्थक समझते हैं। किन्तु कुछ ही दिनों में जब उनकी मोहनिद्रा टूटती है तब वे अपनी नासमझी पर घृणित आत्महत्या किंवा गृहत्याग करने को तैयार हो जाते हैं। जिस ब्रह्मचर्य की उपेक्षा से मनुष्य मनमाना सुख नहीं पा सकता, उस ब्रह्मचर्य को हाथ से जाने देना मानो अपने हाथ अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारना है।

६. छः सात वर्ष के छोटे बच्चे जब पाठशाला में पढ़ने को जाते हैं, तब उनकी भोलीभाली सूरत, सरल स्वभाव और निर्मल चित्त देख किसे दया नहीं होती? उनके माँबाप की तो कोई बात ही नहीं, शायद कोई राक्षस भी ऐसा न होगा जो उनको बिगाड़ने की चेष्टा करे। परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि ऐसे भोलेभाले बालक अपने ऊपर की श्रेणी के असच्चरित्र विद्यार्थियों से कुव्यवहार की शिक्षा ग्रहण कर थोडे ही दिनों में बिगड़ जाते हैं। उनका कोमल निष्कलङ्क हृदय अनेक दोषों का भण्डार बन जाता है। जो लाख यत्न करने पर भी पीछे सद्गुण का स्थान नहीं बनने पाता। यदि ऊपर के दरजे के विद्यार्थी सच्चरित्र हों, सच्चे ब्रह्मचर्य के उपासक हों तो वे अपने अनुगत विद्यार्थियों का बहुत कुछ सुधार कर सक ते हैं, विद्यार्थियों ही का नहीं, सारे देश का उपकार कर सकते हैं।

विद्या र्थी की सच्चरित्रता के साथ साथ गुरु को सच्चरित्र होना और भी नितान्त आवश्यक है। बहुधा देखा गया है कि जो गुरु अच्छे पढ़े लिखे हैं, परन्तु चरित्र उनका ठीक नहीं है

तो उनके संसर्ग से कितने ही विद्यार्थी भी असच्चरित्र हो जाते हैं। जिन विद्यार्थियों के गुरु सच्चरित्र, धर्मनिष्ठ और दयालु होंगे उनके विद्यार्थी भी प्रायः वैसे ही होंगे। मनुष्यों का यह स्वभाव है कि वे अपने से श्रेष्ठ पुरुष की देखादेखी काम करते हैं। गीता में लिखा है—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥

जो लोग जिनके अधीन रहते हैं, उनके आचरण का कुछ कुछ असर उनके आश्रितों पर अवश्य पड़ता है। अतएव यदि माँबाप अपनी सन्तानों को, गुरु अपने विद्यार्थियों को, पति अपनी पत्नी को, मालिक नौकरों को और राजा अपनी प्रजाओं को सच्चरित्र बनाना चाहें तो पहले आप अपने चरित्रगत दूषण को दूर करें। जब हम अपने चरित्र को विशुद्ध रक्खेंगे तब हमारे आश्रित भी अपने चरित्रसुधार की ओर ध्यान देंगे।

यद्यपि हमारी सरकार शिक्षकों की सच्चरित्रता पर विशेष ध्यान रखती है और वह चाहती है कि सच्चरित्र अध्यापकों के ही द्वारा छात्रगण सुशिक्षित हों तथापि ब्रह्मचर्य के निरादर से कुछ न कुछ गड़बड़ी मच ही जाती है।

सच्चरित्रता का मुख्य साधन ब्रह्मचर्य है। जिसने ब्रह्मचर्य का पालन किया, सच्चरित्रता मानो आपसे आप उसके हाथ आ गई। सब इसी एक ब्रह्मचर्य के भीतर छिपे हैं। सत्य, शौच, सन्तोष, क्षमा, दया, मैत्री आदि गुण जो एक से एक बढ़ कर दुर्लभ हैं और मनुष्यों के भूषण हैं, वे ब्रह्मचारियों के लिये बड़े सुलभ हैं। ब्रह्मचारी उन गुणों को अनायास पा सकते हैं।

६. ब्रह्मचर्य का गुण गाने में हम सर्वथा अक्षम हैं। जो

उच्चाभिलाषी छात्र महाशय ब्रह्मचर्य की महिमा जानना चाहें वे स्वयं ब्रह्मचर्य की उपासना करके इसके महत्त्व का अनुभव कर लें। हम आशा करते हैं कि विद्यार्थीगण अधिक नहीं तो बीस वर्ष की उम्र तक इस अनमोल ब्रह्मचर्य का उचित रीति से पालन कर अतुलनीय तेज प्राप्त करके भारत का गौरव बढ़ावेंगे।

ब्रह्मचर्य के लिये न धन की, न समय की और न स्थान विशेष की आवश्यकता है। आवश्यकता है केवल दृढ़ प्रतिज्ञा की। जभी से चाहिये, इसका नियम कीजिये। कुछ ही दिनों में आप इस ब्रह्मचर्य के मधुर फल का आस्वादन कर अवश्य कृतार्थ होंगे। आपका शरीर बलिष्ठ होगा, आपका आध्यात्मिक बल बढ़ेगा। आप देशोन्नति करने में समर्थ होंगे। विद्वन्मण्डली से आपका आदर होगा। आपके पास धन की कमी न रहेगी। सुन्दर सुशील सन्तानों से भारत की शोभा बढ़ाकर अन्त में आप देवत्व लाभ करेंगे। (विद्यार्थी से उद्धृत)

पं० जनार्दन झा।

विभेद और तुलना।

(Contrast and Comparison).

ग्रामवास और नगरवास।

१. भूमिका। २. तुलना—नगर—ग्राम—दोनों की शेष बातें—उदाहरण—औरकुछ। ३ दोनों का मिश्रण। ४. उपसंहार।

१. लोग समझते हैं कि बड़े यशस्वी, बड़े पुरुषार्थी और बड़े विद्वान् को उत्पन्न करना नगर ही का काम है। ग्रामवासी

ही चटपट और और काम करके खानेपीने का भी खेल कर लिया जाता है, पर उसमें मन कहीं और हाथ कहीं। बात की बात में दिन समाप्त पाया। बस थकेमाँदे कुछ टहले, कुछ संवादपत्र पढ़े, कुछ हाहा हीही की और चिन्ता में चित्त को चक्कर खिलाते सोये। इस प्रकार नागरिकों को जीवन का कुछ भी आनन्द नहीं मिलता, किन्तु कार्य प्रवाह के धक्के ही बचाते प्राण जाते हैं।

जो ग्राम में रहते हैं उनके कामों में गाड़ी के घर्राटों के धट्टे नहीं रहते, बल्कि पक्षियों की कुहुकों की मधुरता छाई रहती है। वे घर बैठे ही शीतल मन्द और सुगन्धित वायु का आनन्द उठाते हैं, वे जिधर ही दृष्टि डालें उधर ही कहीं पक्के आमों के बोझों से झुकी हुई डाल देख पड़ेगी और कहीं जामुन चुआते वृक्ष देख पड़ेंगे, कहीं जहाँ तक दृष्टि जाय वहाँ तक धानों से तरंगित खेत और कहीं खिले कमलों से भरे सरोवर देख पड़ेंगे। धारोष्ण दुग्ध, उसी क्षण का मह के निकाला मक्खन, तथा टटके फल और शाक का स्वाभाविक भोजन है। शारीरिक परिश्रम उनका नित्य कर्म है, कृषिकर्म और वृष्टि के फल देखते देखते उद्योग और दैव का माहात्म्य उन्हें सीखना नहीं पड़ता। उनके शरीर में सुकुमारता का रोग नहीं, उनका दीपन प्रबल रहता है, अंगों में शक्ति रहती है और इसी लिये वे चिरंजीवी होते हैं और इन्हीं कारणों से उदारचरित और महापुरुष होने के योग्य उनका मस्तिष्क रहता है, अतएव नागरिक बड़ा शिक्षा पाने पर भी उतना बड़ा पुरुष नहीं होता जितना दिहाती पुरुष थोड़े समय शिक्षा पाने से ही हो सकता है।

हाँ, यह दूसरी बात है कि अन्यान्य घटनाओं के विषय में

नागरिक की बहुज्ञता रहती है और दिहाती की नहीं, पर साथ ही साथ यह भी है कि नगरों में जैसे धूमधाम के व्यापारवाले गुदाम और बाजार रहते हैं, कहीं नाटक, संगीत, घुड़दौड़ और मेले होते हैं—वैसे ही कहीं नाच, जूआ आदि कहीं चोरी और मार पीट के हल्ले और कहीं ठगों और धूर्तों के बखेड़े—इत्यादि ऐसी घटनाएँ होती रहती हैं, जो वृत्तियों को बिगाड़ें और धूर्तता के अंकुर जमावें। लोग सीधे सादे दिहाती को दिहाती कहके दुरदुरा देते हैं, पर जैसे दिहाती पद से यह झलकता है कि लौकिक विषयों में चतुर नहीं, वैसे ही यह भी झलकता है कि सूधा, सच्चा, निष्कपट और सज्जन, और जहाँ किसी को कहा कि ये तो नगर निवासी न हैं! बस उसी समय विदित हुआ कि ये लोक चतुर तथा छल कपट और धूर्तता के शास्त्र में भी प्रवीण हैं। यदि सच्ची दृष्टि से चतुरता की तुलना करें तो यह भी निर्णय करना कठिन है कि अधिक चतुर कौन? क्योंकि जिस विषय का संघट नगर निवासी को रहता है उस विषय में वह चतुर रहता है और जिस चक्र में दिहाती रहता है उसमें वह भी किसी से कम नहीं रहता। नागरिक लोग वनस्पतियों को नहीं चीन्हते, कृषिविद्या कुछ भी नहीं जानते। केवल शब्द के सुनने से पशुपक्षियों को नहीं पहचान सकते, पशुपक्षियों के स्वभाव से परिचित नहीं रहते, परन्तु इन विषयों में वेही सीधे सादे ग्राम्यजन प्रवीण होते हैं। इसमें कोई भी संदेह नही है कि महापुरुष होने की जैसी योग्यता ग्रामीण में होती है वैसी नगर निवासियों में नहीं, क्योंकि दया, क्षमा, शील, विश्वास, श्रद्धा, निष्कपटता, कृतज्ञता, गुणग्राहिता, परिश्रम, पारस्परिक स्नेह आदि गुण जिसमें रहते हैं वही महापुरुष होने का अधिकारी होता है।

ये गुण नगर निवासियों में प्रायः नहीं पाये जाते। नगर निवासियों में ऐसे ही पुरुष प्रायः मिलेंगे जिनके द्वार पर दीन जन भूखों रोते रोते मूर्छित भी हो जाँय तो वे इन्हें एक मुट्ठी अन्न देने के ठिकाने अपने दासों को मारने की आज्ञा देते हैं, पर ग्रामों में प्रायः ठीक इसका उलटा बर्ताव होता है। यदि कोई पहुँचे तो उसी क्षण चौकी चटाई बैठने को मिलती है और परिपूर्ण भोजन में तो सन्देह ही नही। नगर निवासियों में तो एक दूसरे से बहुत ही कम प्रीति रखते हैं और प्रीति रखना तो जहाँ तहाँ, अपने महल्ले के रहनेवालों में भी सब को सब नहीं चीन्हते। यह कहा जा सकता है कि उन्हें कार्य बहुत रहते हैं, तो विचारे कैसे सब, सबसे मिलें और चीन्हें। दिहातियों के इने गिने काम और अवसर भरपूर रहते हैं तो वे एक दूसरे को जानें और मानें तो क्या आश्चर्य है। फलतः सिद्ध हुआ कि एक स्नेही, अनुरागी और प्रेमी ग्राम्य जन ही बड़ा पुरुष हो सकता है।

उदाहरण में देखिये, श्रीरामायण के रचयिता आदि कवि वाल्मीकि किसी नगर के निवासी न थे, वेदव्यास जंगल में रहते थे, कणादि मुनि नागरिक नहीं थे, तर्क सूत्र के भाष्यकार शङ्कर मिश्र और षट्दर्शन टीकाकार वाचस्पति मिश्र तिरहुत के ग्रामीण थे। गोकुलनाथ झा, पक्षधर मिश्र इत्यादि महापण्डित तिरहुत के इनी हरिनगर, मंगरौनी, पिल्लकवार आदि ग्रामों में हो गये हैं। ऐसा कौन है जो तुलसीदास को नहीं जानता हो ? ये राजापुर नामक ग्राम के रहनेवाले थे। विद्यापति ठाकुर का केवल तिरहुत नहीं, किन्तु समस्त बंगाल ऋणी है, ये महापुरुष तिरहुत के बिसपी नामक ग्राम के थे। बंगभाषा के जीवनधन जगत्प्रसिद्ध ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

मेदनीपुर जिले के बीरसिंह ग्राम के निवासी थे। यों ही जहाँ तक ढूँढ़े जायँ, एक से एक उत्तम पुरुष ग्राम निवासी ही पाये जायँगे, परन्तु सज्जन का कार्य यह है कि सबके ठीक ठीक गुण दोषों का ग्रहण करे, केवल एक का व्यर्थ पक्षपाती न हो।

नगरों में चोर उठाईगिरे अधिक होते हैं यह भी नगर के लिये बड़ा कलङ्क है, पर ध्यान देकर देखें तो ग्राम में भी ये बातें कम नहीं है। ग्रामों में बराबर सेंध पड़ा ही करती है। खरिहानों से हजारों मन अन्न अचानक चोरी में जाते हैं। खेतों के सिवाने तोड़ तोड़ के घटा बढ़ा कर बाँधनेवाले सहस्रों हैं। पानी की चोरी नगर में कभी न सुनी होगी, पर बाँध से पानी चुरानेवाले ग्रामों में सहस्रों हैं। नगर में यदि कोई भी कुम्हार किसीके घर में रहता हो तो स्वामी पैसा ही देके उसे हाँड़ी लेगा, पर दिहात में तो असामी का धन अपना ही समझा जाता है। बात बात में असामी को बेगारी पकड़ा और लतियाया और कुपित हुए तो उनके झोपड़ों में आग लगा दी। बंगाल में नील के जमींदारों की संख्या कम नहीं है, पर वे मनुष्यों को पशु से भी निकृष्ट समझते हैं।

३. बिचारने की बात यह है कि वायु जलादि ग्राम का स्वयं अच्छा होता है और नगर का अच्छा करने से होता है, परन्तु शिक्षा नगर ही में अधिक सुभीते से और उत्तम रीति से होती है, ग्राम में थोड़ी बहुत जाती भी है तो नगर ही से। यदि अलग अलग ल तो ग्राम परग पशुवत्, परन्तु आरोग्य जीवन बनाता है और नगर आरोग्यरहित, किन्तु शिक्षित जीवन बनाता है। अलग अलग दोनों ही काम के नहीं, परन्तु यदि दोनों का मिश्रण हो तो अपूर्व फल होता है। प्रायः जितने उदाहरण दिये जा सकते हैं वे सब ऐसे ही हैं कि ग्राम

ने उन लोगों को आरोग्यता दी, मस्तिष्क में बल दिया और हृदय में धीरज, गम्भीरता इत्यादि गुण दिये और ऐसे पात्र को पा नगर ने शिक्षा दी। तब वे इतने बड़े पुरुष हो, इस भूमि के अलंकार हो विचरण करने लगे। काशी के पूज्यपाद पण्डित यागेश जी, पण्डित सुधाकर द्विवेदी, स्वामी राममिश्र शास्त्री, और स्वामी भास्करानन्द इत्यादि ग्राम ही के निवासी थे। परन्तु क्या ये लोग ग्राम ही में पड़े रहते तो ऐसे महानुभाव होते? कदापि नहीं। ग्राम ने योग्यता का बीज भले ही दिया हो, परन्तु शिक्षित कर इतना बड़ा बना देनेवाली भगवती काशी ही है।

४. अब हम अपने लेख को बहुत लम्बा नहीं करना चाहते, इतना ही उपदेश देकर समाप्त करते हैं कि ग्राम और नगर-निवास में जो जो अच्छी बातें हैं उनका ग्रहण करना और बुरी का त्याग करना।

यातें कछु गुन दोष बखाने। संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने॥

(पं० अम्बिकादत्त व्यास लिखित लेख का संक्षेप।)

विद्या और विवेक (Knowledge and Wisdom.)

१. परिचय। २. तुलना। ३ विद्वानों को क्या करना चाहिये? ४. उपसंहार।

विद्या बिनु विवेक उपजाये।
श्रमफल पढ़े किये अरु पाये॥—रामायण।

१. विद्या सब से ऊँची श्रेणी की मन की योग्यता है जो पुस्तकों और विद्वानों से मिलती है, परन्तु विवेक उससे भी कुछ बढ़ कर है या यों कहिये कि यह विद्या भी है और विद्या के उचित उपयोग की शक्ति भी है। विद्या का निवास मस्तिष्क में है और यह दूसरों से सीखी जाती है, परन्तु विवेक का

स्थान हमारे अपने विचार और बुद्धि में है और यह अपनी ही आत्मा के अनुशीलन और कार्य व्यवहार से सीखते हैं। विद्या रुखड़े और बेढब पत्थरों का पहाड़ है, इन्ही बेढब पत्थरों को चिकना कर और काटछाँट कर विवेक का महल तैयार करते हैं।

२. विद्या से हम संसार को पहचानते हैं। यह बेटा है, यह दूसरा लड़का है, यह हमारी पत्नी है, यह हमारी माता है—इत्यादि का परिचय विद्या कराती है। परन्तु, ऊँच और नीच का निर्णय, गुण और अवगुण का भेद तथा अच्छे और झूठे का विचार हम विवेक ही से कर सकते हैं। किस को किस भाव से देखना चाहिये, संसार ही हमारा कुटुम्ब है—इत्यादि का यथार्थ निर्णय विवेक ही से होता है। जिसने केवल पुस्तकों ही से विद्या प्राप्त की है उसके लिये यह बाह्य जगत् भी एक मुहर लगी पुस्तक है, परन्तु विवेक की दृष्टि से एक क्षुद्रतर प्राणी भी सारे संसार को अक्षय सत्य के उपदेश सिखा देता है। विवेकी अन्तर्जगत् और बाह्य जगत् को एक समान देखता है, परन्तु विवेक हीन विद्वान् की अन्तर्जगत् में पहुँच ही नहीं।

विद्या हमारे चरित्र पर कुछ भी अधिकार नहीं रखती, परन्तु विवेक हमको सच्ची वस्तु की ओर सच्ची राह की परख कराता है तथा सांसारिक व्यवहारों और उलझनों से सावधान करता है। संभव है कि विद्वान् राह से फिसल जायँ, कुमार्गों में पाँव डाल दें और असद्विचारों में लग कर अपने केन्द्र को संकुचित बनालें, परन्तु विवेकी अपने विवेक से सांसारिक विषय वासनाओं से हट कर, सच्ची राह पर चल कर और सद्विचारों में लगकर अपने केन्द्र को प्रशस्त बना लेता है।

विद्या स्वभावतः अपने ज्ञान पर भ्रम डालती है जिससे हममें अभिमान आता है, परन्तु विवेक, जो हमारी अज्ञानता

का यथार्थ ज्ञान है, हम में विनय और मान की सजीवता उत्पन्न करता है जिससे हम दुर्विकारों से हट कर आत्मा को पहचानते हैं और आध्यात्मिक शान्ति लाभ करके निर्वाण पद तक पहुँच जा सकते हैं।

३. विद्वानों को उचित है कि वे अपनी विद्या के साथ विवेक का उचित समागम करावें। यदि वे ऐसा करेंगे—यदि वे विवेक से कार्य करेंगे तो अपने जन्म को सार्थक कर सकेंगे—अपनी मातृभूमि के सच्चे सेवक बन सकेंगे और यदि नहीं, तो उनकी विद्या सतीत्व रहित सुन्दरी स्त्री, केवट-रहित नाव या लवण रहित व्यञ्जन के समान केवल अभिमान ही भर को रह जायगी।

४. बहुत से विवेकी पुरुष हो गये हैं जिन्होंने उपर्युक्त विद्या के लिये कभी भी अभिमान नहीं दिखाया। विवेकियों में अग्रगण्य महात्मा सुकरात को विद्या सम्बन्धी पाण्डित्य का कुछ भी घमण्ड नहीं था। बहुत से मनुष्य हैं, जो अपनी विद्या को विवेक में नहीं बदल सकने के कारण संसार के भार हैं और उनकी विद्वता से कुछ भी फल नहीं मिलता।

"... ... ...
knowledge is proud that he has learned so much
Wisdom is humble that he knows no more."—Cowper.

(B. A. Examination, 1920)

पुरातन तथा आधुनिक सभ्यता।

१. पुरानी सभ्यता—आधुनिक सभ्यता—दोनों का मिलान। २. आधुनिक सभ्यता रुपये पर निर्भर है। ३. जलवायु के साथ सभ्यता का सम्बन्ध। ४. उपसंहार।

१. पुरानी सभ्यता का उद्देश्य साधारण जीवन और उच्च

विचार (Simple living and high thinking) था। हमारे पुराने लोग शून्य एकान्त स्थान में जनसमाज से बड़ी दूर किसी पर्वतथली या पवित्र नदी के तट पर स्वच्छ जल-वायु में नीवार, साग पात या कन्द मूल फल खाकर रहते थे। बेशकीमत दस्तरखान उनके लिये नहीं सजाया जाता था, पर विचार उनके ऐसे ऊँचे होते थे कि संसार की कोई ऐसी बात न बच रही जिस पर उन्होंने ख़याल नहीं दौड़ाया और जिसको अपने मस्तिष्क में नहीं रख लिया। इस समय की सभ्यता की जो चलन है उसके साथ उनकी सभ्यता का मुकाबिला करने से वे लोग जंगली (Rude) और असभ्य कहे जा सकते है। तब के लोगों को शान्ति बहुत प्रिय थी। जो जितना ही मन को वश में कर दमनशील और शान्त रहता था वह उतना ही अधिक सभ्य समझा जाता था। इस समय शान्त-शील बोदा समझा जाता है। मन को वश में करना तो दूर रहा, बल्कि मन को चलायमान और इन्द्रियों का अतिशय लालन करने की कितनी तद्बीरें और सामग्रियाँ चल पड़ी हैं। फ्रान्स में दिन में तीन बार लेडियों के फ़ैशन बदले जाते हैं। फ़ैशन जो इस समय अन्तिम सीमा को पहुँच रहा है यह सब सभ्यता ही का प्रसाद है। इसके सिवाय लोभ, ईर्ष्या, ममता इत्यादि दोष जो इन्द्रियों को दमन न करने से पैदा होते हैं सैब इस समय की शोभा और गुण हो रहे हैं। सारांश यह कि उस समय की सभ्यता का लक्ष्य केवल बाहरी उन्नति पर नहीं, वरन् भीतर की उन्नति पर था जिसे आध्यात्मिक उन्नति कहते हैं। हमारी आध्यात्मिक उन्नति में बिना बाधा पड़े बाह्य भौतिक उन्नति उस समय लोगों को स्वीकृत थी। इस समय "मेटीरियल" अर्थात् भौतिक उन्नति पर ज़ोर दिया जाता है,

जिसका परिणाम यह है कि हम आध्यात्मिक विषय में दिन-दिन गिरते जाते हैं।

२. हमारी आधुनिक सभ्यता बिलकुल रुपयेपर निर्भर है। रुपया पास न हो तो आप सकलगुणगरिष्ठ शिष्ट समाज के शिरमौर होकर भी श्रद्धास्पद नहीं हो सकते। सर्वसाधारण को जब यह निश्चय हो गया कि केवल रुपया सब इज्जत और प्रतिष्ठा का द्वार है तब जैसे बने वैसे रुपया इकट्ठा करना ही हमारा उद्देश्य हो गया और हमारी आध्यात्मिक शक्ति का ह्रास दिन पर दिन होने लगा। तब के लोगों में ऐसा न था। आभ्यान्तरिक शक्तियों को विमल रख रुपये का लाभ होता हो तो वह लाभ उन्हें ग्राह्य था। एक कारण इसका यह भी कहा जा सकता है कि तब देश सब ओर से रंजा पुंजा था, धन की कमी न थी। अब इस समय मुल्क में ग़रीबी बढ़ जाने से लोगों को रुपया कमाने में यत्न (Struggle) विशेष करना पड़ता है। यूरोप और अमेरिका के आढ्यतम देशों में इस आधुनिक सभ्यता की पोल इसलिये नहीं खुलने पाती कि वहाँ कोशिश (Struggle) इतनी अधिक नहीं है। यहाँ सब भाँति अभाव और क्षीणता है, इससे इस वर्त्तमान सभ्यता की भरपूर पोल खुल रही है।

सभ्यता का, देश के जलवायु के साथ बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है। किसी देश में प्राकृतिक नियमानुसार जो बात या जो बर्ताव जलवायु के अनुकूल पड़ता है वही वहाँ की सभ्यता समझी जाती है। जैसे हमारा देश कृषिप्रधान है तो जो कुछ यहाँ की खेती के अनुकूल या पृथ्वी की उपज का बढ़ाने वाला है उसकी वृद्धि या उसका पोषण इस देश की सभ्यता का एक अंग है। जैसे गोरक्षा या गोपालन यहाँ की सभ्यता का

श्रेष्ठ अंग है। सामयिक सभ्यता में गोधन की क्षीणता महा-पातक सा देश भर को आक्रमण किये है। हमारे पूर्वज प्रकृति को छेड़ना नहीं पसन्द करते थे, वरन् प्रकृति में विकृति भाव बिना लाये सहज में जो काम हो जाता था उसी पर चित्त देते थे। आधुनिक सभ्यता जो विदेश से यहाँ आई है, हमारे किसी बात के अनुकूल नहीं है। किन्तु इससे प्रतिदिन हमारी क्षीणता होती जायगी। भोग विलास आधुनिक सभ्यता का प्रधान अंग है। दरिद्र का विलासी होना अपना नाश करना है।

३. "उपर्युपरिपश्यन्तः सर्व एव दरिद्रति।"

अर्थात् अपने से अधिक वाले का अनुकरण करने से कौन नहीं दरिद्र हो जाता। तस्मात् अन्त को यही सिद्ध होता है कि "साधारण जीवन और ऊँचा विचार" यही पुष्ट सभ्यता है। अस्तु—

जिन दिन देखे वे कुसुम गई सो बीत बहार।
अब अलि रही गुलाब की अपत कटीली डार॥

पं० बालकृष्ण भट्ट।

प्रवाद और सूक्तियाँ।

(Proverbs and Quotations.)

लालच बुरी बलाय।

(Avarice is the root of sin.)

१. परिचय। २. लोभ का प्रभाव। ३. लोभी का स्वभाव। ४. लोभ का फल। ५. लोभ छोड़ने से लाभ।

१. दूसरे का धन या कोई पदार्थ ले लेने के लिये हृदय

में जो बुरी लालसा उत्पन्न होती है उसीका नाम लोभ या लालच है। यह षड्रिपुओं में सबसे प्रबल रिपु है।

२. लोभ में ऐसी मोहिनी शक्ति है कि मनुष्य की सारी सत् प्रवृत्तियाँ ध्वंस हो जाती हैं। आज अपनी सच्चरित्रता से जिसने सम्मान लाभ किया है, कल वही लोभ के कारण चोरी इत्यादि कुकार्य करके सबों की दृष्टि में पतित हो जाता है। लोभ साधु को असाधु बना देता है, ज्ञानी का ज्ञान छीन लेता है और दाता के हृदय को कठिन बना देता है। लोभ न्यायान्याय का विचार नहीं रहने देता और मनुष्य से मनुष्यत्व को भी छीन लेता है।

३. लोभी मनुष्य को सत्यासत्य और हिताहित की विवेचना नहीं रहती। वह अकार्य को कार्य और अन्याय को न्याय समझता है। क्षुद्र से क्षुद्र पदार्थ के लिये भी लोभी झूठ बोलता, निन्दा सहता और नरहत्या तक कर डालता है। प्रतिहिंसा में पड़ कर वह दूसरे का धन हरने, चोरी करने और डाँका देने का बीड़ा उठा लेता है। लोभी की आकांक्षा इतनी प्रबल होती है कि वह दूसरे के नाश के लिये सदा उतारू रहता है। लोभी मनुष्य दरिद्र के मुँह का भोजन छीन लेता है, धनी को भिखारी बना देता है, सती का सतीत्व नाश कर देता है और पति को पत्नी से जुदा कर देता है।

४. लोभी की अभिलाषा जितनी बड़ी होती है, प्रवृत्ति उतनी ही घृणित होती है, जिसका परिणाम अति ही शोचनीय और भयङ्कर होता है। प्रायः देखा जाता है कि लोभी मनुष्य निन्दा सहता हुआ दूसरे की सम्पत्ति लेने में लग कर पकड़ा जाता है और कठिन दण्ड भोगता है। पेटू मनुष्य

मुफ़ का भोजन पा ठूँस ठूँस कर खा लेता है और कठिन रोगों के पंजे में पड़ अपने पाप का परिणाम भोगता अकाल ही में मृत्यु के मुख में पड़ जाता है। लोभी मनुष्य और पशु में कोई भेद नहीं, वह पशु के समान दूसरों के वश में पड़ कर स्वावलम्बन गुण को भूल जाता है और अन्त में अपने को संसार का भार समझने लगता है।

५. जो 'प्रकृत मनुष्य' बनना चाहता है उसे उचित है कि इन्द्रियसंयम सीखे और लोभ को दमन करे। लोभ का त्याग करने ही से मनुष्य को आत्मा उन्नत हो सकती है। यदि कोई मनुष्य तुम्हें कुछ सम्पत्ति अमानत रखने के लिये दे और तुम लोभ में पड़ कर उसे फिर नहीं लौटाओ तो तुम्हें विश्वासघातकता का पाप लगेगा, लोग तुमसे घृणा करने लगेंगे और तुम्हारा आदरमान जाता रहेगा। तुमसे मनुष्यत्व बिदा हो जायगा और पशुत्व गुण तुममें पहुँच जायगा। यदि तुम अपनी आर्थिक और मानसिक उन्नति चाहते हो तो लालच को सदा के लिये छोड़ दो। बालकों को उचित है कि लालच छोड़ने का अभ्यास बचपन ही से लगावें, नहीं तो पीछे हाथ मलमल कर पछताना पड़ेगा।

कारण—"मक्खी बैठी दूध पर, पंख गये लपटाय।
हाथ मले अरु सिर धुनै, लालच बुरी बलाय॥

कारज धीरे होत है, काहे होत अधीर।

धीरज भी मनुष्य में एक विलक्षण गुण है। जितने काम हैं, वे धीरज ही से अच्छे होते हैं। चपल पुरुष से प्रायः काम बिगड़ते हैं। जिसको धैर्य्य नहीं, वह थोड़ी ही बात में घबरा

जाता है और घबराने के कारण फिर उसको यह विवेक नहीं रहता कि क्या हमारा कर्त्तव्य है और क्या नहीं। तब फिर वह बिना बिचारे और बिना समझे चाहे जो कर डालता है, तो यह कब सम्भव है कि इस प्रकार के काम ठीक ही उतरें। ऐसा प्रसिद्ध है कि—

कारज धीरे होत है, काहे होत अधीर।
समय पाय तरुवर फरै, केतक सींचो नीर॥

जो लोग थोड़ी ही घबराहट में अपने से बाहर हो रोते हैं जने जने के पाँव पड़ते हैं, सन्देह और चिन्ता के ज्वर से ज्वरित होते हैं, उनसे अधिक और कौन दुःखी होगा। इस लिये सदा धीरज ही धरना चाहिये। जैसे कहा है कि—

हारिये न हिम्मत सुकीजै कोरि किम्मति को।
आपति में पति राखि धीरज कों धरिये॥

इस संसार में ऐसे क्षुद्र जन अनेक हैं जो कुछ भी शोक उपस्थित होने से घबरा के कुएँ में गिर के प्राण दे देते हैं। अथवा विष या शस्त्रादि से आत्मघात कर लेते है। कितने ही अधीर पुरुष आग लगी देख घबरा कर घर के कोने में घुसते जाते हैं और निकलने का पथ भूल प्राण दे देते हैं, कितने ही काठ के खिलौने से खड़े हो जाते है और बन्यपशुओं के ग्रास में पड़ते हैं, कितने ही घबराये पथिकों के समूह को अल्प सामर्थ्य तीन चार डाँकू लूट लेते है और वे बिचारे धीरज विहीन हो आपस में एक दूसरे को धरते पकड़ते रोते, हाहा करते लुट जाते हैं। धैर्य्य के छोड़ देने से कितने अनर्थ होते हैं जो कहे नहीं जा सकते। देखिये, धीर और अधीर का कितना अन्तर होता है। एक अधीर पुरुष की दूर से सिंह को देखते ही घिग्घी बँध जाती है और दूसरे धीर पुरुष, जब तक

सिंह लपक के उनके पास आवे, तब तक उसे गोली भर कर मारते हैं।

किसी एक पुरुष ने सिंह का बच्चा पाला और सदा उस पर हाथ फेरता, प्यार करता और अपने साथ रखता। सिंह का बच्चा उससे ऐसा हिल मिल गया था कि उस मनुष्य ने उसे कुत्ते के ऐसा बना लिया था। धीरे धीरे वह सिंह का बच्चा बड़ा हो पूरा प्रबल सिंह हुआ, पर तो भी उस सिंह का अपने स्वामी पर वैसा ही प्रेम था।

एक समय एक कुरसी पर उसका स्वामी बैठा था और हाथ में एक छोटीसी किताब लिये पढ़ रहा था। भोर का समय था, ठण्ढी ठण्ढी बयार चल रही थी। इतनी देर में सामने का पिंजरा उसकी आज्ञा से खोला गया और सिंह भी पूँछ हिलाता हुआ उसके पास आया। उसके स्वामी ने पहले उसके सिर पर हाथ फेरा फिर पुचकार चुचकार गर्दन झाड़ अपनी बाँई ओर बैठाया। वह भी उबासी ले कुछ बाँई ओर कुछ पीछे तक कुरसी घेरता हुआ बैठ गया।

उसका बाँयाँ हाथ बाँई ओर कुरसी के नीचे लटकता था। यह सिंह उसी हाथ के पास मुँह किये बैठा था और धीरे धीरे उसका हाथ चाटता जाता था।

उसके स्वामी की उधर कुछ भी दृष्टि न थी, यहाँ तक कि उसे हाथ चाटते चाटते लगभग आध घण्टा हो गया। तब उसकी जीभ की रगड़ से हाथ में कुछ रुधिर चमचमा आया और सिंह को भी जीभ में कुछ सवाद लगने लगा। जब इसका हाथ कुछ छरछराया तब इसने अपना हाथ अकस्मात् खींचा। उस समय पहिले तो सिंह ने जीभ के अलसेट से हाथ खींचने न दिया और इसने जब झटका तब सिंह गरज उठा।

इसने देखा कि सिंह की त्योरी बदली। तब यदि उसी समय घबरा फिर हाथ खींचता, तब तो समाप्त था, पर इसने धीरज को स्थान दिया और हाथ वैसे ही सिंह के मुँह के पास रक्खा और फिर पोथी की ओर मुँह कर अपने नौकर को पुकारा। नौकर के सामने आते ही उस सिंह के प्रेमी ने कहा कि चटपट जाओ और बङ्गले में धरी हुई दुनली बन्दूक़ भरी धरी है सो लाकर मेरे पीछे से झुक कर इस पाजी के पेट में और खोपड़े में मारो, नहीं तो दो मिनट में यह मुझे खा जायगा। वह नौकर भी रङ्ग देख कर काँप उठा, पर धीरज धर चट घर में गया और बन्दूक ले आया। कदाचित् देर तो आधे मिनट की हुई होगी, पर सब कोई समझ सकते हैं कि जिसका रुधिर सिंह चाट रहा था और जिसे पल पल पर मौत का भय होता था उस बेचारे को वह अल्प क्षण भी कितना बड़ा और कड़ा जान पड़ा होगा।

इतने में तो उस चतुर नौकर ने आड़ ही आड़ में समीप आ हाथ डेढ़ हाथ की दूरी से सिंह के पेट पर ऐसी गोली लगाई कि वह मछली की भाँति भूमि में लोट गया और दूसरी उसके कपाल पर ऐसी दी कि बिचारे ने साँस तक न ली।

देखिये, यह बिचारा यदि पहले ही घबरा जाता तो प्राण जाने में क्या सन्देह था।

पुराणों में जितनी नल, राम, युधिष्ठिरादि की कथाएँ हैं उनमें आदि से अन्त तक धैर्य्य का प्रकरण भरा है और जितने आज तक एक से एक पराक्रमी वीर और प्रतापी तथा यशस्वी पुरुष हो गये हैं, उनकी उन्नति का प्रधान कारण धैर्य्य ही मिला है।

पं० अम्बिकादत्त व्यासजी का लेख (परिवर्तित)।

Do your duty come what may.

जो कुछ हो, पर अपना कर्त्तव्य पालन करो ।

१. कर्त्तव्य क्या है । २. कर्त्तव्य पालन ही मनुष्यत्व और महत्व है । ३. इसके लिये क्या आवश्यक है—उदाहरण । ४. कर्त्तव्य नहीं पालने से परिवार और समाज की दुर्गति । ५. उपसंहार ।

१. जो सत्कार्य सम्पादन करने के लिये मुझे अपनी इच्छा से या दूसरों के द्वारा मिला है, वही हमारा कर्त्तव्य है । यही कर्त्तव्य साधन मनुष्य को इस संसार और समाज के बन्धन में बाँध देता है । यदि सन्तान का पालन मातापिता का कर्त्तव्य नहीं होता तो लोकसंख्या की वृद्धि में क्या क्षति होती—कहा नहीं जा सकता । राजा यदि प्रजा को सन्तान समझ पालन नहीं करता तो देश राष्ट्रविप्लव की आवासभूमि हो जाता। यदि समाज का प्रत्येक व्यक्ति परस्पर सहायता करना अपना कर्त्तव्य न समझता तो मनुष्य को सुख कभी भी नहीं मिलता। इस प्रकार जिधर दृष्टि ले जाओ, देखोगे कि मानवजीवन 'कर्त्तव्यकर्मों का समूह' है । जन्म से मरण तक मनुष्य कर्त्तव्य पालने ही में लगा रहता है । इन कर्त्तव्यों में कुछ तो ईश्वर की ओर से मिले हैं और कुछ को अपने ही से निश्चित कर लिया है ।

२. कर्त्तव्यपालन ही यथार्थ में मनुष्यत्व और महत्व है । संसार में भिन्न भिन्न प्रकार के मनुष्य हैं, परन्तु कर्त्तव्यपरायण की संख्या बहुत ही कम है । जिसे कर्त्तव्य का ज्ञान नहीं, वह मनुष्यपद के योग्य नहीं । जिसको इसका ज्ञान है, वही समाज का रक्षक और आदर्श है, वही सबों के सम्मान का पात्र है । इस पृथ्वी में जो जाति जितनी ही अधिक कर्त्तव्य-

परायण है वह उसी प्रकार उन्नतिशील है। समाज की उन्नति तभी होती है जब उसका प्रत्येक मनुष्य अपने अपने कर्त्तव्य को भलीभाँति पाले।

३. कर्त्तव्यपालन के लिये हृदय की दृढ़ता की बड़ी आवश्यकता है। जीवनसंग्राम में नाना प्रकार की विघ्नबाधाएँ उपस्थित होकर कर्त्तव्यपथ से भ्रष्ट कर देना चाहती है, परन्तु जो कर्मवीर है वह कभी भी विचलित नही होता। जिसका हृदय दृढ़ नही है, वही लज्जा, घृणा और भयवश कर्त्तव्यपालन नहीं कर सकता है, परन्तु जिसने यह समझ लिया है कि अमुक कार्य हमारा आवश्यक कर्त्तव्य है, उसे कोई भय लक्ष्य-भ्रष्ट नहीं कर सकता। इसी कर्त्तव्यज्ञान ने प्रातःस्मरणीय महात्मा ईश्वरचन्द्र विद्यासागर से वह वह कार्य कराये, जिनके करने के लिये कच्चे दिल वाले तैयार ही नहीं होते, यही कर्त्तव्य ज्ञान था जिससे काजी ने 'अपने बादशाह गयासुद्दीन' को कचहरी में बुलाया। कर्त्तव्यज्ञान ही के कारण हिन्दूधर्म-रक्षक महाराणा प्रताप का मान मुग़ल सम्राट् अकबर ने शत्रु होकर भी किया और यही कर्त्तव्यज्ञान था कि इंगलैंड के गैस-काइन जज ने अपने राजा के बेटे को कारागार का दण्ड दिया।

४. जो अपने कर्त्तव्य को नहीं पालता वह समाज की बड़ी हानि करता है। क्या परिवार, क्या समाज सभी कर्त्तव्य पर स्थित हैं। परिवार में यदि मातापिता अपने कर्त्तव्य न पालें और सन्तान उनकी आज्ञा से कार्य न करे तो क्या वहाँ सुख रह सकता है? जिस राज्य में राजा प्रजा के सुख के उपाय नहीं करता और प्रजा राजा के नियम नहीं मानती तो क्या वहाँ शान्ति विराज सकती है? अतः सभीको उचित है कि अपने अपने कर्त्तव्य को भलीभाँति पालें।

५. कर्त्तव्यपालन ही मानवजीवन का यथार्थ महत्व है। जिससे यह महत्व मिले उसके लिये हम लोगों को हृदय से चेष्टा करनी चाहिये। जिस देश के प्रत्येक व्यक्ति ने अपने अपने कर्त्तव्य पालने की चेष्टा की है उसके आगे विजयलक्ष्मी हाथ जोड़े खड़ी रहती है। ट्राफल्गर के युद्ध में अँगरेज़ी सेना का कर्त्तव्यपालन इसका ज्वलन्त आदर्श है। "हमारी मातृ-भूमि (इँगलैंड) आशा करती है कि इसका प्रत्येक पुत्र अपना अपना कर्त्तव्यपालन करे"—ज्योंही वीरवर नेलसन के मुँह से यह वाक्य निकला कि योद्धाओं में कर्त्तव्यपालन का जोश भर आया और उन्होंने बात की बात में शत्रुओं को पीस कर इंग-लैंड का मुख उज्ज्वल कर दिया!

Example is better than Precept.

उपदेश से उदाहरण उत्तम है।

१. भूमिका। २. कारण। ३. प्रभाव के स्थान। ४. उपदेश। ५. उपसंहार—बुरे उदाहरण।

१. किसी विषय में अपने को निपुण बनाने के लिये तुम उस विषय की सैकड़ों पुस्तकें उलट डालो या उपदेशकों के मुख से बार बार उपदेश भी सुन लो, परन्तु इनका फल तुच्छ जान पड़ेगा जब उस विषय का एक अच्छा उदाहरण तुम्हें दृष्टिगोचर होगा। अच्छी से अच्छी वक्तृता हमें ज्ञानसम्पादन करने में कुछ भी सहायता नहीं कर सकती जो सहायता हमें उदाहरण से मिलती है।

२. मनुष्यमात्र का स्वभाव है कि वह जैसा देखता है वैसा ही करता है। जो जो कार्य [illegible] होते हैं वह उन्हीं कार्यों को करता है। देखो, जब तक यूरोपनिवासी यहाँ नहीं आये

थे तब तक हम लोग कोटपैंट, बूटसूट, हैटवैट, कालर नेकटाई नहीं देखते थे, परन्तु अब अपने देशी भाइयों को पहनते भी देखते हैं। लोगों के दिये हुए उपदेश केवल कानों के लिये हैं, परन्तु उदाहरण आँखों के लिये। आँखें कानों से कहीं अधिक बल रखने वाली हैं। यही कारण है कि आँखों के सामने का एक छोटासा उदाहरण कानों से सुने हुए उपदेश के प्रभाव को मटियामेट कर देता है।

३. सर्वप्रथम स्थान, जहाँ मनुष्यों पर उदाहरणों का प्रभाव पड़ता है, घर है। बालक उन्हीं कार्यों को करते हैं जो उनके मावाप, भाई बहिन और बड़े लोग करते हैं। अतएव यह स्पष्ट है कि जिस परिवार के बड़े लोग कर्त्तव्यपरायण, धार्मिक, पवित्र, दयालु और सुशील होंगे उसके बालबच्चे भी वैसे ही होंगे। दूसरा स्थान पाठशाला है। यहाँ हम लोगों के जीवन का सुधार होता है। यदि शिक्षक और सहपाठी सज्जन हुए तो विद्यार्थियों में दुर्गुण का विकाश कभी हो ही नहीं सकता। अन्तिम स्थान सारा संसार है। हमारा समाज और हमारे पड़ोसी जैसी अवस्था में होंगे, हमारी अवस्था भी वैसी ही होगी। देखिये, इस समय भारत में उद्योग, अध्यवसाय और वीरता का अभाव सा हो गया है। क्यों? क्योंकि देखा-देखी से हमारा समाज ढीला पड़ गया है।

बड़े बड़े कवि, ज्ञानी, वीर और आदर्श पुरुष—सभी देखादेखी से हुए हैं और होंगे।

४. जब यह बात ठीक हो गई कि हम देखादेखी से कार्य करते हैं तब हमें उचित है कि अच्छे मनुष्यों के उदाहरण अपने सामने रक्खें और अच्छे आदर्श पर चलें। ये हमें बुराइयों से बचावेंगे और जीवनयात्रा का सुगम मार्ग दिखावेंगे।

ये हममें साहस भरेंगे और चरित्र सुधारेंगे। ये सदा हमारी भलाई किया करेंगे और आनन्द को बढ़ावेंगे।

५. बुरे उदाहरण संक्रामक रोगों के समान हैं। ये भारी विपत्तियों का सामना कराते हैं और दुराचारी बना कर नरक में ढकेल देते हैं। ये हमारे सभी सद्गुणों पर कालिख पोत देते हैं। अतः इनसे बचते रहना चाहिये और सदा अच्छे उदाहरणों से शिक्षा लेनी चाहिये।

Where there is a will there is a way.

जहाँ चाह, वहाँ राह।

१. परिचय। २ चाह के फल। ३. चाह के बिना हानि—हानिकारक सिद्धान्त। ४ कैसी चाह। ५. उपसंहार।

१. जब मैं किसी वस्तु पर दृष्टिपात करता हूँ तब मन में उसी क्षण दो बातें उत्पन्न हो जाती हैं—(१) ऐसी वस्तु की मुझे भी है आवश्यकता है। (२) ऐसी वस्तु की मुझे आवश्यकता नहीं। बस, जब आवश्यकता होती है तब चाह की उत्पत्ति होती है और जब चाह होती है तब उद्देश्य की सिद्धि के लिये राह भी सूझने लगती है।

२. यदि चाह नहीं होती तो बड़े बड़े महल, सामने का हरा भरा उद्यान, शिल्प के कलकारख़ाने, रेलगाड़ी, हवाई जहाज़, तार, बेतार का तार इत्यादि से हम लोग परिचित नहीं होते। मुझमें किसी बात की चाह अवश्य है, जिसने मुझे पढ़ने के लिये बाधित किया है। तपस्वियों का तप करना, व्यापारियों का अथाह और भयंकर समुद्रों में अपनी जान को हथेली पर रख कर जहाज़ चलाना, राजाओं का समर-भूमि में हत्याकाण्ड उपस्थित करना इत्यादि सभी कार्य चाह

से भरे हैं। जगत् में जो कुछ नूतन आविष्कार और निर्माण हो रहे हैं और जो कुछ उन्नति प्रत्येक विषय की हो रही है वे कुछ भी न हों यदि उन बातों को चाह न हो। यदि मुझमें चाह की कमी हो जाय तो उत्साह, उद्यम और अध्यवसाय सभी मुझसे बिदा हो जायँ और मेरी उन्नति रुक जाय—यहाँ तक कि पुरुषार्थ भी मुझसे ३ और ६ का नाता जोड़ लेवे।

३. जो संसार को असार मान लेगा वह संसार में क्या उन्नति कर सकेगा। जो अपने को ब्रह्म समझ लेगा उसको फिर किस उन्नति की आवश्यकता रहेगी? जिन्होंने यह समझ लिया कि जिस परमेश्वर ने गर्भ में भरणपोषण किया वह अब भी हमको बिना हाथ पैर हिलाये आहार देगा—जो जल में, थल में और आकाश में सब प्राणियों को आहार पहुँचाता है वह अवश्य हमारी सुधि लेगा, वे क्या पुरुषार्थ करेंगे?

"चाह घटी चिन्ता घटी, मनुआ बेपरवाह।
जाहि कछू ना चाहिये, सो शाहनपति शाह ॥२॥
अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम।
दास मलूका यों कहे, सब को दाता राम ॥३॥

ऊपर लिखे विचारों की धारणा जबसे हमारे देश में बनी तभी से चाह की भरपूर कमी हो गई है। इसी लिये भारतवासियों ने कुछ भी उद्यम न करके और अपने खानपान और जीवननिर्वाह का भार दूसरों पर डाल कर, विभवशाली आर्यावर्त्त को दरिद्र हिन्दुस्थान बना दिया। हाय! जिस आर्यावर्त्त के लिये संसार कहता था कि वहाँ सोने चाँदी की नदियाँ बहती हैं, अब वहीं के वासियों का उदरपूर्ण अमेरिका के ईसाइयों की खैरात पर होता है! भला बताइये तो क्या कारण है कि हिन्दुस्थान के एक चौथाई मनुष्य दोनों काल

भोजन करना जानते ही नहीं ? ऐसे करोड़ों स्त्रीपुरुष—बालक-बालिकाएँ हैं जिन्हें सालों भर एक समय भी भरपेट अन्न नहीं मिलता !

ऊपर लिखित दूसरे दोहे का भाव आधुनिक भारतवर्ष के लिये बहुत ही हानिकारी है। हाँ, इसका किंचित् अंशमात्र उन लोगों को लाभदायी हो सकता है जो तृष्णासागर में आठों पहर निमग्न रह कर तरह तरह के दुःख उठाते हैं, परन्तु ऐसे सिद्धान्त पुरुषार्थहीन और आलसी मनुष्यों के लिये बिगाड़ करने वाले हैं। यहाँ पर ऐसे ही सिद्धान्तों के कारण पिछले तीन चार सौ वर्षों में उत्साह, उद्यम और अध्यवसाय की बड़ी कमी हो गई है और हम लोग अवनति के मुख में पहुँच रहे हैं। अतएव ऐसे सिद्धान्तों को सदा के लिये दूर करना चाहिये। अब तो ऐसा समय आ गया है कि यदि हम लोग उद्योग न करें और आलसी बने रहें तो हमारा रहा-सहा नामनिशान भी संसार से मिट जायगा।

४. मुझे अच्छी अच्छी बातों की चाह होनी चाहिये। मुझे अपनी चाह को उचित और उदार बनाना चाहिये। जिन कार्यों से देश की भलाई, जाति की उन्नति और मनुष्यजन्म का कर्त्तव्य पूर्ण होवे, उन्हींकी चाह सत्य और उदार है। जिस कार्य की चाह से देशवासी आपस में एक दूसरे को प्रेम से चाहें और मिलें वही कार्य सच्चा और उन्नति के मार्ग पर चढ़ाने वाला है और ऐसे ही कार्यों की चाह से मनुष्य बड़ा भी होता है।

अनुचित कार्यों की चाह सर्वथा बुरी है। जितने बुरे कार्य हैं उनसे सदा अलग रहना चाहिये। विषयवासना अर्थात् विषयभोग की चाह सदा दुःख देने वाली है। इससे शान्ति

नहीं मिलती। जिस प्रकार आग में घी देने से वह अधिक प्रज्वलित होती है उसी प्रकार तृष्णा भी भोगविलास से बढ़ती है। विषयी जन जिसको तृप्ति मानते हैं वह तृप्ति क्षणिक है। पुनः अल्पकाल ही में इसकी चाह दूनी हो जाती है, परन्तु इससे सच्चा अखण्ड सुख कभी नहीं मिलता। अतएव यह उचित है कि हम लोग अपने चित्त को किसी काम्य वस्तु पर मोहित न होने दें।

"मोह सकल व्याधिन कर मूला।"

मोह ही दुःख का कारण है, यह मनुष्य को नाना प्रकार की आपत्तियों में फँसा डालता है, परन्तु मन को अपने वश में रखने से इन्द्रियों पर प्रभुत्व बना रहता है जिससे मनुष्य अनुचित विषयविलास से बच सकता है।

असम्भव बातों की चाह नितान्त अनुचित है। भला, जो कार्य अपनी योग्यता के बाहर है, वह कैसे सम्पादित होगा? क्या, हम लोग समुद्र को तैर कर पार कर सकते हैं? अतएव ऐसे कार्यों के लिये कभी भी कष्ट नहीं उठाना चाहिये।

५. हम लोगों को उचित है कि अपनी योग्यता का विचार करके किसी वस्तु की चाहना करें। कहीं ऐसा न हो कि व्यर्थ मृगतृष्णा में पड़ कर अपने को नष्टभ्रष्ट कर डालें, क्योंकि जो इस भँवरजाल में पड़ता है वह विचारशून्य हो जाता है, उसे यह नहीं सूझता कि मैं जिस वस्तु पर मोहित हूँ वह मुझे प्राप्त होगी नहीं—वह मेरी योग्यता के अनुकूल है या नहीं। वह उस पर ऐसा लग पड़ता है कि उपाय सोचते सोचते उसका ज्ञान जाता रहता है और अपने रूप को भूलने के कारण वह अनेक प्रकार की आपत्तियाँ, निन्दा और हँसी सहता है।

Honesty is the Best Policy.

(सचाई की ही नीति उत्तम है।)

१ परिचय। २ इससे लाभ। ३ इसके अभाव में दुर्गति। ४. सिद्धान्त।

१. मनुष्य जब संसार यात्रा की पगडण्डी पर पहले पहल पैर रखता है तब उसे प्रथम यह स्थिर कर लेना पड़ता है कि वह किस रीति से अपनी यात्रा सम्पन्न करेगा। वह जिस रीति का अवलम्बन करता है उसे ही नीति कहते हैं। मानवस्वभाव की विभिन्नता के कारण नीति के स्वरूप भी भिन्न भिन्न होते हैं। पूर्व सुकृत और सुशिक्षा के कारण जिनका अन्तःकरण निर्मल और सबल रहता है वे कर्मठ पुरुष तो निश्चय कर लेते हैं कि वे अपने समस्त लोकव्यवहार सचाई के साथ करेंगे। पर, जिनका अन्तःकरण अज्ञानतिमिर से आच्छन्न एवं आलस्य-कलुषित अतएव निर्बल रहता है वे दूरदर्शिता न रहने के कारण छल कपट का आश्रय लेने की ठान लेते हैं। यद्यपि दोनों प्रकार के पुरुषों का लक्ष्य एक ही रहता है—दोनों ही चाहते हैं कि हम सुख, शान्ति और स्वतन्त्रता के साथ अपना जीवन बितावें, तथापि दोनों की अभीष्ट सिद्धि में अन्तर हो जाता है। हमें यही विचारना है कि वह अन्तर कैसा है।

२. हम देखते हैं कि जो मनुष्य मन, वचन और कर्म तीनों की सचाई रखते हैं, अर्थात्—सच्ची ही बातों को सोचते, सच्ची ही बातें बोलते और तदनुसार सच्चे ही कार्य भी करते हैं, उनके लिये सफलता मानो पहले से ही धरी रहती है। ऐसे पुरुष यदि कहीं नौकरी करते हैं तो कुछ ही दिनों में आप देखेंगे कि वे अपनी सचाई से अपने स्वामी को प्रसन्न

करके बड़े से बड़े पद पर पहुँच गये। अगर वाणिज्य-व्यवसाय की दीवाल सचाई की नीव पर खड़ी की जाती है तो वह बड़ी सुडौल और टिकाऊ होती है। देखा जाता है कि थोड़े से भी मूलधन से प्रारम्भ किया गया कोई व्यापार थोड़े ही दिनों में चमक उठा और होते होते उसने विशाल आकार धारण कर लिया। इसका कारण क्या है? वही सचाई है। सच्चा मनुष्य जहाँ जाता वहीं उसकी प्रतिष्ठा होती है। वह दीन से भी दीन वेश में क्यों न हो उसकी सचाई की बात लोगों पर प्रकट होते ही सब का सम्मानभाजन बन जाता है। यदि ऐसा पुरुष छोटीसी झोपड़ी में निवास करता है तो इस हेतु उसके चित्त में कुछ भी अशान्ति नहीं है। अपने परिश्रम से जो थोड़ा बहुत पा लेता है उसीसे वह आनन्द और स्वतन्त्रता के साथ कालयापन करता है। क्यों? वह क्यों नहीं घबराता? उसको आनन्द कैसे मिलता है? आप यदि इसका कारण जानना चाहें तो सुनिये। सुखदुःख का लगाव अन्तःकरण से है। धनसम्पत्ति तो बाहरी वस्तु है। वह रहे चाहे न रहे। सच्चे सुखानुभव का हेतु सच्चा अन्तःकरण तो उसके पास है। तो फिर वह आनन्द क्यों न पाये? जब ऐसे साधुशील पुरुषों की संसारयात्रा समाप्त होती है तब वे विलक्षण सुखशान्ति के साथ न केवल संसार को ही, किन्तु अपने सुनाम को भी अपने पीछे छोड़ जाते हैं।

हम यह भी देखते हैं कि जिनका हृदय छलप्रपञ्च और दावपेंच से भरा रहता है, जो सोचते और हैं और बोलते और, और करते भी और ही हैं, उनको किसी कार्य में अच्छी सफलता होती ही नहीं, जो थोड़ी बहुत होती भी है, वह कुछ ही देर के लिये। ऐसे पुरुष को आज आप प्रयत्न करके किसी

बड़े पद पर बैठा दीजिये, कल ज्योंही उसके हृदय की कुटिलता प्रकट हो जायगी त्योंही वह नीचे गिर जायगा। कभी सुनते हैं कि वह बड़ी कोठी या बड़ा कारखाना एकाएक बैठ गया। ऐसा क्यों होता है? ऐसी घटनाओं का कारण प्रायः वही कुटिलाई रहती है। बालू की भीत कितने दिन ठहर सकती है? देखा जाता है कि कभी कभी कुटिल पुरुष भी लोगों में बड़ा आदर पा रहा है। पर कब तक? जब तक उसकी कलई नहीं खुली है। ऐसा मनुष्य लोगों को धोखा देने के लिये बहुधा बड़ी ठाटबाट और चमकदमक के साथ रहता है। किन्तु ज्योंही लोग जान जाते हैं कि यह भेंड़ की छाल ओढ़े भेंड़िया है त्योंही वह ठिकाने लग जाता। जो सत्यशील नहीं हैं वे स्वयं सब प्रकार से सम्पन्न रहने पर भी दूसरे की चीज कहीं कुछ पा जाँय तो हड़पने के लिये उद्यत रहते हैं। रहें क्यों नहीं? सन्तोष की जननी सचाई है। जब सचाई नहीं तब सन्तोष कैसा? ऐसे मनुष्य प्रायः कभी सच्चे स्वातन्त्र्यसुख का अनुभव नहीं कर सकते। क्योंकि इनके मर्म दूसरे न कहीं जान लेवें इस चिन्ता से ये बहुधा अपने भाव को दबा कर दूसरों के इच्छानुसार चलते हैं। फिर परतन्त्रता और किसे कहते? जिसके हृदयसुमन में साधुता की बास नहीं है वह बड़े से बड़े महल में बड़ी सजधज और बहुत से जनपरिजनों को आस पास में लेकर ही क्यों न निवास करता हो वह अपने को सुनसान श्मशान में आसीन समझता है। ऐसे को लक्ष्मी भी आनन्द नहीं दे सकती। क्यों? जिसके रहने से आनन्द का यथार्थ अनुभव होता वह चित्त की शान्ति उसके पास है ही नहीं। ऐसे पुरुष का अन्तकाल बड़ा दुःखद होता है। क्योंकि उस समय उसको अपनी धूर्तता की सब

पुरानी बात स्मरण आ जाती हैं और उनके कारण होनेवाली दुर्गति की चिन्ता से वह भीत और कातर हो जाता है ।

४. सच्चे और धूर्त दोनों प्रकार के पुरुषों की परस्पर तुलना करने के उपरान्त सिद्धान्त यह निकलता है कि जो कोई सच्चे सुख तथा सच्ची शान्ति और स्वतन्त्रता के साथ जीवन यापन करना चाहे तो वह केवल सच्चा रहकर अर्थात् केवल सचाई की ही नीति से ऐसा कर सकता है । जो छलप्रपञ्च और दाव-पेंच का अर्थात् कूटनीति का सहारा लेकर के जीवनसंग्राम में विजयलक्ष्मी को आलिङ्गन कर अपना यशोदुन्दुभि बजवाना चाहता है उसकी वह इच्छा केवल मृगतृष्णा है । जो सिद्धान्त एक व्यक्ति को लागू है वह एक जाति को भी और जो एक जाति को लागू है वह एक देश या राष्ट्र को भी । क्योंकि व्यक्तियों के समूह से ही जाति बनती है और जातियों के समूह से ही देश या राष्ट्र । जिस जाति के अधिकांश व्यक्ति सच्चे हैं वह सच्ची और जिसके अधिकांश कुटिल हैं वह कुटिल कही जाती है। इसी प्रकार जिस देश या राष्ट्र की अधिकांश जातियाँ सच्ची हैं वह सच्चा और जिसकी अधिकांश कुटिल हैं वह कुटिल कहलाता है। जैसे एक व्यक्ति के सम्बन्ध में वैसे ही एक जाति और देश या राष्ट्र के सम्बन्ध में भी कुटिलाई की नीति अधम और सचाई की नीति उत्तम समझनी चाहिये ।

पं० जीवनाथ राय ।

समालोचनात्मक लेख ।

(Sketches of Characters, Books, etc

बिहारबन्धु ।

हिन्दी भाषा जब नये रूप में आने लगी थी अक्षरने

जिस समय आधुनिक हिन्दी के इतिहास का आरम्भ होता है, तभी बिहार के स्वनामधन्य हिन्दी लेखक और कवि, स्वर्गवासी पण्डित केशवरामजी भट्ट ने "बिहारबन्धु" निकाला था। यह पत्र "भारतमित्र" से भी पुराना था। लाख बाधा-विघ्नों और उपद्रवों के होते हुए भी बिहारबन्धु ने इस प्रान्त की चालीस वर्ष से भी अधिक समय तक सेवा की। इसकी निर्भीक सम्मतियाँ, स्पष्टवादिता और प्रजाहितैषणा के भावों से भरी हुई होती थीं। राजा और प्रजा की इसने जैसी सेवा की, हिन्दी के प्रचार में जो सहायता पहुँचाई, अपना नाम सदा के लिये अमर बनाकर हिन्दी प्रेमियों के हृदय में जो प्रतिष्ठा जमा ली—वह इस प्रान्त के लोगों के भूल जाने योग्य नहीं है। सौभाग्य-क्रम से यह पत्र सदैव अच्छे अच्छे सम्पादकों के हाथों में रहा और इसका गौरव कभी मलिन न होने पाया। परन्तु इतना होते हुए भी आर्थिक कष्ट सदैव सताता ही रहा। पं० केशवरामजी ने इसके लिये कुछ आर्थिक व्यवस्था कर दी थी, इसीलिये उनके मर जाने पर भी यह पत्र बहुत दिनों तक देश एवं देसवासियों के साथ साथ देशभाषा की सेवा करता रहा।

कोई छः साल पहले एकाएक इसके सञ्चालक पं० हरदेव भट्टजी का देहान्त हो गया। यह धक्का सम्हाले न सम्हला और बिहारबन्धु की लीला सम्पूर्ण हो गई। इस तरह चालीस पैंतालीस वर्ष का बूढ़ा "बिहारबन्धु" चल बसा और बिहारी आँखें पसार कर देखते रह गये। किसी ने नहीं सोचा कि प्रान्त के लिये बिहारबन्धु कैसी अनमोल सामग्री था। अवसर हाथ में आने पर भी लोगों ने इसको पुनरुज्जीवित नहीं किया और बिहारबन्धु का नाममात्र ही बाकी रह गया!

युगों बाद अलीगढ़ का 'भारतबन्धु' फिर से उसी नाम

से हाथरस से निकलना आरम्भ हुआ है, परन्तु अबतक किसी ने बिहारबन्धु की सुध नहीं ली । शायद लोग यह सोचते हों कि वह मनहूंस नाम था उस नाम से पत्र निकालने से सफलता न होगी । अपनी अपनी समझ ही तो है । ईश्वर करे, 'बिहारबन्धु' फिर किसी दिन अवतार ग्रहण करे ।

पं० ईश्वरीप्रसाद शर्मा ।

रामचरित्र (Character of Ram.)

१ परिचय । २. आदर्श पुत्र । ३. आदर्श भ्राता । ४ आदर्श मित्र । ५ आदर्श पति । ६. आदर्श राजा ।

१. 'राम' के समान सर्वगुण सम्पन्न राजा किसी देश में और किसी काल में हुए या नहीं, हमें सन्देह है । उनमें सभी गुणों का एकत्र समावेश था । उनकी कर्त्तव्यनिष्ठा, धर्मपरता, पराक्रम और प्रजापालन पर सभी मुग्ध हो जाते हैं । वे सभी विषयों में अद्वितीय थे । सच्चे पुत्र होने के आदर्श वही थे, भाईपना उन्हीं में था, मित्रता उन्हीं से सीखते हैं, राजाओं के लिये वही आदर्श हैं और पत्नी के लिये पति का क्या कर्तव्य है, उन्हीं में पाते हैं ।

२. राम ने अपने मातापिता की आज्ञा कभी नहीं टाली । ज्योंही कैकेयी के मुँह से वनवास का वृत्तान्त सुना, अचल भाव से पिता का आदेश पालने के लिये कटिबद्ध हो गये और अधीर पिता को धैर्य रखने के लिये बड़ी ही चेष्टा की । यह समाचार पाते ही जब लक्ष्मण ने दशरथ और कैकेयी के विरुद्ध अस्त्र धारण करना चाहा तब राम ने उन्हें उचित कर्तव्य समझा कर शान्त किया और पिता की सत्यरक्षा के लिये वल्कल धारण कर सीता और लक्ष्मण समेत बन को प्रस्थान कर दिया । चित्रकूट में जब भरत उन्हें राज्यभार ग्रहण करने

के लिये मनाने गये तब उन्हें पिता के सत्य और अपने कर्तव्य के भङ्ग हो जाने की आशङ्का से यह बात नहीं स्वीकार की।

३. रामजी में भाईपना कूट कूट कर भरा था। जिस समय लक्ष्मण को शक्ति लगी थी उस समय का रामविलाप रामायण में पढ़िये कि कितना प्रेम टपकता है। वह विलाप करते हुए बोल उठे थे—"मैं अब किस मुँह से अयोध्या लौटूँगा। जगत् में अपयश चाहे भले ही सह लेता कि स्त्री रावण ने छीन ली, क्योंकि स्त्री के न होने पर कोई विशेष हानि नहीं थी! अब तो उस अपयश के साथ साथ तुम्हारा वियोग भी इस निठुर हृदय को सहता पड़ता है।"

यह प्रेम केवल लक्ष्मण ही तक नहीं था। वे भरत और शत्रुहन को भी उसी प्रेम से देखते थे। भरत के विषय में रामजी ने लक्ष्मण से कहा है—

"लखन तुम्हार शपथ पितु आना।
शुचि सुबन्धु नहिं भरत समाना॥"

४. रामजी ने जिनसे मित्रता की, उनमें सर्वदा अपना प्रेम रक्खा। शत्रुओं का नाश करके सुग्रीव को किष्किन्धा का राज्य देना और विभीषण को लंकेश बना देना, इसके स्पष्ट प्रमाण हैं।

५. रामजी का सती सीता के प्रति सच्चा अनुराग था। जब सीता दुष्ट रावण से हरी गई तब रामजी कुटी में आकर कैसे व्याकुल हुए थे—उन्होंने वियोग में कैसी कातरता दिखलाई थी—सीता की खोज में रोते और भटकते हुए जड़ पदार्थों से भी उन्मत्त की भाँति क्या क्या बातें पूछी थीं—इन सबों का वर्णन हमारी लेखनी नहीं कर सकती। समुद्र बाँध कर रावण को मार सीता का उद्धार करना सच्चे ही अनुराग का काम था।

प्रजारञ्जन के लिये जब रामजी ने सीता को वनवास दे दिया तब फिर उन्होंने किसी दूसरी रमणी से विवाह नहीं किया और एक पत्नीव्रत धर्म को पाल अपने को आदर्शपति प्रमाणित कर दिया। आपने अश्वमेध यज्ञ में स्वर्ण की जानकी निर्माण कराकर सस्त्रीक धर्माचरण के नियम को पालन किया।

६. रामजी के शासनकाल में प्रजा को किसी प्रकार का कष्ट और किसी प्रकार की असुविधा नही हुई। वे प्रजा के सुख और सम्पत्ति की उन्नति के लिये सदैव यत्नवान् रहे। उन्होंने प्रजा के प्रेम में पड़ निर्दोष सीता को भी वनवास दे दिया। लङ्का में जब मेघनाद मारा गया तब रावण ने पुत्र की अन्त्येष्टि क्रिया के लिये एक सप्ताह युद्ध बन्द रखने को राम जी से अनुरोध किया। आपने शत्रु के अनुरोध की रक्षा कर सच्ची उदारता का परिचय दिया। जब रावण मृत्युशय्या पर था तब रामजी ने उससे राजनीति सीख कर—"शत्रु से भी उपदेश ग्रहण करना चाहिये" इस राजधर्म को पाला।

राम राज्य कर सुख सम्पदा। बरणि न सकहिं फणीश शारदा॥
एक नारिव्रत सब नरझारी। ते मन वचन क्रम पति हितकारी॥
बैर न कर काहू सन कोई। राम प्रताप विषमता खोई॥
फूलहिं फलहिं सदा तरु कानन। रहहिं एक सँग जग पंचानन॥
ससि सम्पन्न सदा रह धरणी। त्रेता भै सतयुग की करणी॥

गोस्वामी तुलसीदास के काव्य।

गोस्वामी जी ने निम्नलिखित ग्रन्थों की रचना की है—रामचरितमानस (रामायण), कवितावलि रामायण, गीतावली रामायण, छन्दावली रामायण, बरवै रामायण, ध्रुव-प्रश्नावली, पदावली रामायण, कुंडलिया रामायण, छप्पै

रामायण, करखा रामायण, रोला रामायण, झूलना रामायण, रामाज्ञा, रामलला नहच्छू, जानकी मंगल, पार्वतीमंगल, कृष्ण गीतावली, हनुमान बाहुक, संकटमोचन, हनुमान चालीसा, राम सलाका, रामसतसई, वैराग्य संदीपनी, विनयपत्रिका, तुलसीदास की बानी, कलिधर्माधर्मनिरूपण, दोहावली, ज्ञान को परिकरण, मंगल रामायण, गीताभाषा, सूर्य्यपुराण, राम मुक्तावली और ज्ञानदीपिका। इनमें से बहुत से ग्रन्थ परमोत्तम हैं और उनमें भी रामचरित मानस, कबितावली, गीतावली, कृष्णगीतावली, हनुमान बाहुक और विनयपत्रिका बहुत ही अमूल्य ग्रंथरत्न हैं। इन सब में भी रामचरितमानस की बराबरी कोई नहीं कर सकता, बरन् यों कहना चाहिये कि इसकी समता हिन्दीसाहित्य में क्या शायद किसी भी भाषा का कोई भी काव्यग्रंथ नही कर सकता। हमारे इस कथन पर चौंकना न चाहिये। हम पूर्ण रीति पर आगा पीछा विचार कर शांत भाव हो ऐसा कहने का साहस करते हैं। अवश्य ही हमने संसार की सभी भाषाओं का कौन कहे थाड़ी सी भाषाओं का भी तत्त्व नही जान पाया है, पर जहाँ तक हम तुच्छ ज्ञानवालों ने देखा सुना, हमने किसी भाषा में कोई कवि गोस्वामीजी से बढ़ कर नहीं पाया और न कोई ग्रन्थ उनके रामच्चरितमानस के सामने ठहर सका। इस ग्रन्थरत्न में बहुत से कवियों ने अपने क्षेपक भी लगा दिये हैं, परन्तु उनके कारण रामायण में सिवाय दोष के कोई विशेष चमत्कार नहीं आ सका। उपर्युक्त नामावली में भी कई ग्रन्थों के गोस्वामी जी कृत होने में संदेह है। गोस्वामीजी ने कविता चार पृथक् पृथक् प्रणालियों की रची हैं और इनके ग्रन्थ देखने से विदित होता है कि मानो वह चार भिन्न भिन्न उत्कृष्ट कवियों की रचनाएँ

हैं। उपमा और रुपक इनके बहुत ही विशद हैं और उनका हर स्थान पर आधिक्य भी है।

इसी प्रकार इस महाकवि ने भाषाएँ भी चार प्रकार की लिखी हैं। इन कथनों के उदाहरणस्वरूप इनके रामचरित-मानस, कवितावली, कृष्णगीतावली और विनयपत्रिका नामक ग्रन्थ कहे जा सकते हैं और इन्हीं चारों ग्रन्थों की प्रणालियों पर इनके प्रायः सभी शेष ग्रन्थ विभाजित किये जा सकते हैं।

गोस्वामीजी का सर्वोत्कृष्ट गुण इनकी अटल भक्ति है, जो स्वामी-सेवकभाव की है। इन्होंने अपने नायक तथा उपनायकों के शील गुण खूब ही निबाहे हैं और ब्राह्मणों की सदैव प्रशंसा की है, परन्तु साधारण देवताओं का पद उच्च नहीं रक्खा है। गोस्वामीजी ने निर्गुण सगुण ब्रह्म, नाम, भक्ति, ज्ञान, सत्संग, माया आदि का बड़ा ही गम्भीर निरूपण किया है। ये महाशय भाग्य पर बैठना निंद्य समझते और उद्योग की प्रशंसा करते थे। इनके मत में प्रत्येक कविता करनेवाले का रामगुणगान करना आवश्यक कर्तव्य है। मिश्रबन्धुविनोद।

मिश्रित लेख (Miscellaneous Essays.)

छुट्टी कैसे बितानी चाहिये।

१. परिचय। २. छुट्टी क्यों मिलती है? ३. छुट्टी में विद्यार्थी के कार्य। ४ उपदेश। ५ उपसंहार।

१. प्रायः प्रत्येक स्कूल में समय समय पर पर छुट्टियाँ मिला करती हैं। इनमें गर्मी की छुट्टी, पूजा की छुट्टी और बड़े दिन की छुट्टी मुख्य हैं। इन मुख्य छुट्टियों में गर्मी की छुट्टी प्रायः १ मास से २—२॥ मास तक होती है।

२. मनुष्य का शरीर एक मशीन के समान है। यदि मशीन सदा काम करती रहे तो वह कुछ ही दिनों में बेकार ह

जायगी। इसी कारण बीच बीच में उससे काम नहीं लिया जाता और उसके कलपुर्जे ठीक किये जाते हैं। इसी प्रकार हम यदि अपने शरीर को या उसके किसी अंग को सदा काम में लगाये रहें तो वह शरीर या वह अंग कुछ ही दिनों में अयोग्य हो जायगा। विद्यार्थी स्कूलों में सदा पढ़ने में लगे रहते हैं, उनको अपने मस्तिष्क से अधिक काम लेना पड़ता है और अन्य अंगों से कम। इसलिये उचित है कि छुट्टियाँ देकर उनकी मानसिक और शारीरिक थकावटों को मिटावें, जिससे वे फिर आगे के लिये योग्य हो जायँ। हाँ, छोटी मोटी कई छुट्टियाँ जातीयता और धर्म के कारण भी मिला करती हैं।

३. विद्यार्थियों को उचित है कि जब वे छुट्टी में घर जावँ तब सबसे पहले अपने स्वास्थ्य पर ध्यान देवें। प्रति दिन ८-९ घंटे से कम नहीं सोवें। प्रातःकाल ही उठ कर नित्यकर्मों को समाप्त करें और खुले मैदान में टहलें या कोई व्यायाम करें। भोजन के बाद दुपहर को किसी शान्तिमय और शीतल स्थान में बैठ कर भारत के वीरों और ऋषियों की जीवनियों और कीर्तियों का मनन करें और उनसे शिक्षा लेकर प्राचीन और नवीन भारत की तुलना करें। जब संध्या की ठंढी हवा चलने लगे तब अपने ग्राम या नगर में घूम घूम कर ग़रीब भाइयों की सुधि लें, उन्हें यथासाध्य सहायता करें, लोगों को विद्या पढ़ने का महत्त्व बतावें और उन्हें अपने प्राचीन गौरव की याद दिला सजग कर दें। विद्यार्थियों को उचित है कि वे अपने अपने महल्ले या गाँव में एक एक वाचनालय स्थापित करावें और उसमें ऐसे समाचारपत्र और ग्रन्थ मँगवावें, जिन्हें पढ़ कर लोग अपने कर्त्तव्य जानें। सूर्यास्त होते समय वे बच्चों के खेल में भाग लें और प्रकृति की शोभा का भी अनुभव करें।

रात को सोने से १ घंटा पहले ही भोजन कर अपने परिवार के छोटे छोटे लड़के लड़कियों को सदुपदेश दें और मातृभूमि के प्रति प्रेम उत्पन्न कराने वाली बातें उन्हें सुनावें।

यदि पढ़ाई में कुछ कमी रह गई हो तो उसे छुट्टी के पहले ही भाग में पूरा कर लो और अन्तिम भाग उपर्युक्त कार्यों में लगाओ और यदि पाठ पूर्ण हो तो आरम्भ ही से बताई हुई रीत पर चलो। जब कुछ दिन रहें तब पाठों को देख जाओ।

४. प्यारे विद्यार्थियो, छुट्टियों को यदि तुमने ऊपर कही रीति से बिताया तो समझ लो कि तुमने अपनी भलाई के साथ साथ देश की भी बड़ी भलाई की। यह समझ रक्खो कि मातृभूमि तुमसे बहुत कुछ आशा रखती है। उसकी यह आशा, देश और समाज के अज्ञान को दूर करके, समाज में ऐक्य स्थापन करके और लोगों को कर्त्तव्य सिखा के तुम बहुत कुछ पूरी कर सकते हो। तुम ही भारत के भावी विद्वान् और नेता बनोगे, तुम्हारे ही ऊपर भारत माता की जवाबदेही रहेगी। अतः अभी से जवाबदेही लेने के लिये योग्यता प्राप्त करो।

५. विद्यार्थियों के संरक्षकों और मातापिताओं से हमारी प्रार्थना है कि छुट्टियों में वे अपने बच्चों को किताबों के कीड़े न बनने दें। उनके शरीर के उचित विकाश पर ध्यान देकर उन्हें शक्तिशाली और कर्मवीर बनावें, जिससे वे मातृभूमि के सच्चे सेवक बनकर उनके मुख को उज्वल कर सकें। नहीं तो, वे निर्बल, कमज़ोर और अयोग्य होकर व्यर्थ ही समाज के भार हो जायँगे।

उपन्यास पढ़ना (Novel Reading.)

१. परिचय। २. लाभ। ३. हानि। ४. विद्यार्थियों को उपदेश। ५. उपसहार।

१. हमारे यहाँ नाटक, इतिहास, जीवनचरित, यात्रावर्णन

और काव्य इत्यादि के साथ साथ उपन्यास की भी गणना की जाती है। उपन्यासों में मन लुभाने वाली काल्पनिक कहानियाँ रहा करती हैं जो सर्वसाधारण की समझ में आने वाली भाषा में लिखी रहती हैं।

२. जब मन शारीरिक और मानसिक परिश्रम से थक कर उकता जाता है तब वह विश्राम चाहता है। यह विश्राम उपन्यास पढ़ने से मिलता है। उच्च आदर्श के उपन्यासों से उत्तम उदाहरण और भिन्न भिन्न स्थानों के अच्छे आचार-व्यवहारों का पता लगता है। उपन्यास के पढ़ने से कल्पना शक्ति का विकाश और भाषा का ज्ञान होता है तथा लिखने की शक्ति बढ़ती है।

बहुत से उपन्यासों से सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक दशाओं का चित्र सामने खिंच जाता है जिससे उनकी शुद्धि हो जाती है।

३. जिसकी बुद्धि कच्ची है उसको उपन्यास पढ़ने से नाना प्रकार की हानियाँ होती हैं। उसका समय वृथा जाता है। वह इसकी चाट में अपना कर्तव्य भूल जाता है। जिस विद्यार्थी को उपन्यास पढ़ने की चाट लग जाती है, उसको अपने पाठ में मन नहीं लगता। सदा उसे कथा कहानियों की पुस्तकें पढ़ने की इच्छा लगी रहती है। बहुत से उपन्यासों में अश्लील बातें भरी रहती हैं, जिनसे विद्यार्थियों में बुरेबुरे गुण आ जाते हैं। वे विचारशक्ति से हाथ धो बैठते हैं, जिससे अन्त में वे कोरे के कोरे रह जाते हैं।

४. विद्यार्थियों को उचित है कि वे उपन्यास पढ़ने की ओर न झुकें। उनके लिये उपदेशप्रद बहुत से ग्रन्थ लिखे गये हैं, उन्हें पढ़ा करें। अपने शिक्षकों और गुरुजनों से राय लेकर

अच्छी अच्छी पुस्तकें चुन लें और उन्हें इस भाँति पढ़ें कि चरित्र पर अच्छा प्रभाव पड़े। दो चार अच्छे अच्छे सामाजिक और देश सुधार के उपन्यास निकले हैं जिन्हें ऊँची श्रेणी के विद्यार्थी अवकाश के समय में पढ़ सकते हैं।

५. शोक के साथ लिखना पड़ता है कि हमारे कई विद्यार्थी, जिन पर देश का भविष्य निर्भर है, उपन्यास पढ़ने की बुरी लत में पड़ कर अपने कर्तव्यकर्म को भूलते जा रहे हैं और अपने कुल और समाज को कलङ्कित कर रहे हैं। उनसे हमारी प्रार्थना है कि वे देश और समाज के सुधार की पुस्तकों को पढ़ें और भारतमाता के सच्चे पुत्र बनने की चेष्टा करें।

बच्चों को गहने पहनाना।

१ परिचय। २ झूठी समझ। ३ हानि। ४ सच्चा गहना। ५ उपदेश। ६ उपसंहार।

१. इस देश में सुकुमार बच्चे गहनों से लदे दीखते हैं। न मालूम कब से यह रीति चली। हाथ में बल्ला, कान में सोना, गले में कंठा, कमर में करधनी, पाँव में कड़ा इत्यादि पहना कर हम अपने बच्चों को खूब सजते हैं। यदि कहीं विवाह में गये तो क्या पूछना! अड़ोस पड़ोस से गहने माँग माँग कर पहना देते हैं।

२. जहाँ तक हमारी धारणा है, हम समझते हैं कि माता-पिता अपने बच्चों को रूपवान् बनाने की इच्छा से गहने पहनाते हैं। उनका यह भी आशय होता है कि हमें कोई दरिद्र न समझे, हमारी प्रतिष्ठा भंग न हो और हम समाज में दूसरों से हीन न समझे जायँ।

३. हमारी समझ में बच्चों को गहना कभी भी नहीं पहनाना चाहिये। इससे वे अकड़ कर चलते हैं, उनमें अभिमान

का बीज अंकुरित हो जाता है। वे गहने पहन कर दूसरों से अपने को बड़ा समझने लगते हैं और नम्रता को दूर भगा देते हैं। वे अभिमानी बन कर विद्या पढ़ना नहीं चाहते और अन्त में कोरे के कोरे रह जाते हैं।

इसी गहने के कारण प्रति वर्ष सैकड़ों निरपराध बच्चों के प्राण जाते हैं। चोर डाकू और लोभी, लालच में पड़ कर उन्हे मार डालते हैं। यदि मातापिता अपने प्यारे बच्चों को गहने नहीं पहनाते तो उन्हें सिर पीट कर पछताना नहीं पड़ता और बच्चे निडर होकर इधर उधर घूम सकते।

गहनों से बच्चों का शरीर बढ़ने नहीं पाता। उनके हाथों और पैरों में गहनों की रगड़ से चिन्ह पड़ जाते हैं। कंठे और चकतियों से छाती फैलने नहीं पाती। जिन जिन अंगों पर गहने रहते हैं वे मैले हो जाते हैं और उनमें रुधिर का बहाव भी भली भाँति नही होता। जिससे वे सदा के लिये स्वास्थ्य से हाथ धो बैठते हैं।

४. बच्चों का सच्चा आभूषण विद्या है। विद्या से बच्चों को सज दीजिये, देखिये वे कैसे सुन्दर लगते हैं! वे जहाँ जायँगे आपकी प्रतिष्ठा बढ़ावेंगे। जब वे दूसरों से नम्रता से व्यवहार करेंगे तब वे दूसरे, आपका नाम प्रेम से लिया करेंगे। जो बच्चा विद्या से हीन है उसको सैकड़ों गहने पहना दीजिये, वह मूर्ख ही रहेगा और उसे देख कर लोग आपको और आपके बच्चे को अभिमानी ही समझेंगे।

५. जो लोग अपनी अमीरी दिखलाने के लिये अपने बच्चों को गहनों से सजते हैं उनसे हमारी प्रार्थना है कि वे इस भूल को त्याग दें और भूखों का भरणपोषण करके अपने धनाढ्य-पने का परिचय दें। वे समझ रक्खें की प्रतिष्ठा गुणों की होती

है, धन की नहीं। यदि इस पर भी अपने धन को प्रकट ही करना चाहें तो अपनी आमदनी का हिसाब लड़कों के गले में लटका दिया करें। इससे संसार को उनके धन की ख़बर भी मिल जायगी और बच्चों को हानि भी न होगी।

६. हम लोगों को उचित है कि अपने बच्चों के स्वास्थ्य पर ध्यान रखकर उन्हें साफसुथरे रक्खा करें और विद्यारूपी भूषण से सजकर देश के सच्चे सेवक बना दें। इसीमें हमारी अमीरी है—इसीमें हमारी प्रतिष्ठा है। बहुत से लोग अपने बच्चों को गहनों से तो लाद देते हैं और कपड़ों की खबर भी नहीं लेते। यह भूल नहीं, बल्कि मूर्खता है।

मद्यपान (शराब पीना)।

१. आरम्भ। २ शराब क्या है। ३. मद्यपान से हानि। ४. प्राचीनकाल में सोमरस का पान। ५. उपसंहार।

१. व्यसन का अर्थ 'आदत' है—ऐसी आदत जो कठिनता से छूटे और जिसके बिना मन को चैन न मिले। जैसे—शिकार का व्यसन, पढ़ने का व्यसन, चोरी करने का व्यसन। अच्छी आदतें डालना तो सभी को उचित है, परन्तु दुर्व्यसन के पंजे में पड़ना किसीको उचित नहीं। मद्यपान भी एक दुर्व्यसन है। इसके पंजे में फँस कर लाखों घर बिगड़ गये हैं।

२. मदिरा एक मादक पदार्थ है। यह जव और महुए इत्यादि वस्तुओं को सड़ा कर बनाई जाती है। सड़ाने से इसमें एक प्रकार का कड़वापन आ जाता है।

३. मदिरा पीने से मस्तिष्क को क्षोभ और बुद्धि को जड़ता प्राप्त होती है। इससे शरीर पर उग्र प्रभाव पड़ता है तथा रक्त में गर्मी अधिक हो जाती है जिससे मन में कुछ उमंग सी प्रतीत होती है। इस उमंग में मनुष्य को अपना पराया कुछ

भी नहीं सूझता, वह जो चाहे सो कर बैठता है। उसके उत्तम आचार विचार सब भ्रष्ट हो जाते हैं।

मदिरा पीनेवाले का चित्त ठिकाने नहीं रहता, अतएव वह अपने दैनिक कार्यों का उचित रूप से सम्पादन नहीं कर सकता है। उसका बहुमूल्य समय योंही निकल जाता है और अंत में पछताने के सिवाय उसको कुछ हाथ भी नहीं लगता।

मदिरा मनुष्य की पाचन शक्ति को बिगाड़ देती है, जिससे शरीर रोगों का घर हो जाता है। इसकी चाट ऐसी बुरी है कि बिना पिये कल नहीं पड़ती। ज्यों ज्यों यह चाट बढ़ती जाती है शरीर शिथिल होता जाता है और हाथपैर बेकाम हो जाते हैं। देखा गया है कि जो बड़े शराबी हैं उन्हें लकवा, बात रोग, मूत्र रोग, चर्मरोग और कम्पवायु इत्यादि बहुत सी बीमारियाँ हो गई हैं और उन्होंने इस संसार को शीघ्र ही अपने से खाली कर दिया है।

मदिरा पीनेवाले अपनी चाह को रोक नहीं सकते, इसलिये वे अपनी सारी सम्पत्ति इसीके पीछे स्वाहा कर देते हैं। जब निर्धन हो जाते हैं तब वे चोरी, कपट इत्यादि नाना प्रकार के दुराचारों के पाले पड़ जाते हैं तथा उनके बालबच्चे भूखों मारे-मारे फिरते हैं।

मदिरा पीनेवाले धर्म को चुनौती दे देते हैं। हमारे धर्म-शास्त्रों ने मद्य को परम निषेध माना है। सामाजिक प्रथा भी इस दुर्व्यसन को घृणा की दृष्टि से देखती है और पीनेवाले का मान नही करती।

४. प्राचीनकाल में आर्य लोग सोमरस का पान करते थे, जो सोमलता से निकाला जाता था। सोमरस वस्तुतः एक औषधि है जो ब्राह्मी आदि बूटियों की भाँति बुद्धि के बढ़ाने

में बड़ी लाभदायक है। इसी 'सोमरस' पर दृष्टि करके आज-कल बहुत से मनुष्य यह कह बैठते हैं कि प्राचीनकाल में भी भारतवासी मद्यपान करते थे, परन्तु उनका यह कथन ठीक नहीं जँचता। क्योंकि जिस प्रकार ऊँख के रस को कोई मदिरा नहीं कह सकता उसी प्रकार 'सोमरस' को भी मदिरा कहना उचित नहीं।

५. 'मद्यपान' से सब मनुष्यों को बचना चाहिये। हम लोगों का यह प्रधान कर्तव्य है कि मद्य की हानि दिखा कर लोगों को सावधान करें तथा बच्चों को ऐसी शिक्षा दें जिससे वे सदा मद्य पीने से बचे रहें। इसी कार्य के लिये कई स्थानों में सभाएँ हो रही हैं। स्कूलों में भी ऐसी पुस्तकें पढ़ाई जाने लगी हैं जिनके पढ़ने से बालकों की प्रवृत्ति मद्य की ओर न हो।

प्यारे भारतवासियो, यदि अपनी जातीयता रखना चाहते हो तो 'मद्य' को दूर ही से प्रणाम करो। हाय!

जो मस्त होकर 'तत्वमसि' का गान करते थे सदा—
स्वच्छन्द ब्रह्मानन्द रस का पान करते थे सदा।
मद्यादि मादक वस्तुओं से मत्त हैं अब हम वही,
करते सदैव प्रलाप हैं, सुधबुध सभी जाती रही! ॥

श्री मैथिलीशरण गुप्त।

बाल्यविवाह (Early Marriage.)

१. परिचय। २ कारण। ३. इसके प्रभाव से विवाह के विषय में अभी भी हमारी बुरी धारणा। ४. हानि। ५. रोकना—शास्त्रों का अभिप्राय—हमारी सम्मति।

१. शोक के साथ लिखना पड़ता है कि हमारी जाति कुरीतियों का केन्द्र कही जा सकती है। हाय! जो जाति संसार भर से प्रतिष्ठा पाती थी—जो सबों को शिक्षा देती थी

वही आज इस गिरी दशा में है! अब हमारी यह दशा क्यों नहीं सुधरती? हम क्यों नहीं उन्नति के पथ पर अग्रसर होते? मातृभूमि के सच्चे सेवक स्वर्गीय पं० बालकृष्ण भट्टजी बहुत ही ठीक कह गये हैं—

"किसीका मत है, मुल्क की तरक्की औरतों की तालीम से होगी, कोई कहता है विधवाविवाह जारी होने से भलाई है, कोई कहता है खानेपीने की कैद उठा दी जाय तो हिन्दू लोग स्वर्ग पहुँच इन्द्र का आसन छीन लें, कोई कहता है विलायत जाने से तरक्की होगी, कोई कहता है कि फ़िज़ूलखर्ची कम कर दी जाय तो मुल्क अभी तरक्की की सीढ़ी पर लपक के चढ़ जाय। हम कहते हैं इन सब बातों से कुछ न होगा जब तक बाल्यविवाहरूपी कोढ़ हमारा साफ़ न होगा।"

२. यह बाल्यविवाहरूपी कोढ़ हममें घुसा क्यों? इस पर विचार करना चाहिये। इतिहास हमें बताता है कि जब यवनों के अत्याचार से कन्याओं के सतीत्व की रक्षा असम्भव हो गई थी तब हमारे आचार्यों ने देशकाल का विचार कर बाल्य-विवाह की प्रथा चलाई।

३. इस प्रथा से उस समय मानमर्यादा की थोड़ी बहुत रक्षा हुई तो सही, परन्तु अब यह हमारे प्राण लेने पर उद्यत जान पड़ती है। प्रभाव पड़ते पड़ते हमारे संस्कार ऐसे हो गये हैं कि हम अब इसको धर्मपुस्तकों की आज्ञा समझने लगे हैं और "अष्टवर्षा भवेद्गौरी ·" इत्यादि प्रमाणों से 'बाल्यविवाह' को उचित बता रहे है। जिसके घर में सन्तान कुछ भी सयानी हो जाती है उस घर को हम कलंकित समझने लगे हैं।

हम लोग इतने गिर गये हैं कि वृक्षों की ओर जितना ख़याल है उतना भी अपनी सन्तान की ओर नहीं है। वृक्ष

रोपने के समय इस बात पर बहुत ध्यान रहता है कि वृक्ष पुष्ट हों, हरे भरे हों, उनकी जड़ें और डंटियाँ ऐसी दृढ़ हों कि समय पर अच्छे फल दे सकें। उनके रोपने के लिये भूमि तैयार की जाती है। भूमि से कंकड़ और पत्थर निकाल दिये जाते हैं और हर तरह उनकी रक्षा की जाती है। परन्तु क्या हम सन्तानों की कुछ भी रक्षा करते हैं? जो चेतन वृक्ष हैं, जिनसे चेतनफल की आशा है और जिनसे अपना वंश ही नही, बल्कि देश उज्ज्वल हो सकता है—क्या उन सन्तानों को, विवाह के पूर्व विद्वान् और बलवान् बनाने की कोशिश करते हैं? नहीं, कदापि नहीं।

४. इस कुप्रथा ने बड़े ही अनर्थ फैलाये हैं। समाज और जाति जिन बच्चों से हरीभरी होती, वे स्वयं कच्ची उम्र में विवाह के कारण बलबुद्धि खो बैठते हैं और ब्रह्मचर्य की कमी से आत्मनिर्भरता उनके पास तक नहीं फटकने पाती। भला, ब्रह्मचर्य नहीं तो स्वास्थ्य, बल, तेज और विद्या उनको कहाँ, और जब ये ही नहीं तब वे परावलम्बन की बेड़ी न पहनें तो क्या करें? लड़कियाँ कम उम्र में सन्तान पैदा करने के कारण अनेक प्रकार के रोगों से ग्रस्त हो जाती हैं और गृहस्थाश्रम दुःखाश्रम बन जाता है। इतिहास से पूरा पता लगता है कि जब से दुधमुहों का ब्याह जारी कर दिया गया तब से आज तक हमारी घटती ही होती जाती है और हम गीदड़ों की भाँति निकम्मे होते जा रहे हैं। यह बाल्यविवाह का ही फल है कि हजारों विधवाएँ हमारे घरों में जारबेजार रोती हुई दिन काट रही हैं।

५. उपर्युक्त बातों पर विचार करने से जान पड़ता है कि यदि हम अपनी उन्नति चाहते हैं—यदि देश की भलाई चाहते

हैं तो हमें इस कुरीति के रोकने का यत्न करना चाहिये। अब वैसा अत्याचार भी नहीं है, जिससे यह रीति फिर चलने दी जाय। उस समय जिस प्रकार हमारे आचार्यों ने देशकाल देख कर बाल्यविवाह करने के लिये नियम बना दिये थे उसी प्रकार अब भी उचित है कि इस समय के आचार्य नियम बना कर बाल्यविवाह को रोक दें और हिन्दूशास्त्रों ने जो उपदेश दिये हैं उनके अनुसार आदर्शविवाह की रीति चलावें।

शास्त्रों का अभिप्राय है कि पहली अवस्था में विद्योपार्जन करे और दूसरी में योग्य बन कर विवाह करे। वैद्यकशास्त्र की सम्मति है कि २५ वर्ष से कम अवस्था वाले पुरुष और १६ से कम अवस्था वाली स्त्री की सन्तान दुर्बल और अल्पायु होगी। जहाँ ब्रह्मचर्याश्रम का वर्णन है वहाँ कम से कम २५ वर्ष तक ब्रह्मचारी रहने की आज्ञा है।

हमारे बहुत से भाई कहेंगे कि आजकल ब्रह्मचर्याश्रम के नियमों को पूर्णरूप से पालन करने में अनेक कठिनाइयाँ हैं और इसलिये २५ और १६ का नियम रखना बहुत कठिन होगा। हम कठिनाइयों को स्वीकार करते हैं और हमारी सम्मति है कि इस समय कम से कम १९–२० वर्ष में लड़कों का और १३–१४ वर्ष की लड़कियों का विवाह होवे। यदि अधिक उम्र में विवाह होने लग जाय तो बालविधवाओं की संख्या एकदम लोप हो जाय।

प्रतिवर्ष विधवावृन्द की संख्या निरन्तर बढ़ रही,
रोता कभी आकाश है फटती कभी हिल कर मही।
हा! देख सकता कौन ऐसे दग्धकारी दाह को?
फिर भी नहीं हम छोड़ते हैं बाल्यवृद्ध विवाह को॥

श्रीमैथिलीशरण गुप्त।

निबन्धरचना।

दूसरा खण्ड।

(इस खण्ड में प्रत्येक लेख के विषयविभाग और प्रायः सभी विभागों के संक्षिप्त विवरण दिये गये हैं)

१. वर्णनात्मकलेख (Descriptive Essays.)

चेतनपदार्थ (Animate Subjects.)

भैंस (Buffaloe.)

१. जाति—गाय का लेख देखो, पाड़ा-पाड़ी। २. आकार—गाय से बड़ी, दृढ और स्थूल अग, नीचे आठ दात, अगल बगल में ४-४, सींग घूमी हुई और मजबूत, कधौल और लोर नहीं, काला या भूरा रग, बाल कड़े, बड़े और छेहर, खुर फटे, टागें छोटी, दूध गाय से अधिक। ३. निवास-स्थान—एशिया, जगलों में भी, गुजरात की अच्छी। ४ स्वभाव और गुण—गाय के समान, बच्चे में प्रेम कम, मालिक के स्वर की पहचान, घास और गर्मी पसद नहीं, मिलनसार, गर्मी में तालाब में डुब्बी, आयु ३०-४० वर्ष, १२ महीने पर बच्चा। ५ उपकार—दूध, दही, घी, मिठाई, एक भैंस से ही गरीब की जीविका गाय का लेख देखो. भैंसे का कम मोल, बैल के समान लाभदायक। ६—७ (गाय का लेख देखो)।

बैल (Ox.)

१. जाति—गोजाति, चतुष्पद, स्तनपायी, पागुर करनेवाला, मेरुदण्डवाला, शाक भोजी। २. आकार=गाय के समान (गाय का लेख देखो)। ३. निवास-

स्थान—गाय का लेख देखो। ४. स्वभाव और गुण—बलिष्ठ, गाय का लेखदेखो। ५-६-७ (देखो, गाय का लेख)।

भेड़ (Sheep.)

१. जाति—गाय का लेख देखो। २. आकार प्रकार—बकरी से कुछ छोटा, काले, भूरे या उजले बाल, सींग छोटी-भेड की घूमी हुई, गठीला और बली शरीर, टाँगें पतली, खुर फटे। ३. निवास स्थान—प्राय: सर्वत्र। ४. स्वभाव और गुण—एक होकर रहना, सीधा, डरपोक, छ महीने पर कई बच्चे पैदा होते हैं, भेडिया-धसान, घास पात का भोजन। ५. उपकार—कम्बल, शाल इत्यादि, भेड की लेंडी उत्तम खाद, कितने मास खाते है। भेंड के घी से दवा। ६. उपसहार—कुत्ते की रखवाली में चरना, भेड़िये से शत्रुता।

बकरी (Goat.)

कान बड़े, किसी किसीको दाढी, दूध का प्रयोग दवा के समान, शरीर से दुर्गन्ध। शेष बातें भेड के समान।

गधा (Ass.)

१. जाति—घोड़े की जाति, घोड़े का लेख देखो। २. आकार प्रकार—एक छोटे घोड़े से मिलता जुलता, मस्तक और कान लम्बे, पैर दृढ़, धूसरवर्ण। ३. वासस्थान—सर्वत्र। ४. स्वभाव, गुण और भोजन—शान्त, बोझ ढोनेवाला, अच्छे व्यवहार से काम करता है, निठुर होने से कुछ नही करता, घास पात भोजन। ५ उपकार—बोझा ढोना, बच्चो की सवारी, कभी कभी गाडी खीचना। ६. उप-सहार—धोबी की निठुरता।

बिल्ली (Cat.)

१. जाति—बाघ का लेख देखो। २. निवासस्थान—सारा ससार, घर वन सर्वत्र। ३. आकार प्रकार—छोटा बाघ, कोमल बाल, मुह गोल, गद्दीदार पाँव, नुकीले नख गद्दी के भीतर, रुखडी जीभ, आँख की पुतली दिन में पतली और अधकार में बडी और गोल, मूछें शरीर की मुटाई के बराबर लम्बी, शरीर फुर्तीला और हलका, रग काला-उजला-भूरा-चितकबरा। ४. स्वभाव और गुण—शिकारी, घर से अधिक प्रेम, खिलाड़ी, चुपके घर में घुस जाना और शिकार पर टूट पडना, उछलने और तेज चलनेवाली, सूघने की शक्ति तेज, शत्रु की पहचान, मांस-चूहे-भात-दूध का भोजन, एक बार ३-४ बच्चे देती है। ५. उपकार (अपकार—चूहों का नाश, भोजन की चोरी। ६. विशेषता—"बिल्ली पाखाना फिरने के पहले अपने पंजों से जमीन

खन लेती है और गड्ढे में पाखाना फिर कर पैरों से उस पर मिट्टी डाल देती है।"
क्या इस बात से हमलोग कुछ नहीं सीखते ?

हिरन (Deer.)

१. जाति—शाकाहारी, चतुष्पद, स्तनपायी, बकरी का लेख देखो। २. आकार-प्रकार—मनोहर, सींगें बडी और टेढी, टॉग पतली और मजबूत, सुडौल, धारीदार और चकतेवाले पीलापन लिये उजले काले बाल, बारहसिंगा-हरिण-मृग इत्यादि भेद। ३. वासस्थान—सर्वत्र, भारत। ४. स्वभाव, गुण और भोजन—तेज दौडनेवाला, डरपोक, शान्त, घास पात का भोजन। ५. उपकार अपकार—मांस कोई कोई खाते हैं, चमडे की आसनी, जूता, वस्त्र, सींग से बेंट, खेतों को चर जाना। ६. उपसंहार—पोसना, आँखों की उपमा, दौडने की खूबी।

खरगोश (Hare.)

१. जाती—स्तनपायी बनैया। २. प्रकार और आकार—दीर्घकर्ण और साधारण दो भेद, दोनों में शरीर और स्वभाव-भेद, दीर्घकर्ण अलग अलग ऊपर ही रहता है और 'साधारण' झुंड बाँध कर बिल में, दीर्घकर्ण रात में और 'साधारण' दिन में भी आहार खोजता है। दीर्घकर्ण कुछ अधिक काला—साधारण कम, जन्मकाल में दीर्घकर्ण के बच्चे की आँखे खुली और शरीर पर बाल, परन्तु साधारण के बच्चे को नहीं। ३ निवासस्थान—जंगल, बन, आसाम-मेदनीपुर और बर्दवान में दीर्घकर्ण की विशेषता। ४ स्वभाव, गुण और भोजन—चंचल, खिलाडी, झुंड बाँध कर रहना, वृक्षों का शत्रु, दल बाँध कर भागना और इसी कारण पकड़ा जाना, खूब दौडनेवाला, डरपोक इसीलिये गीदड, बांझ, उल्लू और मनुष्य इसे झट पकड लेते हैं। श्रवण शक्ति तेज, शत्रु का आना शीघ्र ही जानता है। घास, फल इत्यादि भोजन। एक मास गर्भ धारण कर वर्ष में सात आठ बार प्रतिवार सात आठ बच्चे देना। ५. लाभ हानि—माँस खाते हैं, यहूदी और मुसलमान नहीं खाते, बाल और चमड़े भी काम में आते हैं।

बन्दर (Monkey.)

१. जाति—चार हाथ वाला, स्तनपायी, आधा मनुष्य आधा पशु, शाकाहारी। २. आकार प्रकार—मनुष्य से मिलता जुलता, कुरूप, सिर गोल, आखें धसी, गाल पचका, मुह लाल, हनुमान का काला, भूरे और कुछ पीले बाल, किसीको पूछ किसी को नहीं, बन्दर के गाल में थैली शेष को नहीं, बन्दर-हनुमान या लंगूर-वनमानुष-पूछ हीन बन्दर-गरीला-चिपजी-ओरंगउतान-मंद्रील। ३. वास स्थान—ग्रीष्म देश, भारत,

अफ्रिका, अमेरिका, वृक्ष पर। ४. स्वभाव, गुण और भोजन—चुलबुला, कूदना-फादना, खिलाडी, स्वार्थी, मनुष्य की नकल करनेवाला, सहानुभूति, कौतुकी, घुडकने-वाला, स्वामी को खुश रखना, कंद-मूल-फल-अन्न का भोजन, २५–३० वर्ष की आयु। ५. उपकार और अपकार—सर्कस मे खेल दिखाना, मदारी की जीविका, कपडा बिनने का कार्य, खेत और बाग को उजाडना, चोरी, काटना. बटोही को दिक करना। ६. पोसना, हिन्दुओ का पूज्य।

बाघ (Tiger.)

१. जाति—शिकारी, चतुष्पद, मांसाहारी, स्तनपायी। २. आकार प्रकार—सिंह के समान, बड़ा बिड़ाल, पीलापन लिये भूरा रग, काली धारियाँ, बाघिन कुछ छोटी, चीता, तेंदुआ, शेरबब्बर इत्यादि भेद। ३ वास स्थान—ग्रीष्म प्रधान देश, सुन्दरबन, भारत के जंगल और पहाड। ४. स्वभाव, गुण और भोजन—हिंसक, बली, छोटे जीवों पर भी आक्रमण, ६० वर्ष आयु, बाघिन २—४ बच्चे देती है, मांस भोजन, ५. उपकार अपकार—चमड़े की आसनी, मास और नख की दवा, जीवों को मारकर खा जाना। ६. पोसना और पकडना—देखो पृष्ठ २४, सिंह का लेख।

भालू (Beer.)

१. जाति—शिकारी, चतुष्पद, मासाहारी, स्तनपायी। २. आकार प्रकार—कुरूप, मोटा, पूँछ और पाँव छोटे, नख तेज, सूअर के समान थूथन, काले उजले-भूरे बाल। ३. वासस्थान–जगल, पहाड, भारत, बोरनियो। ४. स्वभाव, गुण और भोजन—बाघ से लड़ने वाला, सुनने और समझने की तेज शक्ति, हिंसक, वृक्ष पर चढना, पोस-मानना, आग से डरना, जाड़े में उपवास, मरे जानवर को नहीं खाता, मास मछली कद मूल फल-अन्न का भोजन, ४०–२० वर्ष आयु। ५ उपकार अपकार—सर्कस में खेल, नाच, चमड़े का बिछावन, जीवों को भयकर आक्रमण से मारना।

गैंडा (Rhinoceros.)

१. जाति—शाकाहारी, स्तनपायी, पागुर नहीं करता। २. आकार प्रकार—भैंसे के समान, हाथी को छोड सब जीवों से बडा, चमडे मे बन्दूक की गोली या तलवार नहीं घुसती, नाक पर लम्बी एक या दो खांगें, खुर तीन भागों में बँटा, पूँछ छोटी। ३. वासस्थान—सुमात्रा, जावा, श्याम, बगाल, अफ्रिका। ४. स्वभाव, गुण और भोजन—बलवान्, शान्त, आलसी, समझरहित, किसीसे झगड़ना नही चाहता, अनिष्ट की आशका में भयंकर रूप, कीचड पसद, घासपात और वृक्षों की कोमल शाखों का भोजन

५. उपकार अपकार—चमड़े की ढाल, खांग के कटोरे, मांस को हिन्दू पवित्र समझते हैं, इसके मलमूत्र और रक्त को विषघ्न समझते हैं, खेतों को नष्ट करना।

पक्षी (Bird).

१. जाति—अडज। २. वासस्थान-सर्वत्र। ३ आकार-पंखों से ढका हुआ हलका शरीर, दो डैने उडने के लिये, दो चगुलदार पैर, दाँत नही, कड़ी चोंच। ४. श्रेणी—देश भेद से भिन्न भिन्न आकार प्रकार, शिकारी, शाकाहारी, जलचर, नभचर इत्यादि। ५. कण्ठस्वर—मधुर, कर्कश, कोयल की बोली, मोर की बोली। ६. गृहपालित—तोता, कबूतर, कुक्कुट, हस, बतक। ७. भक्ति, स्नेह—सारस पक्षी वृद्ध माता पिता को प्रीति से पालता है, बच्चों में अतिशय स्नेह। ८. खोता—बया इत्यादि कई पक्षियों के खोते अचरज भरे, खोंढरे, बिल। ९. लाभ—अपने से लिखो।

तोता (Parrot).

१. श्रेणी—अडज, पढने वाला, आदरणीय, परिचित। २. वासस्थान—ग्रीष्म-प्रधान देश, भारत, अफ्रिका, अमेरिका। ३. आकार प्रकार—सुन्दर, गोल, मजबूत और लाल चोंच, पदार्थ पकडने वाला नख, लम्बी पूँछ, मजबूत डैने, रग हरा या भूरा, लाल, पीला, बैंगनी या हरा मस्तक, कठ में धारियाँ, देशी-पहाड़ी और सारिल इत्यादि भेद। ४. स्वभाव, गुण और भोजन—झुड बाँध कर रहना, स्वाधीन रहना चाहता है, मनुष्य की बोली का अनुकरण, अन्न फल और रोटी भात खाना। ५. लाभ-हिन्दुओं का पोसना और भगवान् के नाम सिखा कर अपने जीवन को सार्थक करना, स्वामी की रक्षा, चोर से बचाव। ६. उपसंहार—कथा कहानियाँ।

कबूतर (Pigeon).

१. जाति—अंडज, मनुष्य का प्यारा। २. वासस्थान—ग्रीष्म प्रधान देश, भारत, लका। ३. आकार प्रकार—सुन्दर पख, लम्बी चोच, चगुलदार छोटे पाँव, उजला-लाल काला—चितकबरा रग, भुँइलोटन—गिरहबाज—लक्का इत्यादि भेद। ४. घुटुकना, मद से ऐंठना, झुँडबाध कर रहना, पोस मानना, आकाश में गिरह मारना और चक्कर देना, घर की पहचान और प्रेम, बच्चों को बडे होनेपर स्वतन्त्र छोड देना। ५. उपकार-मास, अडा, इसके मल की दवा, हमलोगों को यह स्वावलम्बन और सहानुभूति सिखाता है।

कौआ (Crow).

१. जाति—अडज, नभचर। निवास—सर्वत्र। २. आकार प्रकार-कोयल से बडा, मिलता जुलता, कौआ और काग भेद। ३. स्वभाव, गुण और भोजन—कर्कश शब्द,

काग का शब्द अशुभ, चुपके घूमना फिरना, चोरी करना, सर्वदा सावधान, उल्लू का शत्रु, दो एक बात में कोयल से हारने वाला, कोयल अपने अडे को कौए से पोसवाती हैं, फेंके हुए अन्न खाना, सडा गला मांस और दुर्गन्ध पदार्थ खाना, कीडों मकोडों को खाना, इस प्रकार हमारे स्वास्थ्य का सहायक । ४. उपसंसार—कथा कहानी ।

कोयल (Cuckoo).

१. जाति—अंडज । २. वासस्थान—यात्री, वसन्त प्रधान देश में यात्रा करती है । ३. आकार [illegible], कौए से कुछ छोटी । ४. स्वभाव, गुण और भोजन—मधुर बोली, धूर्त, कौए से अपने बच्चो का पालन कराना, फल खाना । ५. उपकार—कवि की प्यारी, बसत की सामग्री, रसिकों की जान, अपनी मीठी बोली सुना कर सब के मन को आनन्दित करने वाली, "गुण का आदर होता है, रूप का आदर नहीं होता" ।

मछली (Fish).

१. [illegible] र, अंडज, रीढ । २. प्राप्तिस्थान—सर्वत्र, तालाब, नदी, झील समुद्र । ३. आकार प्रकार—सुन्दर, बीच में मोटी दोनो ओर पतली, फेफड़े नहीं—गलफडों से साँस और इनमे लोहू की थैलियाँ शरीर पर चोइटे, दोनो ओर दो पख, पखदार पूछ, किसी किसीको पीठ और पेट पर भी एक एक पख, इन्हीं पखों से तैरना, उजली-पीली हरी-नीली लाल-चितकबरी इत्यादि कई रगों की मछलियाँ, पोठिया—गरई चेंगा—गैंचा—चेल्हवा—टेंगडा—रोहू—बोआरी—सुहिया—बामी—कवई इत्यादि कई भेद । ४. स्वभाव, गुण और भोजन—चञ्चल, जल से निकालने पर मर जाना, तैरना, उछलना, झुडमें रहना, "छोटे जीव, मुर्दा, घोंघा, सेवार, मनुष्यो के दिये हुए खाद्य पदार्थ, थूक, खखौर" खाती है । ५. उपकार—बहुत से लोग ख ते हैं, तेल और चर्बी की दवा, पानी साफ करना, यात्रा में दर्शन । ६. पकडना—बशी, जाल, टापी, गांज इत्यादि से और पानी बहा कर । ७. उपसहार—नेत्र की चंचलता की उपमा कविता में, मछली और जल से मित्रता की शिक्षा ।

बेंग (Frog.)

१. साधारण वर्णन—आकार, प्रकार भेद, वासस्थान, बेंगुची का संक्षिप्त वर्णन । २. स्वभाव—निरीह, नये जल में आनन्द मचाना, जाड़े में सोना, छोटे छोटे कीडों । मकोड़ों को पकड के खाना, । ३. व्यवहार—चमडे से वाद्ययन्त्र, कई जातियों का भोजन, पागल की दवा, साप का प्यारा भोजन ।

कछुआ (Tortoise.)

१. जाति—अण्डज, जलचर। २. प्राप्ति स्थान—जल, तालाब, झील, नदी, समुद्र। ३. आकार प्रकार—गोल, पीठ और पेट पर कठिन चमडा, चार पैर, साँप के समान सिर, भूरा—हरा—उजला रंग, छोटा बडा भेद। ४ स्वभाव और भोजन—धीमी चाल, डरनेवाला, उगली इत्यादि पकडने पर जल्दी नही छोडता, डर के समय पैर और सिर को कड़े चमड़े में छिपा लेना। ५ उपकार—कोई कोई खाते है, खोपडी के प्याले। ६. उपसहार—खरगोश और कछुए की दौड, कछुए की जीत।

घोंघा (Snail.)

१. जाति—जलचर, सरीसृप, अडज। २ प्राप्तिस्थान—जल, गीली भूमि, कीचड। ३ आकार प्रकार—पीठ पर कडी खोपडी, ४ सींगें, २ बडी सींगों पर आँखें, मटिया या उजला रग, देखने में भद्दा, कोई कोई सुन्दर। ४ स्वभाव और भोजन—डरनेवाला, छू देने से निर्जीव के समान होजाना धीमी चाल। ५. उपकार—कोई कोई खाते हैं, शख इसीका एक भेद है।

रेशम का कीड़ा। (Silk-worm.)

१. जाति—कृमि, अडज। २. वासस्थान—आदि भूमि चीन, इगलैंड, फ्रास, इटली, स्पेन, भारत। ३. आकार प्रकार—अडे से छोटा उजला कीडा, चार बार चमड़ी छोडने पर २॥–३ इच का लम्बा होना, १८ छेद सांस लेने के लिये, ७ आंखे, ८ जोडे पैर, अंत में पख होना, तितली के समान उडना। स्वभाव और भोजन—अडे से निकल कर पत्तियों का खाना, बैर, अडी और सहतूत इत्यादि की पत्तियाँ, कोए बनाकर उसमें सो रहना। ४. उपकार—कोए से रेशम निकलना, रेशम से बहुमूल्य वस्त्र।

तितली (Butterfly.)

१. जाति—कृमि, अडज। २. निवासस्थान—झाड़ी, बन, वाटिका। ३. आकार प्रकार—चमकीला, चित्रविचित्र मनोहर रग, पख पर धूलिकण, सिर-छाती-पेट तीन भाग, ४ पंख, ६ पर, कोमल शरीर। ४ स्वभाव और भोजन—पत्तियों पर अडे देना, घूमते रहना, पत्तियों और फूलों का रस चूसना। ५. उपसहार—प्रकृति का मनोहर पदार्थ, भगवान् की महिमा।

मकड़ा (Spider.)

१. जाति—कृमि, अंडज। २. वासस्थान—गंदे मकान जंगल, सर्वत्र। ३. आकारप्रकार—पंख और डैने रहित ४ बड़े और ४ छोटे पैर, मस्तक पर चमकीली आँखें, विषैला चमड़ा, छोटा बड़ा कई भेद, मटिया—उजला-हरा-काला रग, पिछले

भाग में छेद, जिनसे लसीला पदार्थ निकाल कर तागा बनाना। ४. स्वभाव, गुण और भोजन—बड़ी बारीकी से तागा बनाते हुए तानी भरनी देकर जाल बनाना, जाल देख कर हम लोगों को अचरज, दबक कर अपने जाल में मक्खी मच्छड़ इत्यादि छोटे जीवों को बझा कर खाना और आगे के लिये रखना। ५ अपकार—मकानों को गदा करना। ६. शिक्षा—उद्योग।

छिपकिली (Lizard.)

१. जाति—सरीसृप, परन्तु पैर भी हैं। २, वासस्थान—जगल, झाडी, घर। ३. आकारप्रकार—६-७ इच लम्बी आधे में पूँछ, शेष में मुँह और धड़, रग भूरा काला-हरा, चिन्हदार शरीर, काली बिन्दियाँ, उजला और चिकना पेट, चार पैर और प्रत्येक में ५-५ उँगलियाँ। ४ स्वभाव और गुण—दीवार पर दौड़ना, सिर हिलाते रहना, बिल में रहना, अंडे देना, कीड़ो मकोड़ों को पकड के खाना, कभी कभी बिच्छी इत्यादि पर हमला करना। उपसंहार—शरीर पर गिरने पर सगुन का विचार, स्नान कर लेना, दान करना, शास्त्रों का कथन।

हिन्दू जाति (The Hindus.)

१ परिचय—भारतवासी, हिन्दी भाषा बोलनेवाली। २. प्राचीन इतिहास—ब्रह्मा से हमारी रचना और सारे जगत् के गुरु ऋषिगण हमारे पूर्वज, वेद हमारा धर्मग्रन्थ, सस्कृत हमारी प्राचीन भाषा। ३ वर्त्तमान भेदप्रभेद, भाषा, धर्म—देशभेद से बिहारी, बगाली, पजाबी, मरहठी, मदरासी इत्यादि भेद—ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र मुख्यवर्ण—देश भेद से भिन्न भाषाएँ, परन्तु हिन्दी सबों की प्रधान भाषा—हिन्दू धर्म, वैष्णव, शैव, आर्यसमाजी इत्यादि बीसियों सम्प्रदायें। ४ वर्त्तमान अवस्था—सामाजिक बन्धन ढीला, अपने मन से चलना, दूसरे का गलग्रह होना, सजीवता की कमी, दरिद्रता की बढती, फूट और बैर, आत्मनिर्भरता कुछ भी नहीं, बेजोड विवाह, अन्धपरम्परा, नशेबाजो, शिक्षा की दुर्दशा, स्त्रीशिक्षा एकदम कम, भेडिया-धसान। ५. राजनैतिक अवस्था गिरी, परन्तु राजभक्त। ६. स्वभाव—सरल, आडम्बर हीन, छल प्रपच रहित, स्त्रियां पतिव्रता, शत्रु से भी निष्कपट व्यवहार। ७ विशेषता—हिन्दु जाति को मौका दिया जाय तो सभी बातों में सबों से आगे बढ़ जाय। इस समय की शोचनीय गति।

मुसलमान जाति।

१ साधारण वर्णन—दैहिक गठन, भोजन, भाषा, पोशाक, धर्म। २. स्वभाव। ३. जीविका निर्वाह। ४ सामाजिक अवस्था। ५ उपसहार।

उद्भिद् (Vegetables.)

आम (Mango)

१ परिचय—फलों का राजा, उद्भिद् श्रेणी। २ प्राप्तिस्थान—भारत, लका, उष्णप्रदेश। ३ प्रकार—दो प्रकार बिज्जू और कलमी। नकूबा, रोहिनिया, चौरीया, लडूबा, चिनिया, भेमहा, खटहा, सेनुरिया इत्यादि बिज्जू के भेद। बम्बई, मालदह, कृष्णभोग, लगडा, शाहपसद इत्यादि कलमी के भेद॥ ४ आकार, रग इत्यादि—गोलाई लिये भिन्न, हरा, पकने पर भूरा, पीला, लाल इत्यादि, बिज्जू की गुठली बडी, पकने पर घुलना, अधिकतर मीठे, कुछ खट्टे भी, स्वाद में लगडा और बबई सब से उत्तम, बिज्जू से कलमी उत्तम, परन्तु पचने में बिज्जू हलका और कलमी भारी, वसत के आरम्भ में मजरना, शोभा, आधी झक्कड और बदली शत्रु, जेठ से पकना, बिज्जू सस्ता। ५ लाभ—कच्चे आम से चटनी, खटाई, अचार, मुरब्बा, पक्का आम प्रेम से खाना, अधिक होने पर अमावट, कई मास तक गरीबो की जीविका। ६. उपसहार—तिरहुत की प्रसिद्धि।

नोट—ऊपर फल पर लेख लिखने के लिये "विषयविभाग" दिये गये हैं। यदि समूचे 'वृक्ष' पर लेख लिखना हो तो इन्हीं विषय विभागों की सहायता से लिख सकते हैं। विशेषता—फेडी का वर्णन। लकडी से जलावन, सन्दूक, तख्ने के और और काम। रोपना—गुठली रोपकर छोड देने से बिज्जू और अमोले के साथ कलमी आम की डटी छील कर बॉध देने से कलम, कलम काटकर अलग लगाना। उपसहार—हिन्दू के धर्म सम्बन्धी सभी कामों में आम की लकड़ी।

गुलाब (Rose.)

१ परिचय—फूलों का राजा, वाटिका की शोभा, झाडी। २ उत्पत्ति स्थान—पहली भूमि फारस, यूरोप, अफ्रिका, चीन, काश्मीर में अधिक, भारत। ३ आकार, प्रकार, रग इत्यादि—काटेदार डटी, सुन्दर हरे पत्ते, गुलाबी रग के फूल, कुछ लाल भी, बिलायती फूल निर्गन्ध, शेष मे भिन्न भिन्न गध। रंग, गध इत्यादि भेद से प्रायः २–२॥ हजार भेद, भारत में कुछ पहाडी गुलाब भी। ४ रोपना—एक एक बित्ते की डठी काट कर रोपना। ५ उपकार—फूल पूजापाठ में, सभ्यसमाज में, गुलाब जल। (पानी में फूलो को देकर भाफ बना कर जमा करना), इत्र (गुलाब जल को रात में

ठढक लगा कर निकालते है), गुलाब का तेल (तिल से), फूल की पत्तियों से दवा, ठढई । ६ उपसंहार—भोगविलास में इसका अनुचित उपयोग ।

बड़ का पेड़ (The Banyan Tree.)

१. परिचय—विशालवृक्ष, काण्डवाला। २ प्र.्न्थन –िन्दुस्थान, अफ्रिका, यूरोप इत्यादि। ३ उपजना—एक दम छोटे बीज से, बरोह से भी। ४. आकार, आयु इत्यादि—बहुत बडा, २० बीघे तक भूमि घेर सकता है, देखने मे प्राय गोल, बरोह का लटकना, पत्ते बडे, छाया घनी, फल छोटे, हजारों वर्ष से भी अधिक आयु। ५. लाभ—शीतल छाया, पथिकों का आराम पाना, बारात इत्यादि का टिकाना, पक्षियों के खोते, पक्के फल गरीबों के लिये, दूध की दवा, पत्तल बनाना। ६. उपसहार—हिन्दुओं का विश्वास, प्रयाग का अक्षयवट।

बाँस (Bamboo.)

१. श्रेणी—घास। २ प्राप्ति स्थान—भारत, बर्मा, मलाया, लका। ३ आकार-प्रकार इत्यादि—३०—४० हाथ लम्बा, प्राय हाथ हाथ भर पर गाठ, गाठो पर करचियाँ, करची में हरे चिमड़े पत्ते, गोल खोखला, हरा, पकने पर कुछ पीला, चाभ हरौटी और जगली देशी इत्यादि भेद। ३ रोपना—वर्षाऋतु के आरम्भ में वास को जड की ओर से काट कर रोपना। ४ लाभ—घर बनाने का प्रधान आधार, नाना प्रकार के बरतन, चटाई, लाठी, पखा, चिक, लग्गी, जलावन। ५. उपसहार—बास नही रहने से ग्राम-बासियो की बुरी गति का वर्णन।

धान (Paddy.)

श्रेणी—अन्न। २. प्राप्ति स्थान—भारत, अमेरिका, अफ्रिका। ३. आकार प्रकार इत्यादि—अगहनी और भदैया भेद, अगनी के दोलमो, जसवा, बासमती, रजला, दुधराज इत्यादि और भदैया धान के साठी, गम्हरी, भदवी इत्यादि बहुत से प्रभेद। बोना, कुछ दिनों में हरे हरे पौधे, खेतों मे वर्षाऋतु में रोपना, पानी की आवश्यकता, आसिन-कातिक में धान की शोभा। काटना, दौनी करना, चावल बनाना—अरवा, उसना। ४. लाभ—भारत का प्रधान खाद्य, भात, खीर, रोटी, भजा, लड्डू, अक्षत, माड़ी कपड़े मे। ५. उपसहार—भारत का प्रधान धन यही है, गृहस्थ का आनन्द।

फूल (Flower.)

१. प्रारम्भ। २ फूल की आवश्यकता, इसका प्रयोजन किन किन कार्यों में होता है। ३. प्रकार भेद और सक्षिप्त विवरण। ४ व्यवहार—इत्र, गुलाबजल—माली की जीविका।

अचेतन पदार्थ (Inanimate objects.)

कलकत्ता (Calcutta)

भारत की पहली राजधानी–भारत के पूर्वभाग में भागीरथी के किनारे–कालीघाट से नामोत्पत्ति। (इतिहास) आदिम अवस्था—२०० वर्ष पहले छोटा गाव—अगरेज व्यापरियो का आना—सुतानिटी और गोविन्दपुर और २ गाँव खरीदना—धीरे धीरे बढती—भारी नगर हो जाना। ११×२ मील उत्तर दक्षिण—११ लाख से अधिक वासी, ससार की भिन्न भिन्न जातिया—न बहुत गर्मी न बहुत सर्दी—देशी विदेशी वस्तुओं का व्यापार—कल कारखाने—दृश्य—राजप्रासाद, प्रकाण्ड महल, चिडिया-खाना, सरकारी कचहरियाँ, जादूघर, विद्यालय, टकशाल, शोभा। शिक्षा, वाणिज्य और शान्ति के कारण उन्नति।

समुद्र (Sea.)

१. परिचय—महासागर का बडा भाग। २ आकार प्रकार—ससार का तीन चौथाई भाग—कहीं कम गहरा और कहीं कई मील गहरा—कहीं कुछ मीठा जल, कहीं खारा—कहीं लाल जल, कही पीला, कही काला, मिट्टी के प्रभाव से रग—महासागर के रूप मे उत्तर महासागर, अटलांटिक महासागर, प्रशान्त महासागर, भारत महासागर इत्यादि भेद–अरब समुद्र, लाल समुद्र, काला समुद्र, पीतसमुद्र इत्यादि प्रभेद। ३. उपकार —व्यापार में लाभ, मोती, मूँगा इत्यादि रत्न, इसी लिये रत्नाकर नाम, नमक, मेघ बनना, कई जीवों का मिलना, देश को गर्म ठढा रखना। ४ दृश्य—खूब फैला हुआ जल, तरगे, सूर्योदय और सूर्यास्त की अपूर्वशोभा, वर्षाकाल की शोभा, जहाजों की दुर्गति। ५. इतिहास—सगर के पुत्रों के द्वारा उत्पत्ति, विज्ञान का सिद्धान्त, हिन्दुओं का विश्वास।

गंगानदी (The Ganges.)

१. परिचय—भारत की तीन बडी नदियों में से एक और हिन्दुओं की गगाओं मे से एक। २. उत्पत्ति और अन्त—हिमालय की गगोत्तरी से निकल कर बगोपसागर में गिरना। ३ देश—युक्त प्रदेश, बिहार, बगाल। ४ अन्यवातें—साधारण गति से बहना, बरसात में खूब चौडा पेट, [illegible] इत्यादि सहायक नदिया, हरद्वार—प्रयाग—काशी—पटना—मुँगेर—भागलपुर–कलकत्ता इत्यादि तटस्थ नगर और हरिद्वार—प्रयाग—काशी पवित्र तीर्थ। ५. लाभ—खेतों की सिंचाई, पीने का जल, व्यपार की उन्नति, गगाजल में कीडे कभी नहीं पडते, हिन्दु के.

सभी पुण्यकार्यों में गगाजल का प्रयोग, हिन्दू की पूजनीया। ६. इतिहास—राजा भगीरथ की तपस्या से गगा का यहां आना इसीलिये भागीरथी, जान्हवी नाम।

सोना (Gold.)

१ श्रेणी—बहुमूल्य, धातुओं का राजा, खनिज। २. प्राप्ति स्थान—कैलिफोर्निया, आस्ट्रेलिया, भारत, अफ्रिका, कलम्बिया, मेक्सिको, ब्राजिल, पेरू इत्यादि। ३. रग, स्वभाव इत्यादि—पीला, नम्र, चोट सहने वाला, एक रत्ती सोने से १०० गज से भी लम्बा तार। ४ लाभ—बहुमूल्य भूषण, मोहर, जरी के काम, सोने के भस्म से दवा, हिन्दुओं की दृष्टि में पवित्र। ५. उपसहार—लाहे और सोने में कौन अधिक उपयोगी है ? क्यो ?

हीरा (Diamond.)

१ श्रेणी—मणिविशेष। २ प्राप्तिस्थान—महानदी के किनारे सबलपुर और चन्द्रपुर में—बालू का बडा मैदान। ३. सग्रह करना—जहरा और तोरा नाम की जातिया बालू धोकर निकालती है। ४ प्रकार—गुण के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र भेद। ५. लाभ—बहुमूल्य, काच काटना, शोभा, भूषणों में जडना। ६. उपसहार—कोहिनूर हीरा भारत से मुसलमान के हाथ में—फिर अगरेज के हाथ में, इस समय सम्राट् के मुकुट की शोभा, उसका मोल ३॥ करोड रु०।

वसन्त (Spring.)

१. फाल्गुन-चैत। २. शरत् से अधिक रमणीय। ३ वृक्ष और लता से नूतन पल्लव, पुष्प, चारो ओर शोभा। ४ बन मे नाना प्रकार के पक्षियों और कोयलों की मीठी-तान। ५. जीवमात्र के मन में अपूर्व आनन्द। ६. कवियों की उपमा ऋतुराज। ७. कहीं कही बीमारियाँ।

वर्षाऋतु (Rainy Season.)

१ परिचय—गृहस्थो की प्यारी ऋतु आषाढ, श्रावण और भादो। २. उपकार—कृषिकार्यों का भलिभाति सम्पादित होना, गावों और नगरों में मैलापन नही रहता, कूडाकरकट बह जाता है। ३. हानि—'सडने गलने से दूषित वायु का बनना' 'सक्रामक रोगों का उपद्रव' राहों—सडकों और घाटों का बिगड जाना, वृक्षों और घरों का गिरना, विषधरो का भय, आलस, अधिक वर्षा से खेती में हानि। ४.शोभा—काले काले मेघो की अनुपम शोभा, प्रकृति की हरी सारी, बिजली की चमक, बेंगों का टरटर, इन्द्रधनुष। कुछ समय सूर्य का लोप हो जाना अथडभक्कड। ५. उपसहार—सरकारी प्रबध से सूभीता, जहा चाहिये रेल और अच्छी सडकों से जाइये।

अश्वमेध यज्ञ ।

१. किसे कहते हैं ? विवरण—उद्देश्य । २. राम जी के यज्ञ का घोड़ा पकड़ना। ३. लव कुश के साथ युद्ध—फलाफल ।

हिन्दु विवाह ।

१ परिचय—कन्या व्याहने योग्य होने पर उसके पिता की चिन्ता, पुत्रवाले को चिन्ता कम । २ अगुआ—कन्यावाले को वर खोजने के लिये अगुआ भेजना, ज्योतिषीजी का पाण्डित्य, तिलक दहेज का ठीक होना (यह बुरी प्रथा है), कन्यावाले का चिन्ता, तिलक, फलदान भेजना । ३ लड़के वाले की तैयारी—गहने की तैयारी, बारात सजना, आतिशबाजी और नाच का प्रबन्ध (बुरी प्रथा), कन्यावाले के यहाँ नियत दिन पर बारात लाना । ४. कन्यावाले के यहाँ—बारात की अगवानी, द्वारपूजा, बारातियो का स्वागत, भोजन (कुछ जातियो मे विवाह को रात में बारातियों को कन्यावाला नहीं खिलाता), विवाहविधि, मन्त्र, पाणिग्रहण, बारात का एक दो या अधिक दिन ठहरना, खिलाना पिलाना । ५. विदाई—समधियो का मिलना, दहेज, बारात का विदा होना, स्त्रीका पति के साथ ससुरार आना, कोहबर, कई भोज । ६ उपसहार—बाल्यविवाह, बेजोड़ विवाह, पिता माता के हाथ मे पुत्र का विवाह, तुम्हारी राय, पहले का स्वयम्वर और आधुनिक प्रथा की तुलना ।

हिन्दू श्राद्ध ।

१. मृत्यु के कुछ पूर्व—वैतरणी, गोदान, तुलसीदल और गगाजलपान, कान मे देवता का नाम, मृत्यु । २. दाह—मुर्दे को श्मशान में ले जाना, कैसे—चिता बनाना, स्नान, मन्त्र उच्चारण, मुर्दे को चितापर रखना, मुख में आग देना—आग कौन देता है? भस्म को गगा इत्यादि में फेंक देना स्नान करना । ३ श्राद्ध—दूसरे दिन दूध देना, सातवे दिन सतधन का पिण्डदान, दसवें दिन चौर कर्म, वृषोत्सर्गादि, ग्यारहवे दिन प्रधान श्राद्ध, जाति भोजन, ब्राह्मण भोजन, भिन्न भिन्न दान (किसी किसीको बारहवे दिन श्राद्ध) । बारहवे या तेरहवें दिन पितृ मे मिलना । एक वर्ष पर बरखी (वार्षिक श्राद्ध) । ४. उपसहार—श्राद्ध के विषय मे अपनी राय ।

श्रीपञ्चमी—वसन्त पञ्चमी ।

१ कारण—"लक्ष्मीजी का कथन नारदजी से—जो स्त्री 'श्रीपचमी से आरम्भ करके प्रति मास ६ वर्ष तक यह व्रत करेगी वह सौभाग्यवती, सुखी और पतिवल्लभा होगी ।" बसन्तोत्सव का आरम्भ इसी दिन से । सरस्वती की पूजा विद्यार्थी को करने

से विद्यालाभ और सारस्वतोत्सव। २. उस दिन के कार्य—विशेष कर बंगाल में सरस्वती पूजन–हमारे यहां गृहस्थों का हल खड़ा करना और खेती के लिये यात्रा, महादेव को जल चढाने का आरम्भ, होली की उमग, अबीर। कहीं कही स्त्रियो का व्रत करना, सारस्वत ब्राह्मणो के यहा उत्सव। ३ उपसंहार हिन्दुओं के सिद्धान्त की प्रशंसा—इस समय दुर्गति।

दिवाली।

१. परिचय—हिन्दुओ–विशेष कर वैश्यों का पर्व, कार्तिक अमावस्या को। २ मुख्य कार्य—लक्ष्मी और गणेशजी की पूजा, दीप जलाना। ३. तैयारी—कुछ दिन पहले ही से घर की मरम्मत, सफाई, सजना। ४. लाभ—संक्रामक रोगो का नाश, वायु की शुद्धि, घर की सफाई, व्यापारियों को आगे वर्षदिन के लिये व्यापार की तैयारी। ५. बुरी प्रथा—जूआ, मिट्टी का तेल जलाकर वायु को अपवित्र करना। ६ हिन्दुओं के सिद्धान्त की प्रशसा—इस समय दुर्गति।

कुम्भ मेला।

१ अर्थ—कहाँ लगता है—कितने दिन पर। २ दृश्य—वर्णन—साधुओं का समागम। ३. अपनी राय। ४ उपसहार—सुधार की आवश्यकता—हिन्दुओ की श्रद्धा मे कमी।

हरिहर क्षेत्र का मेला।

१. स्थान—सोनपुर (सारन जिला, गडक किनारे)। २. समय—कार्तिक की पूर्णिमा, १५ दिन तक। ३ विवरण—पूर्णिमा में यात्रियों का गगा और गडक का स्नान–हरिहरनाथ महादेव दर्शन। मेला भारत में सब से बडा, देश विदेश के सौदागर, हाथी, घोडे, गायें, बैल, देशी विदेशी चीजें, पछी, साधु महात्मा, सभा, खेल इत्यादि। ४. मेले का उद्देश्य—मेलमिलाप, आजकल दुर्गति। ५. उपसहार—मेले का उठना, जमींदार की आमदनी, रेलगाडियों की कमी से यात्रियों को दिक्कत।

इन्द्रधनुष (Rain-bow.)

१ परिचय—वर्षा के समय आकाश में सतरंगी अर्द्धवृत्त। २ उत्पत्ति–एक ओर सूर्य बीच में कुछ बूँदाबूँदी और हमलोग, और दूसरी ओर इन्द्रधनुष का बनना, सूर्य की विपरीत दिशा में। ३ शोभा–सतरगी अपूर्व शोभा, कवियों की उपमा, प्रकृति की अनुपम सामग्री। ४ उपसंहार, पूरब में उगने से वर्षा नहीं होना और पच्छिम में उगने से वर्षा की आशा–ऐसा बिश्वास।

सायंकाल।

१. सध्या में आकाश का दृश्य–वायु की अवस्था–पशुपक्षियों का अपने अपने घरों की ओर लौटना और कलरव–रात्रिचर प्राणियो का आनन्द। २ गाँव का वर्णन–गौओं के साथ चरवाहों का लौटना–स्त्रियों का जलाशयों से जल लाना–दीप बालना–सन्ध्या वन्दन–मन्दिरों मे पूजा। ३ नगर का वर्णन–सडको पर गाडियों की शीघ्रता–कचहरी से कर्मचारियों का लौटना–रोशनी–सगीत–उपासना। ४ उपसहार।

गेंद का खेल (A foot-ball Match.)

१. खेलने के स्थान का प्रबन्ध। २ किस उद्देश्य से खेल हुआ। ३. देखे हुए खेल का वर्णन। ४. खेलने वाले कैसे थे, योग्यता और अयोग्यता। ५. खेल देखने से तुम्हारी राय में क्या क्या बाते आईं ?

क्रिकेट का खेल।

१. स्थान–चौरस भूमि और खुली हुई। २ सामान–२२ गज पर दोनो ओर तीन तीन विकेट और एक एक बेल (छोटी लकडिया)। खेलने के लिये थापियां (बैट), दो गेंदें, दस्ताने, लेगगार्ड (पैरों की रक्षा के लिये)। ३ खेलने वाले और विवरण–११–११ दोनो ओर, एक को गेद फेंककर विकेट का गिराना। दूसरी ओर से बचाकर गेद का मारना, गेद आने तक दौडना (रन), दो पच–रन गिनना और लिखना, हारजीत का निर्णय। ४ लाभ–हाथ पैर की पुष्टि, देखने और अदाज करने की शक्ति, परस्पर मिलकर काम करना। ५ उपसहार–देशी खेलों की दुर्गति।

ग्राम्य पाठशाला।

१. परिचय–प्राय प्रत्येक ग्राम में बच्चों को पढने के लिये। २. पाठशाला के घर का वर्णन। ३. बच्चे का पहले पहल पढने आना। ४ गुरु का पहला कार्य, बालचट, चिल्लाना, आराम। ५. दण्ड और पढाने का ढग। ६. पढाने के लिये विषय। ७. गुरु की आय। ८. पाठशाला में पढने का महत्व। ९. उपसहार।

पुस्तकालय।

१. पुस्तकालय किसको कहते हैं ? २. यह किसलिये स्थापित किया जाता है ? ३. सर्वसाधारण को और विद्यार्थियो को लाभ। ४. पुस्तकालय किस क्रम से होना चाहिये ? ५. उपसहार।

डायरी (रोजनामचा)।

१. डायरी किसका नाम है ? २. आवश्यकता—सत्कार्य करने की आदत डालना, हम में काम करने की कितनी शक्ति है ? मुख्य मुख्य घटनाओं की याद। ३. डायरी

लिखने का समय अवश्य नियत रहे। ४ उपसंहार–हमलोग झूठमूठ पन्ने भरते है, अच्छा व्यवहार नहीं करते।

प्लेग (Plague)

१. परिचय—एक कठिन बीमारी ज्वर, गिल्टी। २ फैलना—चूहों से पिस्सुओं को फिर इनसे मनुष्य को। ३ हानि—बहुत से मनुष्यों का मरना, घरका बरबाद हो जाना। ४ उपाय–शंका होते ही घर छोड देना, सफाई, विषनाश करनेवाली दवाओं से घर पोतवाना, टीका लेना, बीमारों से अलग रहना। ५ उपसंहार–बम्बई से आरम्भ–सरकार की ओर से रोकने के उपाय निष्फलता, मूर्खों की सरकार पर मिथ्या शङ्का।

२. विवरणात्मक लेख (Narrative Essays.)

ऐतिहासिक लेख (Historical Essays)

सीता वनवास।

१. वनवास का कारण। २ लक्ष्मण के प्रति रामचन्द्रका आदेश। ३. सीताजी के साथ लक्ष्मण का गमन—गंगा के तीर पर त्याग–लक्ष्मण का बिदा होना। ४. सीता जी की तत्कालीन अवस्था–वाल्मीकि का आश्रय। ५ आश्रमवास–लवकुश जन्म। ६. सीताजी की पतिभक्ति।

सिकन्दर का भारत पर आक्रमण।

१ परिचय–मसिडोनिया का राजा–ससैन्य देश जीतने के लिये यात्रा–एशिया-माइनर, पैलेस्टाइन, फारस मिस्र इत्यादि जय। २ भारतप्रवेश—ई० के ३२७ वर्ष पूर्व–(क) तक्षशिला के राजा से मित्रता, (ख) पुरुराजा से बडी लडाई–पुरु का हारना-वीरता का बर्ताव–मित्रता–अपनी ओर से राज्य बढा चढा कर लौटा देना। (ग) मगध (चन्द्रगुप्त) जीतने की इच्छा–सेना की असम्मति–लौटना।

अशोक का राजत्व काल।

१. परिचय–मौर्यवंशी–मगध के राजा बिन्दुसार के पुत्र और चन्द्रगुप्त का पौत्र –पिता के मरने पर राजगद्दी पाना। २. साम्राज्य–हिमालय से सतपुरा पहाड़ और हिरात से उड़ीसा तक–कलिंग जीतने के लिये युद्धयात्रा–बहुत सेना नष्ट–अनुताप–

राज्यविस्तार की वासना को त्याग । ३ परिवर्त्तन—बौद्धधर्म की शिक्षा—बौद्धधर्म के प्रचार की चेष्टा । ४. प्रजा के हितकर कार्य । ५ शेषजीवन—सन्यास ।

सिपाहीविद्रोह ।

१. कारण । २. किन किन स्थानों से सुलगा—उन स्थानों का तत्कालीन विवरण । ३ विद्रोह के समय भारतवासियों की राजभक्ति का परिचय । ४. विद्रोहदमन—शान्तिस्थापन—महारानी का घोषणापत्र ।

विक्टोरिया का भारत में राजत्वकाल ।

१ भारतका राज्यभार अपने हाथ में लेना—लेने का घोषणापत्र । २. विक्टोरिया के समय में भारत की उन्नति के का । ३. उपसहार—चरित्र, कार्यावली और शासन-काल की समालोचना ।

सप्तम एडवर्ड का राजत्वकाल ।

१ राजत्वकाल १९०१—१९१० । २. राजत्वकाल में प्रधान प्रधान कार्य—समालोचना । ३. मृत्यु—भारतवासियो का शोक । स्मरणार्थ प्रदेशों में कार्य । ४. उपसहार ।

लार्ड कर्जन का शासन काल ।

१. पश्चिम और मध्यभारत के दुर्भिक्ष रोकने की व्यवस्था । २. सीमान्त प्रदेश अलग होना—शासन की व्यवस्था । ३ बंग विभाग—शासन का प्रवन्ध । ४ संस्कार—पुलिस और शिक्षाविभाग । ५ दिल्ली दरबार । ६. पदत्याग ।

यूरोपीय महायुद्ध ।

१ कहा और कब—आरम्भ में यूरोप, फिर एशिया और अफ्रिका, १९१४-१९१८ तक । २. कारण—आस्ट्रिया के राजकुमार का सर्विया में मारा जाना, इसी बुनियाद पर राज बढाने की इच्छा से जर्मनी को अस्ट्रिया का साथ देना, शान्ति स्थापन के लिये 'इगलैंड, फ्रास और रूस' को सर्विया की पीठ पर होना । ३. वर्णन—मैदान में पड बेलजियम का प्राय. पिस जाना, फ्रांस का बहुत बडा भाग तहस नहस होना, संसार की बुरी गति, अमेरिका को बीच में पडते ही जर्मनी का साहस टूटना । ४ सन्धि—क्षणिक सन्धि के अनुसार १९१८ में लडाई बन्द, १९१९ में सन्धि के नियमों पर विचार, १९२० में हस्ताक्षर । ५. फल—इंगलैंड और फ्रास की जीत, रूसका जार मारा गया, कैशर गद्दी से उतारा गया, राज्यों में हेरफेर, संसार में अकाल, दुर्गति, इसका प्रभाव बहुत दिनों तक रहेगा । ६. उपसंहार—अगरेजों की धाक, ससार में सनसनी, सब से बडी लडाई ।

जीवनचरित्र (Biographical Essays.)

वाल्मीकि का जीवनचरित्र।

१ जन्मादि विवरण। २ प्रथम जीवन–किस उपाय से जीविकोपार्जन करते थे–दस्युता त्याग का कारण। ३ शेष जीवन–साधना, वाल्मीकि नाम प्राप्ति के कारण –रामायण रचना। ४ उपसंहार–समालोचना।

बुद्धदेव।

(१) ५५७ वर्ष ई०के पूर्व कपिल वस्तु में जन्म–पिता शुद्धोदन, माता महामाया, विद्याशिक्षा और वैराग्यलक्षण, विवाह, पुत्रजन्म, स्वप्न, संसारत्याग।

(२) सन्यास ग्रहण–शान्तिलाभ के लिये शारीरिक क्लेश–वैशाली नगरी में एक ब्राह्मण का शिष्य बनना–राजगृह मे रहना–गया से दक्षिण (बुद्धगया) में शान्ति प्राप्त होना।

(३) धर्म, प्रचार, "अहिंसा परमो धर्म.–धर्म का सार", स्त्री, पुत्र और बहुत से लोगों का शिष्य होना–भारत मे नाना स्थानों में धर्म प्रचार। ई० से ४७७ वर्ष पूर्व कुशीनगर में देहत्याग। चरित्र समालोचना।

नेपोलियन बोनापार्ट।

जन्म और बाल्यकाल–१७६९ में कर्सिका टापू में जन्म, पिता-साधारण गृहस्थ, पांचवर्ष (१५ वर्ष की अवस्था) मे सैनिक शिक्षा में पास होना। जीवन कार्य–पेरिस का विद्रोहदमन, इटली मे अस्टिया की सेनाओं का नाश करना, मिश्रदेश जीतना, फ्रांस का शासन भार लेना, १८०४ में राजा को मार अपने राजा होना। १८१२ में ५ लाख सेना लेकर रूस जय करने के लिये जाना और ५ हजार सेना के साथ कष्ट सहते हुए लौटना, कुछ दिन तक फ्रांस से बाहर रहना, फिर राजा होना–वाटरलू की लड़ाई में अंगरेजों (ड्यूक आफ वेलिंगटन) से कैदहोना और कैद हो कर सेंटहेलिना में जीवन बिताना। १८२१ में मृत्यु। उपसंहार–अनुपम वीर, सच्चा, असंभव को संभव कर दिखाना।

पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर।

१. बीरसिंह ग्राम (जि० मेदनीपुर) में १८२० ई० में जन्म–विद्यासागर कालेज की उपाधि–पिता ठाकुरदास बन्दोपाध्याय दरिद्र और कलकत्ते में नौकर–बचपन में ग्राम्य पाठशाला में पढ़ना–६ वर्ष की अवस्था में कलकत्ते में आना–संस्कृत कालेज में प्रवेश–११ वर्ष पढ़ना, श्रेणियों में सर्व प्रथम रहना, परिश्रमी; होनहार।

२. पढ लेने पर फोर्ट विलियम कालेज में हेड पण्डित—संस्कृत कालेज के सहकारी सम्पादक, अध्यापक, अध्यक्ष—सस्कृत ग्रन्थों के विशुद्ध सस्करण, सस्कृत ग्रन्थों के विशुद्ध वगानुवाद—१८५५ में स्कूलों के इसपेक्टर, नूतन शिक्षा प्रणाली का चलना—पाठशालाओ का सस्कार—स्कूली पुस्तको का लिखना—नौकरी छोडना।

३ देशहितकर कार्य, ग्रन्थ प्रणयन, कन्या विद्यालय खोलना, मेट्रोपलिटम इस्टिटिउशन खोलना, १८९१ ई० मे मृत्यु।

४ चरित्र, असीम दया, परदुःख कातरता, दूसरे के दुःख को दूर करने की चेष्टा, अनाथो के पिता समान, विधवाविवाह चलाने की चेष्टा, बहुविवाह निवारण की चेष्टा। आडम्बर रहित, साधारण वेशभूषा, आधुनिक वङ्गसाहित्य के जन्मदाता मीठी भाषा लिखनेवाले।

सावित्री।

१. जन्म विवरण और विद्याशिक्षा—अश्वपति (पिता) मद्रदेश के राजा, बडी तपस्या से 'सावित्री' का जन्म, मुनियों और ऋषियो से शास्त्र शिक्षा।

२ पति अन्वेषण—मातापिता की आज्ञा मे पति का खोजना, बहुत खोज ढूँढ के बाद द्युमत्सेन के पुत्र सत्यवान् को पति के लिये चुनना, घर आकर पिता से कहना, नारद और अश्वपति का वार्तालाप (सत्यवान् अल्पायु), सावित्री की अचल प्रतिज्ञा।

३. विवाह—पुरोहित सहित कन्या लेकर द्युमत्सेन के पास अश्वपति का जाना, विवाह के लिये कहना, पाणिग्रहण, ससुर की पूर्व और वर्तमान अवस्था, सावित्री की सास ससुर और पति की सेवा।

४. त्रिरात्र व्रत, स्वामी का वनगमन, सास ससुर की आज्ञा लेकर सावित्री का पति के साथ जाना, बनमें विपद्, लकडी काटने के समय सत्यवान् के सिर मे पीडा, मृत्यु, यम के साथ साबित्री का वार्त्तालाप, बारबार वर पाना, ससुर की आँखों से सूझना, राज्य की प्राप्ति का वर, सावित्री को १०० पुत्र होने का वर, पति के जीने का वर।

५ चरित्र समालोचना—पतिव्रता, वटसावित्री की पूजा।

भ्रमण वृत्तान्त (Travels.)

नाव की सफ़र।

तिथि, संगी साथी, तैयारी, घाट, नाव और मल्लाह, खेना, जल और स्थल के दृश्यों का वर्णन, कौतूहल, संगीत, किनारे या बालू पर जलपान की तैयारी, लौटना, उपसंहार।

आकस्मिक घटनाएँ (Accidents.)

चोरी।

कहाँ, कब, कारण, विवरण, चोर कौन कौन पदार्थ ले गये? घरवालो की हानि और इसकी रिपोर्ट, पुलिस का आना, पता लगाना, उपसहार।

विचारात्मक लेख (Reflective Essays.)

गुण और तुलना इत्यादि।

मातृभाषा का अनुशीलन।

मातृभाषा किसको कहते हैं—संक्षिप्त विवरण। आवश्यकता—अपने मनोभाव को प्रकट करने के लिये, बिना इसके उन्नति नही होती, हमारा प्रधान कर्त्तव्य। उपकार—मनोभाव ठीक ठीक प्रकाश करना, विदेशी भाषा से ऐसा असम्भव, जातीयता की रक्षा, आत्मसम्मान, स्वाधीन जाति का लक्षण, मातृभूमि के अशेष ऋण का किंचित परिशोध, मातृभाषा के अनुशीलन के बिना देश की हानि, मनुष्यत्व की बिदाई। मातृभाषा की शिक्षा की आवश्यकता—विदेशी भाषा विदेशियो के साथ है, परन्तु अपनी भाषा हमारा साथ कभी नही छोड सकती, इसीसे हमारी, समाज की और देश की भलाई, जातीयता की उन्नति। से निडर होकर सदा अपनी भाषा की उन्नति के लिये चेष्टा करते रहना, ग्रन्थो का पाठ करना।

विज्ञान की उपयोगिता।

१. विज्ञान क्या है? २. प्राप्ति—व्यवहार से, सीखने में कम परिश्रम, नई बातों के लिये मस्तिष्क की बड़ी मिहनत। ३. विज्ञान के द्वारा बने पदार्थ—इजिनें, तार, हवाई जहाज, अस्त्रशस्त्र, रेलगाड़ी। ४. लाभ—सभ्यता की बढती, जीवनयात्रा में आसानी। उपसहार—नीचे "शिल्प शिक्षा" देखो।

शिल्पशिक्षा का फल।

१. शिल्प क्या है—उदाहरण। २. शिल्प की आवश्यकता—गृह, अस्त्रशस्त्र, विविध यन्त्र। ३. लाभ—सभ्यता की बढ़ती—वाष्पयन्त्र, रेलगाडी, तडितयन्त्र, अणुवीक्षण यन्त्र इत्यादि से उन्नति—कीर्ति स्थापन—जीवनयन्त्रा में आसानी। ४. उपसंहार—उदाहरण-शिल्पशिक्षा से जाति विशेष की उन्नति—वाणिज्य व्यवसाय मे सुभीता।

बाल्य जीवन में सत्संग से लाभ।

१. संग की परिभाषा। २. प्रकार—सत् और असत्। ३. सत्संग की

आकर्षण शक्ति–कुसंग की आकर्षण शक्ति–किसका अधिक प्रभाव। ४. बचपन में सत्सम से लाभ–समारयात्रा निर्विघ्न समाप्त–सदाचार–चरित्र शुद्धि, सब का प्रेमपात्र। (देखो–संगति का लेख।)

मानसिक परिश्रम की आवश्यकता।

१. परिश्रम के भेद–शारीरिक और मानसिक। २ मानसिक परिश्रम की आवश्यकता–इसके बिना उन्नति नही होती–मनुष्य और पशु में भेद–सभ्य और असभ्य जातियो में भेद। ३ मानसिक परिश्रम के भेद–३.भेद, धर्म, नीति और विज्ञान। ४. प्रत्येक के साधने से लाभ।

आलस्य (Idleness.)

१ सूचना—आलस्य में सुख नही, चिर विश्राम में सुख नहीं' परिश्रम के बाद विश्राम मे यथार्थ सुख। २. आलसी की अवस्था–आलसी मनुष्य आत्मोन्नति और मनुष्यत्व नही पासकना–चित्त की अप्रसन्नता–शारीरिक और मानसिक शक्ति का नाश। ३. आलस्य सब प्रकार से त्याज्य है–आलसी मनुष्य समाज का कण्टकस्वरूप।

सुनाम (Reputation.)

सुनाम द्वारा ससार मे चिरस्मरणीय होना। सत्पथ से कर्त्तव्य सम्पादन करने में सुनाम से बडी सहायता। यह, धन खर्च करने से नही मिलता। सुनाम के लिये असाध्य साधने की आवश्यकता नही। सभी अवस्थाओं में सुकर्म करने से सुनाम लाभ। सबो के लिये सुनाम सुख और उन्नति का पथ।

क्रोध (Anger.)

१. क्रोध क्या है—क्रोध और कार्य का सम्बन्ध, इसके विषय में लोगो की धारणा। २. क्रोध कहाँ कहाँ शुभकर है? दुष्टदमन, अत्याचारियों के दण्ड देने मे, विश्वासघातियो पर शासन करने में। ३ कहाँ कहाँ क्रोध करना उचित नही–इसमे हानि। ४ उपसहार।

अभ्यास (Habit.)

१ संज्ञा—काम करते करते उसे स्वभावत करने लगना। २ अभ्यास के भेद–अच्छा और बुरा—दया, उपकार, सत्य इत्यादि अच्छा और अपकार, असत्य इत्यादि बुरा। ३. अच्छे अभ्यास से लाभ और बुरे से हानि। ४ अभ्यास बदलना कठिन है। ५ अच्छे अभ्यास के लिये बचपन से सुसग। ६ उपसहार—रस्सी की रगड से ईंटे का घिस जाना, घडा रखते रखते पत्थर पर चिन्ह पड जाना।

आत्मरक्षा (Self-defence.)

१ परिचय–अपनी रक्षा। २ जीव अपनी रक्षा के लिये बचपन ही से सदा चेष्टा करता रहता है। ३. इसकी शिक्षा भगवान् ने अपने हाथ में रक्खी है। ४. आत्मरक्षा ही से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का मिलना, अपनी उन्नति, देश की उन्नति। ५ उपयोग—स्वास्थ्य पर ध्यान, अच्छे अभ्यास।

दरिद्रता (Poverty.)

१ परिचय–प्रयोजन के अनुसार धन का नही मिलना। २ उत्पत्ति के कारण–आलस्य, व्यर्थ आमोद, दिखावट, काम नही करना, पराधीनता, कुसग। ३. पारिवारिक अवस्था—भोजन, वस्त्र, घर, स्वास्थ्य मिलना कठिन, शोक। ४. सामाजिक अवस्था–समाज मे घृणा, "बरु रहीम कानन बसौ, असन करो फल तोय। बन्धु मध्य धनहीन है, रहिबो उचित न कोय।" ५. अपनी अवनति—अभाव में धीरज नहीं रहना; चोर-डाकू हो जाना, पराधीन हो जाना, ज्ञान हीन हो जाना, पापी। दरिद्रता दूर करने के उपाय–बचपन ही से आलस और दिखावट का त्याग, सादगी, सग, विद्या पढना, परिश्रमी और अध्यवसायी होना, सत्यपथ का अवलम्बन। उपसंहार–नहिं दरिद्र सम दु.ख जगमाही।

सन्तोष (Contentment.)

१. सन्तोषी सदा सुखी। २ सन्तोष प्राप्त करने के उपाय—ऐसा विचार कि (क) चाह से हमारे पास अधिक है, (ख) हम पहले से अधिक खुश हैं, (ग) धर्म, (घ) जीवन थोड़ा है। ३. कहीं ऐसा न हो कि सन्तोष के नाम पर आलसी बन समाज और देश को परावलम्बन की बेडी पहना दें। ४. उपसहार—सन्तोष की मात्रा।

हिंसा।

१. हिंसा किसे कहते हैं। २. यह बुरी क्यों है? ३. हिंसा करने की इच्छा कैसे उत्पन्न होती है? ४. दूर करने के उपाय। ४. उपसहार—अहिंसा का महत्व, हिंसा करनेवाले मनुष्यों की दुर्गति।

ज्ञानोपार्जन।

१ प्रकार भेद—जड़ विषयक ज्ञान, विवरण, उदाहरण। अध्यात्म ज्ञान, विवरण, उदाहरण। २ ज्ञान का प्रभाव—ज्ञान प्राप्त करना यथार्थ मनुष्यत्व, उन्नति-लाभ का एकमात्र उपाय, पशु और मनुष्य में भेद, प्रभुत्व प्राप्ति, सम्मान। ३. ज्ञानोपार्जन के लिये आवश्यकता—परिश्रम, चिन्ताशीलता, अध्यवसाय और साधना। ४. ज्ञानी और मूर्ख मे भेद—ज्ञानी नम्र और अहकार रहित, मूर्ख उद्धत और अहकारी।

दान (Charity.)

क्या है—घरमे आरम्भ—संसार में अन्त—पडोसी के प्रति—देशवासी के प्रति—उचित दान क्या है—दान के पात्र—लाभ—दान और दया—उदाहरण—उपसहार—भगवान् की प्रसन्नता ।

धन्धे का चुनाव (The choice of profession)

परिचय—प्रारम्भ में चुनने में कठिनता—किसी मुख्य शिक्षा की इच्छा—मुख्य धन्धे की व्यवस्था—युवको के लिये बहुत से धधे—सुविधा और असुविधा—उपसहार—(आलस्य से कोई धधा अच्छा) ।

सदाचार।

१. क्या है ? सत्+आचार। २. सदाचारी पुरुष का स्वभाव। ३. लाभ। ४. दुराचार का परिणाम, देश की अवस्था। ५. उदाहरण। ६ प्राप्ति के उपाय—सत्सग, अभ्यास, प्रतिष्ठा का विचार। ७. उपसहार।

मूर्खता।

१, क्या है ? २. मूर्ख का स्वभाव—दण्ड पाने पर भी बारबार वही अपराध करना, हठी, बिना समझे बूझे अच्छे बुरे कायो में लग पडना। ३. मूर्ख की गति—ससार की दृष्टि में नीच होना, अधिक परिश्रम करने पर भी जीविका में कठिनता, धन को नाश करना या कजूस हो जाना, आत्मा की उन्नति नहीं। ४ मूर्ख और पशु मे समता। ५. मूर्खता दूर करने के उपाय—अभ्यास, सत्सग, उपदेश। ६ उपसहार—मूर्ख मित्र से बुद्धिमान् शत्रु अच्छा, क्यों ?

पराधीनता।

१. परिचय—दूसरे के अधीन में होना। २. क्यो ? अपने ऊपर भरोसा नहीं करने से, सासारिक सुखों में लिप्त हो कर परिश्रम और अध्यवसाय से मुख मोडने से, अपनी सजीवता, जातायता और प्रलोभन मे पड़ अधिकार को खो देने से, मिथ्या अभिमान से, आत्ममर्यादा खो देने से। ३ हानि—पराधीन सपने सुख नाही, बलपौरुष बिदा हो जाता है, प्रतिष्ठा कुछ भी नही रहती, दूसरे के अधीन रहते रहते सस्कार भ्रष्ट हो जाता है, जातीयता जाती रहती है, मुर्दा हो जाता है। ४. स्वाधीन और पराधीन पुरुषो की समता। ५. उदाहरण—चिडियो का पिंजरे में पड़ जाना, एक जाति का दूसरी जाति के अधीन हो जाना। ६. उपसहार—जो तुम सोचते हो। (स्वावलम्बन का लेख पढो, पिछे लिखा है।)

स्वाधीनता।

ऊपर के विषयविभाग और विवरण पढ कर लिखो।

अकाल (Famine.)

१. अकाल क्या है। २. अकाल पड़ने के कारण। ३. अकाल में देश की अवस्था। ४. अकाल में सहायता—सरकार से—देश के धनि लोगों से। ५. तुम्हारी धारणा। ६. उपसहार—भारत में प्रतिसाल अकाल का अनुभव या सदा अकाल।

छात्रावासों से लाभ और हानि।

१. क्या है? भारत की बहुत ही प्राचीन प्रथा। २. आधुनिक और पुरातन छात्रावासो में तुलना। ३. आधुनिक छात्रावासों में बड़ा दोष—स्वास्थ्य पर कम ध्यान। ४. लाभ—भिन्न भिन्न स्थानों और भिन्न भिन्न जातियो के युवाओं का परस्पर प्रेम, सहानुभूति, शिक्षा में सहायता। ५. उदाहरण—छात्रावास के कारण सुदामा को श्रीकृष्ण की मैत्री का फल। ६. आधुनिक छात्रावासोंकी ओर तुम्हारी धारणा।

मन और शरीर।

कर्मेन्द्रियों के कार्य मन पर—मादक द्रव्यो से मन की दशा—मन के द्वारा कर्मेन्द्रियों का परिचालन—मस्तिष्क मे बुराई होने से बुद्धि का नाश—मानसिक भावों का प्रभाव मुँह पर किस प्रकार झलकता है—भय और चिन्ता से, शरीर की हानि—दृढ विश्वास और निश्चिन्तता से सुधार—हसना शरीर के लिये अच्छा—शारीरिक उन्नति मानसिक उन्नति पर और मानसिक उन्नति शारीरिक उन्नति पर।

परिश्रम और अध्यवसाय।

परिश्रम की आवश्यकता—शारीरिक और मानसिक उन्नतियों के पाने का प्रधान उपाय—अभावमोचन—सभी सांसारिक कार्यों में आवश्यकता—सक्षिप्त विवरण—सौभाग्य का देने वाला। अध्यवसाय क्या है? परिश्रम और अध्यवसाय—मणिकाञ्चन योग—उन्नति का सर्वोत्तमपथ। उदाहरण (जातिगत)—अगरेज जाति—पृथ्वी में सर्वश्रेष्ठ जाति क्यों? सामान्य व्यापार से अधीश्वर बनना। (व्यक्तिगत)—विद्यासागर—दरिद्र के घर जन्म पा अद्वितीय पडित होना—ब्रूस और मकड़ा—कोलम्बस द्वारा अमेरिका का आविष्कार।

कृषक और व्यापारी।

१. सज्ञा—कृषक किसको कहते हैं? व्यापारी किसको कहते हैं। २. बाह्यपार्थक्य—कृषक का कष्ट, परिश्रम—व्यापारी का अल्प परिश्रम और अधिक उपाय—सुख किस को अधिक। ३. मानसिक अवस्था—कृषक निश्चिन्त—व्यापारी सदा चिन्तित। ४. उपसंहार।

प्रवाद और सूक्तियाँ (Proverbs and Quotations.)

रुपया स्वर्ग और नरक दोनों है।

१ स्वर्ग—सचाई से कमाने और उचित कार्यों में खर्च करने से। २. नरक—असत्मार्गों से कमाना, अनुचित कार्यों में खर्च करना, रुपया पाकर आलसी बन जाना और अभिमान करना। ३ उदाहरण—(१) सद्व्यवहार (२) असद्व्यवहार। ४ उपसंहार—सिद्धान्त।

अब पछताये होत क्या चिड़ियां चुगगईं खेत।

१ अर्थ—आलस्य का फल पाकर गृहस्थ का पछताना, अवसर चूकने से काम नहीं होता। २ समय का सदुपयोग (पीछे 'समय' का लेख देखो)। ३ उपदेश—अपने से लिखो। ४ उपसंहार।

Better be alone than in bad company.

कुसंग में रहने से एकाकी रहना अच्छा।

१ संज्ञा—संसर्ग किसको कहते हैं? २ संसर्ग की आवश्यकता। ३ सुसंग और कुसंग में भेद। ३ कुसंग से अपकार—पाप की राह बड़ी बुरी—उन्नत मन भी अवनत—सज्जन का चोर हो जाना—मनुष्य का पशु हो जाना। उपसंहार—"बरु भलवास नरक कर ताता। दुष्ट संग जनि देहु विधाता।" (पीछे "संगति पर लेख" देखो।)

पापी जीवन सुखप्रद कभी नहीं हो सकता।

A vicious life can never be a happy life.

१. पापाचरण से क्षणिक सुख—परिणाम अशेष दुःख। २ चोर—डाकुओं का जीवन और संकट। ३ झूठे व्यवसायों का परिणाम। ४ विश्वासघाती का परिणाम। ५ मद्य पीनेवाले का परिणाम। ६ उपसंहार—पापी को किसी प्रकार सुख नहीं।

Make hay while the sun shines.

१ अर्थ—जब तक धूप है, घास सुखालो। २ इंगलैंड की कहावत, क्योंकि वहाँ गर्मी की ऋतु प्रायः नहीं ही के बराबर होती है और बूँदाबूँदी का डर सदा रहता है। ३ भाव—अवसर को हाथ से न जाने दो—मन पछितैहैं अवसर बीते—काल करो सो आज कर, आज करो सो अब। पल में परलय होयगो, बहुरी करोगे कब। शेष बातों के लिये पीछे "समय" का लेख देखो।

Health is wealth. (एक तन्दुरुस्ती हजार न्यामत)।

१. रोगी की अवस्था। २ रोगी और नीरोग मनुष्यों में भेद। ३ रोगी के लिये संसार व्यर्थ। ४ रोगी राजा से नीरोग दरिद्र सुखी। (पीछे 'स्वास्थ्य' पर लेख देखो।)

परीक्षापत्र (Examination Papers.)

वर्नेक्यूलर स्कूल लीविंग परीक्षा।

१९१८—सावित्री।

१९१९—वर्तमान दुर्भिक्ष।

१९२०—(क) मित्रता जग में सुख का मूल है। (ख) वर्षा ऋतु।

मिड्ल और गुरुट्रेनिंग परीक्षा।

१९१५—आलस्य।

१९१६—समय, बाल्यावस्था, राजभक्ति।

१९१९—स्वास्थ्य, सच्चरित्रता, उद्योग।

१९२०—स्वास्थ्य, पराधीनता।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षाएँ।

प्रथमा परीक्षा।

१९७१—

(क) रामायण में आचार या व्यावहारिक नीति। (ख) मित०-ययिता वा किफायत। (ग) हिन्दुओं के तेवहार। (घ) प्रात काल की शोभा।

१९७२—

१. किमी पुष्पवाटिका की सध्या समय की शोभा का वर्णन। २ तुलसी दास की रामायण का भारतवासियो के सामाजिक जीवन पर प्रभाव। ३ जो सब को प्रसन्न करना चाहता है वह किसी को भी प्रसन्न नही कर सकता।

१९७३—

१. किमी ग्राम के दृश्य का ऐसा वर्णन जिसमे जीवों के भिन्न भिन्न व्यापार भी आ जांय। २. सुशीलता किसे कहते हैं और उससे व्यवहार में किस प्रकार सुगमता होती है। ३ शिक्षितों और अशिक्षितो के जीवन मे अतर।

१९७४—

१. भारतवर्ष में धन का दुरुपयोग। २ किसी बन की शोभा। ३. हिन्दू या

मुसलमान कुटुम्ब में स्त्रियों की वर्तमान अवस्था और उसके कारण। ४. सदाचार क्या है और मनुष्य को सदाचारी होने की क्या आवश्यकता है ?

मध्यमा परीक्षा।

१९७२—

१. मनुष्य ईश्वर की सृष्टि का मुकुट है। २. प्राचीन काल के राजदर्बारों मे कवियो की उपयोगिता और आवश्यकता। ३ किसी प्राचीन नगर का वर्णन जहाँ पुराने खडहर अधिक हों, उस स्थान के सम्बन्ध में लेखक के विचार।

१९७३—

(१) श्री गोसाईं तुलसी दासजी का जीवनचरित और उनकी कवित्व शक्ति। (२) हिन्दी में उपन्यास और उनके गुण दोष। (३) यूरोपीय महायुद्ध। (४) मुगल साम्राज्य की उन्नति और विनाश के कारण। (५) हिन्दी भाषा की उन्नति के उपाय।

१९७४—

१ हिन्दुओं के प्रधान त्यौहार और उनके मनाने की विधि। २. राष्टभाषा की आवश्यकता और उसके लिये हिन्दी की उपयुक्तता। ३. श्रीरामचरितमानस धर्म-नीति-शिक्षा का भण्डार है।

ट्रेनिङ्ग (नार्मल) की परीक्षाएँ।

फर्स्ट डिपार्टमेंटल—

१९११—हरिहरक्षेत्र का मेला।

१९१३—दुर्भिक्ष।

१९१४—समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता।

१९२०—भारत मे वर्तमान दुर्भिक्ष, भारत मे वैवाहिक लेनदेन की कुप्रथा पटने मे हाईकोर्ट।

सेकंड डिपार्टमेंटल।

१९१३—जाड़े के दिनो में दीनों की दशा।

१९१४—बूंद बूंद तालाब भरता है।

१९२०—सात पाच मिल कीजे काज।
हारे जीते नाहीं लाज॥" (२) समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता।

HIGH SCHOOL EXAMINATIONS.

Buxar H E School.

(*a*) Value of time (समय का मोल), (*b*) Perseverance (अध्यवसाय (*c*) Devotion to duty (कर्त्तव्यपरायणता)

Chapra Collegiate School

Penny wise, Pound foolish (जौ की फिकिर सौ की नहीं) ।

Darbhanga Raj H E School

(*a*) Perseverance (अध्यवसाय), (*b*) Pennywise Pound Foolish (जौ की फिकिर सौ की नहीं) (*c*) Look before you leap (कूदने के पहले देख लो) ।

Chapra zill School.

(*a*) The rich & the Poor (धनी और गरीब) (*b*) Home (घर)

Shirres Institution, Madhipura.

(*a*) Industry (उद्योग), (*b*) The right employment of time (समय का सदुपयोग), (*C*) Akbar (अकबर).

CALCUTTA UNIVERSITY.

Matriculation Examination

1916—(*a*) Study of Science (विज्ञानका अध्ययन), (*b*) Kindness to animals (जीवों पर दया), (*c*) Hindu marriage (हिन्दू विवाह).

1913. (*a*) Travelling (यात्रा), (*b*) Knowledge is Power (विद्या ही बल है), (*c*) Newspapers (समाचार पत्र)

Intermediate Examination.

1913—(*a*) Self-Education (आत्मशिक्षा) (*b*) Friendship (मित्रता) Choice of Profession (धंधे का चुनाव) ।

1916—Early-Marriage (बालविवाह), The character of Lakshman (लक्ष्मण का चरित्र तुलसीदास की रामायण के अनुसार), The rainy season in India (भारत में वर्षाऋतु) ।

B. A. Examination

1913—(*a*) The Character of Chanakya & Rakshasa (चाणक्य और राक्षस के चरित्र, पठित ग्रन्थ से), (*b*) Slow and steady wins the race (धीरज और निश्चयता से जीत होती है), (*c*) The caste system of the Hindus (हिन्दुओं के जातिविभाग), (*d*) Tulsidas (तुलसीदास)।

1916—(*a*) Co-operative credit societies and the local money-lenders (लेनदेन की सहयोग समितियाँ और महाजन) (*b*) The Hindi Language is sufficiently advanced to be made the subject of Examination for University degree (हिन्दी भाषा विश्वविद्यालय की परीक्षाओं के लिये सभी भांति से उपयुक्त है) (*c*) Money was once said to be the source of all evils, but life is now no longer held worth living without it (रुपया सब बुराइयों की जड़ समझा जाता था, परन्तु अब विना इसके जीवन का मोल ही नहीं)

PATNA UNIVERSITY.

Matriculation Examination

1914—Flood (बाढ़), Railway (रेलगाड़ी), Truthfulness (सत्यवादिता)।

192[illegible]—Physical Exercise (व्यायाम), Kindness to animals (जीवों पर दया), Famine in India (भारत में अकाल)

I. A & I. Sc. Examination.

1919—(*a*) Time is money (समय ही रुपया है), (*b*) Peace and War (शान्ति और युद्ध), (*c*) Service to humanity is service to God (संसार की सेवा ईश्वर को सेवा है), (*d*) The advantages and disadvantages of a purely agricultural country (कृषिप्रधान देश की सुविधा और असुविधा).

1920—Health is wealth (स्वास्थ्य ही धन है), Honesty is the best Policy (सचाई की ही नीति उत्तम है), Town and country life (ग्रामवास और नगरवास), Pleasures of study (अध्ययन के आनन्द.)

B. A & B Sc. Examination.

1918—*a* Sanitation and the wellbeing of India (भारत की स्वास्थ्यरक्षा और आनन्द), *b* Loyalty (राजभक्ति), *c* History of a country is but the Biography of its great men (देश का इतिहास केवल उसके बड़े लोगों की जीवनी है।)

1920—(*a*) Knowledge is proud that he knows so much, Wisdom is humble that he knows no more (विद्या और विवेक).

(*b*) The ideals of Education in the present day world (वर्तमान ससार मे शिक्षा के आदर्श)।

(*c*) The place of the Indian Vernaculars in the scheme of University Education in India (विश्वविद्यालय की शिक्षा में भारतीय भाषाओं का स्थान)।